मुकम्मल व मुदल्लल

मसाइले ज़कात

कुरआन व हदीस की रौशनी में

हज़रत मुफ़्तियाने किराम दारूलउलूम देवबंद की तस्दीक़ व ताईद करदा

मुअल्लिफ़

मौलाना क़ारी मुहम्मद रफ़अत क़ासमी

(मुदर्रिस दारूलउलूम देवबंद)

मुकम्मल व मुदल्लल

मसाइले ज़कात

कुरआन व हदीस की रौशनी में

हज़रत मुफ़्तियाने किराम दारुलउलूम देवबंद की तस्दीक़ के साथ

मुअल्लिफ़

मौलाना कारी मुहम्मद रफ़अ़त कासमी
(मुदर्रिस दारुलउलूम देवबंद)

लिप्यान्तरः
मो० मोकर्रम जहीर

नाशिर

अन्जुम बुक डिपो
466, मटिया महल, जामा मस्जिद (दिल्ली)

किताब का नामः... मुकम्मल व मुदल्लल मसाइले ज़कात
मुसन्निफ़ः.......... मौलाना क़ारी मुहम्मद रफ़अ़त क़ासमी
लिप्यान्तरः......... मो० मोकर्रम ज़हीर
ज़ेरे निगरानीः...... शकील अन्जुम देहलवी
तादादः........... 1100

Masaile Zakat

By:Maulana Qari Md. Rafat Qasmi

Published by
Anjum Book Depot
466, Matia Mahal, Jama Masjid, Delhi - 6

फ़ेहरिस्ते उन्वानात मसाइले ज़कात

उन्वान — सफ़्हात

इन्तिसाब

राहे खुदा में अपने घर का तमाम अस्बाब पेश करने वाले यारे ग़ार ख़लीफ़ए औवल सैयदना हज़रत अबूबक्र सिद्दीक़ (रज़ि.) की उस शमशीरे बेनियाम के नाम जिसकी चमक ने सरकारे दो आलम, महबूबे इलाही (स.अ.व.) के विसाल के फ़ौरन बाद मानेईने ज़कात की आँखों को ख़ीरह कर दिया और उनकी गर्दनें अहकामे खुदावंदी और इताअ़ते रसूल (स.अ.व.) के आगे झुकने पर मजबूर हो गईं।

मुहम्मद रफ़अ़त क़ासमी गुफ़िरलहू

मुदर्रिस दारुलउलूम देवबंद (इंडिया)

1413 हिजरी मुताबिक़ 1992 ई०

❖❖❖

अर्ज़े मुअल्लिफ़

نَحْمَدُهٗ وَنُصَلِّی عَلٰی رَسُوْلِهِ الْكَرِیْم

अहक़र का दिल हम्दो शुक्र से लबरेज़ है कि जिस दीनी ख़िदमत का आग़ाज़ किया गया था वह बतदरीज अंजाम पा रही है और मिल्लते इस्लामिया उससे बराबर मुस्तफ़ीज़ हो रही है और मक़बूलियत में दिन बदिन इज़ाफ़ा हो रहा है।

"الحمد لله على ذلک"

और ये भी हक़ीक़त है कि जो कुछ भी काम हो रहा है सब रब्बुलइज़्ज़त की तौफ़ीक़ और असातिज़ा व मुफ़्तियाने किराम दारुलउलूम देवबंद दामत बरकातुहुम की तवज्जोह का समरा है। इस बेबज़ाअ़त को इस हक़ीक़त का इक़रार व एतेराफ़ करने में कोई तअम्मुल व हिजाब नहीं कि दरियाए इल्म का जो क़तरा इस तिही माया के हिस्से में आया है वह किसी तश्ना लब को तो क्या सैराब करता ख़ुद उसकी तश्नगी दूर करने के लिए भी काफ़ी नहीं, लेकिन बुख़ारी शरीफ़ की हदीस- "بَلِّغُوْا عَنِّیْ وَلَوْ اٰیَة" के तहत ये नवीं किताब "मुकम्मल व मुदल्लल मसाइले ज़कात" (तक़रीबन नौ सो मसाइल का मजमूआ) हदयए नाज़िरीन है जिसमें ज़कात के मसाइल, ज़कात किन किन अमवाल और किन किन लोगों पर वाजिब है।

नीज़ शेयर, फ़िक्स्ड डिपाज़िट, सेविंग सर्टीफ़िकेट, इंश्योरेंस, फ़ंड, बैंक में जमा शुदा रुकूमात, तिजारती अमवाल व मवेशी, जाएदाद व ज़रई पैदावार व मादनीयात वग़ैरा के अहकामात और ज़कात वसूल कुनिन्दा के लिए शरई उसूल व अहकाम और उसका मसरफ़ काबिले ज़िक्र हैं।

अहकर की इस्तिदआ है कि इस किताब से फ़ाएदा हासिल करने वाले हज़रात मुझ को दुआ में याद रखें और ख़ास तौर से मेरे शैख़ व मुरब्बी सैयदी फ़कीहुल उम्मत हज़रत मौलाना मुफ़्ती महमूद हसन साहब मद्दाज़िल्लहुल आली मुफ़्तिये आज़म दारुलउलूम देवबंद की सेहत के लिए भी दुआ फ़रमाएँ कि अल्लाह तआला उनको कूवत व सेहते कुल्ली अता फ़रमाए और ता देर सेहत व आफ़ियत के साथ हम ख़ुर्दों पर मौसूफ़ का सायए आतिफ़त काइम रखे। आमीन या रब्बल आलमीन!

तालिबे दुआ:
मुहम्मद रफ़अत कासमी
मुदर्रिस दारुलउलूम देवबंद यू० पी० (इंडिया)
13 ज़िलहिज्जा 1412 हिजरी मुताबिक 15 जूलाई 1992 ई०

□□□

तस्दीक़

जामेअ़े शरीअ़त व तरीक़त फ़क़ीहुलउम्मत सैयदी हज़रत मौलाना मुफ़्ती महमूद हसन साहब दामत बरकातुहु चिश्ती, क़ादिरी, सुहरवर्दी, नक़्शबंदी मुफ़्तिये आज़म दारुलउलूम देवबंद।

نَحْمَدُهٗ وَنُصَلِّي عَلٰى رَسُوْلِهِ الْكَرِيْمِ

ज़ेरे नज़र किताब "मसाइले ज़कात" इस्म-बा-मुसम्मा है। अज़ीज़ मोह्तरम क़ारी मुहम्मद रफ़अ़त साहब ने बहुत मेहनत से बहुत सी किताबों से ततब्बो कर के मसाइले ज़कात को जमा किया है, और कोशिश ये की है कि इख़्तिलाफ़ी मसाइल में क़ौले राजेह व मुफ़्ताबिही को इख़्तियार करें, अल्लाह तआ़ला जज़ाए ख़ैर दे और उनकी मेहनत को क़बूल फ़रमाए, मख़्लूक़ को नफ़ा दे। अमीन!

इससे क़ब्ल भी मुअल्लिफ़ ज़ीदा मुजदुहम ने मुतअद्दद किताबें तालीफ़ फ़रमाई हैं और मख़्लूक़ को उनसे नफ़ा पहुंचा है, दुआ है कि अल्लाह करे ज़ोरे क़लम और ज़्यादा।

अलअ़ब्द

महमूद उफ़िया अन्हु

छत्ता मस्जिद दारूल उलूम देवबंद

6 शौवालुलमुकर्रम 1413 हिजरी

❑❑❑

इरशादे गिरामी

हज़रत मौलाना मुफ़्ती निज़ामुद्दीन साहब दामत बरकातुहु
सदर मुफ़्ती दारुलउलूम देवबंद।

باسمہ سبحانہ

نَحْمَدُهٗ وَنُصَلِّی عَلٰی رَسُوْلِهِ الْكَرِيْمِ۔ امّا بعد

मजमूआ "मसाइले ज़कात" मुरत्तबा जनाब मौलाना क़ारी रफ़अ़त क़ासमी साहब सल्लमहू, मुदर्रिस दारुलउलूम देवबंद नज़र नवाज़ हुआ। अल्लाह तआ़ला ने मौसूफ़ को मुदल्लल व राजेह मसाइल के इस्तिक़सा व इंतिख़ाब में बेनज़ीर मलका अता फ़रमाया है। चुनांचे मौसूफ़ की इस शान की ये नवीं कोशिश है। इसके क़ब्ल की शाए शुदा कोशिशें अवाम व ख़्वास सब के नज़दीक मक़बूल हो चुकी हैं और ख़िराजे तहसीन हासिल कर चुकी हैं।

मिस्ले साबिक़ ये पेशे नज़र तालीफ़ (मसाइले ज़कात) भी है और ज़कात के सैंकड़ों जुज़ईयात पर मुश्तमल है, ख़ुसूसन ज़मानए हाज़िर के पेचीदा पैदा शुदा नए मसाइल का बेहतरीन मजमूआ है ये भी बड़ी मेहनत व मुशक़्क़त का नतीजा है और बहुत ज़्यादा काविश और अर्क़-रेज़ी का पता देता है, हर मस्अला के अख़ीर में मुस्तनद व मक़बूल फ़तावा के हवालों से भी मुज़य्यन है जिससे इसकी नाफ़ेईयत और

ज़्यादा है।

दुआ है अल्लाह तआला कबूल फ़रमाऐं और मुरत्तिब के दरजात दुनिया व उक़बा में बलंद फ़रमाऐं और इसी तरह की मज़ीद कोशिशें करने की तौफ़ीक़ अता फ़रमाऐं। आमीन!

"كتبه العبد المسكين المد عو بمحمد نظام الدين الاعظمى
غفر الله له و لسائر مشائخه واساتذته واحبابه اجمعين"

(7—10—1413 हिजरी मुताबिक़ 30—3—1993 ई0)

राए गिरामी

हज़रत मौलाना मुफ़्ती मुहम्मद ज़फ़ीरुद्दीन साहब ज़ीदा मजदुहुम मुफ़्तिये दारुलउलूम (देवबंद)

الحمد لله وكفى وسلامٌ على عباده الذين اصطفى

आज की दुनिया सहूलत पसंद हो गई है, और साथ ही उनमें उजलत भी आ गई है, अलहमदुल्लिाह उलमाए इस्लाम की हालाते हाज़िरा पर गहरी नज़र है और मौजूदा हालात के मुताबिक् मुसलमानों को सहूलत पहुंचाने की जद्दोजेहद में मसरूफ़ हैं, ताकि आसानी के साथ वह दीनी अहकाम व मसाइल से बाआसानी इस्तिफ़ादा कर सकें और उन्हें कुछ ज़्यादा कद्दोकाविश की ज़रूरत न पड़े। इस सिलसिला में हमारे यहां मौलाना कारी मुहम्मद रफ़अ़त साहब उस्ताज़े दारुलउलूम बहुत ज़्यादा मुस्तइद पाए गए, और वह कई साल से हर उनवान पर मसाइल जमा कर के शाए कर रहे हैं, उनकी मेहनत और जद्दोजेहद हम सब के लिए बाइसे रश्क है, अल्लाह तआ़ला उनकी हिम्मत की बुलंदी और तरतीब व तज़यीन और जमा की मशक़्क़त क़ाइम रखे, उनकी मुतअद्दद किताबें शाए हो कर मक़बूल हो चुकी हैं। इस वक़्त "मसाइले ज़कात मुदल्लल व मुकम्मल" मेरे सामने है, फ़तावा की चौवालीस मुस्तनद किताबों से उन्होंने ज़कात के मसाइल को यकजा किया है,

उनमें तरतीब क़ाइम की और जहां से जो मस्अला मिला, उसके हवालों के साथ जमा किया और बड़ी जांफ़शानी से काम लिया, मौलाना मौसूफ़ की ये जफ़ाकशी लाइक़े सद मुबारक बाद है और उर्दू दां तब्क़ा पर उनका ये बड़ा एहसान है कि ज़कात से मुतअल्लिक़ जितनी चीज़ें कुरआन व हदीस और फ़िक़्ह की किताबों में बिखरी हुई थीं सब को यकजा कर दिया ताकि इस किताब को पढ़ कर आदमी और बहुत सारी किताबों से बे-नियाज़ हो जाए और ज़ेहने इंसानी में जिस क़दर मसाइल की सूरतें आ सकती हैं वह सब सवाल व जवाब की शक्ल में इस मजमूआ में फ़राहम हो गई हैं।

दुआ है कि रब्बुलआलमीन मुअल्लिफ़ मौसूफ़ की इस गिरां ख़िदमत को क़बूल फ़रमाए और मुसलमानों को ज़्यादा से ज़्यादा फ़ाएदा पहुंचाए। आमीन!

मुहम्मद ज़फ़ीरुद्दीन ग़ुफ़िरलहू
मुफ़्तिये दारुलउलूम देवबंद
25 रमज़ानुलमुबारक 1413 हिजरी
(यौमे शंबा)

❑❑❑

بسم اللہ الرحمن الرحیم

"وَالَّذِيْنَ يَكْنِزُوْنَ الذَّهَبَ وَالْفِضَّةَ وَلَا يُنْفِقُوْنَهَا فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ فَبَشِّرْهُمْ بِعَذَابٍ اَلِيْمٍ. يَّوْمَ يُحْمٰى عَلَيْهَا فِيْ نَارِ جَهَنَّمَ فَتُكْوٰى بِهَا جِبَاهُهُمْ وَجُنُوْبُهُمْ وَظُهُوْرُهُمْ هٰذَا مَا كَنَزْتُمْ لِاَنْفُسِكُمْ فَذُوْقُوْا مَا كُنْتُمْ تَكْنِزُوْنَ"

"और जो लोग सोना चांदी जमा कर कर रखते हैं और उनको अल्लाह की राह में ख़र्च नहीं करते सो आप उनको एक बड़ी दर्दनाक सज़ा की ख़बर सुना दीजिए जो कि उस रोज़ वाक़ेअ होगी कि उनको दोज़ख़ की आग में तपाया जाएगा, फिर उनसे लोगों की पेशानियों और उनकी करवटों और उनकी पुश्तों को दाग़ दिया जाएगा। ये वह है जिसको तुम ने अपने वासते जमा कर कर के रखा था, सो अब अपने जमा करने का मज़ा चखो।"

खुलासए तफ़सीर

यानी जो लोग सोने चांदी को जमा करते रहते हैं और उसको अल्लाह की राह में ख़र्च नहीं करते, उनको अज़ाबे दर्दनाक की खुश ख़बरी सुना दीजिए।

"وَلَا يُنْفِقُوْنَهَا" के लफ़्ज़ों से इस तरफ़ इशारा हो गया कि जो लोग बक़द्रे ज़रूरत अल्लाह की राह में ख़र्च करते हैं तो बाक़ी मांदा जमा किया हुआ माल उनके हक़

में मुज़्र नहीं। हदीस में ख़ुद रसूले करीम (स.अ.व.) ने इरशाद फ़रमाया कि जिस माल की ज़कात अदा कर दी जाए वह "كَنَزْتُم" में दाख़िल नहीं। (अबूदाऊद, अहमद वग़ैरा)

जिससे मालूम हुआ कि ज़कात निकालने के बाद जो माल बाक़ी रहे उसका जमा रखना कोई गुनाह नहीं, जमहूर फ़ुक़हा व अइम्मा का यही मसलक है। आयत में इस अज़ाबे अलीम की तफ़सील इस तरह ब्यान फ़रमाई है– "يَوْمَ يُحْمَىٰ عَلَيْهَا فِىْ نَارِ جَهَنَّمَ فَتُكْوىٰ بِهَا جِبَاهُهُمْ وَجُنُوبُهُمْ وَظُهُورُهُمْ ط هٰذَا مَا كَنَزْتُمْ لِأَنْفُسِكُمْ فَذُوقُوا مَا كُنْتُمْ تَكْنِزُونَ ط" यानी ज़कात न अदा करने वालों को ये अज़ाबे अलीम उस दिन होगा जब कि उनके जमा किए हुए सोने चांदी को जहन्नम की आग में तपाया जाएगा, फिर उससे उनकी पेशानियों, पहलुओं और पुश्तों पर दाग़ दिए जाएंगे, और उनसे ज़बानी सज़ा के तौर पर कहा जाएगा कि ये वह चीज़ है जिसको तुम ने अपने लिए जमा किया था, सो अपने जमा किए हुए सरमाया को चखो, इससे मालूम हुआ कि जज़ाए अमल ऐन अमल है जो सरमाया नाजाइज़ तौर पर जमा किया था, या अस्ल सरमाया तो जाइज़ था मगर उसकी ज़कात अदा नहीं की तो ख़ुद वह सरमाया ही उन लोगों का अज़ाब बन गया।

इस आयत में दाग़ लगाने के लिए पेशानियों, पहलुओं, पुश्तों का ज़िक्र किया गया है या तो इससे मुराद पूरा बदन है और या फिर उन तीन चीज़ों की तख़सीस इस बिना पर है कि बख़ील आदमी जो अपना सरमाया अल्लाह की राह में ख़र्च करना नहीं चाहता, जब कोई साएल या ज़कात का तलबगार उसके सामने आता है तो उसको

देख कर सब से पहले उसकी पेशानी पर बल आते हैं, फिर उससे नज़र बचाने के लिए ये दाहने बायें मुड़ना चाहता है और उससे भी साएल न छोड़े तो उसकी तरफ़ पुश्त कर लेता है, इसलिए पेशानी, पहलू, पुश्त इस अज़ाब के लिए मख़सूस किए गए।

(मआरिफुलकुरआन जिल्द–4 सफ़्हा–363)

ज़कात की वजहे तस्मिया

ज़कात के लुग्वी माना हैं "तहारत व बरकत और बढ़ना" इस्तिलाहे शरीअ़त में ज़कात कहते हैं अपने माल की मिक्दारे मुअय्यन के उस हिस्सा को जो शरीअ़त ने मुक़र्रर किया है किसी मुस्तहिक़ को मालिक बना देना। ज़कात के लुग्वी व इस्तिलाही माना दोनों को सामने रख कर ये समझ लीजिए कि ये फ़ेल (कि अपने माल की मिक्दार मुअय्यन के एक हिस्सा का किसी मुस्तहिक़ को मालिक बना देना) माल के बाक़ी मांदा हिस्से को पाक कर देता है, इसमें हक़ तआ़ला की तरफ़ से बरकत इनायत फ़रमाई जाती है और उसका वह माल न सिर्फ़ ये कि दुनिया में बढ़ता और ज़्यादा होता है बल्कि उख़रवी तौर पर अल्लाह तआ़ला उसके सवाब में इज़ाफ़ा करता है और उसके मालिक को गुनाहों से और दीगर बुरी ख़सलतों मसलन बुख़्ल वग़ैरा से पाक वा साफ़ कर देता है, इसलिए इस फ़ेल को ज़कात कहा जाता है।

"ज़कात" को सदक़ा भी इसलिए कहा जाता है कि ये फ़ेल अपने माल का एक हिस्सा निकालने वाले के ईमानी दावा की सेहत और सदाक़त पर दलील होता है।

(मज़ाहिरे हक़ जदीद जिल्द–2 सफ़्हा–483 व

किताबुलफ़िक्ह बाबुज़्ज़कात जिल्द–1 सफ़्हा–958)

ज़कात की तारीफ़ व तफ़सीर

अपने माल की एक ख़ास मिक़्दार को किसी ऐसे नादार मुसलमान को मालिक बना देना जो न हाशमी ख़ानदान से हो, न उस शख़्स का (शरई नुक़्तए नज़र से) गुलाम हो और उस अतीया के पीछे न उस शख़्स की कोई दुनयावी मन्फ़अत और किसी एवज़ का लालच भी न हो, बल्कि महज़ ख़ुदा की रज़ा पेशे नज़र हो, शरीअ़त में लफ़्ज़ ज़कात का यही मतलब समझा जाता है। (आलमगीरी जिल्द–4 सफ़्हा–3 बहवाला तब्यीनुल हक़ाइक़)

मस्अला: मुसलमान मुस्तहिक़ को ज़कात के माल का इस तरह मालिक बना देना है कि ज़कात देने वाले की हर तरह की मन्फ़अ़त उस माल से मुनक़ता हो जाए। लिहाज़ा ज़कात अदा करने वाला अपनी ज़कात न अपने अस्ल यानी माँ बाप, दादा दादी, नाना नानी को देगा और न अपनी फ़ुरूअ़ यानी बेटा बेटी, पोता पोती और नवासा नवासी को देगा, इसलिए कि उनके देने में फ़िल जुमला उसकी मन्फ़अ़त है यानी ज़कात का फ़ाएदा उसको पहुंच रहा है। (दुर्रेमुख़्तार जिल्द–2 सफ़्हा–6)

ज़कात और उसका सुबूत

मस्अला: ज़कात इस्लाम के पाँच अरकान में से एक रुक्न है और हर उस शख़्स पर फ़र्ज़े ऐन है जो शराइत (आइंदा जो ब्यान होंगी) पूरा करता हो।

ज़कात 2 हिजरी में फ़र्ज़ हुई और दीन (इस्लाम) में उसका फ़र्ज़ होना बहरहाल सब को मालूम है। इसकी फ़र्ज़ीयत किताब, सुन्नत और इजमाअ़ से साबित है। कुरआन

करीम में अल्लाह तआला फ़रमाता है– "وَآتُوا الزَّكٰوةَ" यानी ज़कात अदा करो। और हदीस में ज़कात के हुक्म के मुतअद्दद सुबूत मिलते हैं मिनजुमला उनके आँहज़रत (स.अ.व.) का इरशाद है कि इस्लाम की बुनियाद पाँच उमूर पर है। आप (स.अ.व.) ने उन पाँच उमूर में ज़कात देने का ज़िक्र फ़रमाया है और मिनजुमला इनके वह हदीस भी है जो तिरमिज़ी (रह.) ने सलीम बिन आमिर से रिवायत की है वह कहते हैं कि–

"अबूउमाम (रज़ि.) से मैंने सुना वह कहते हैं कि मैंने रसूलुल्लाह (स.अ.व.) की हज्जतुलविदा वाली तक़रीर सुनी है जिसमें हुज़ूर (स.अ.व.) ने फ़रमाया कि अल्लाह से डरो, अपनी पंजगाना नमाज़ें पढ़ा करो और रमज़ान आए तो रोज़ा रखो और अपने माल की ज़कात अदा करो और अपने हाकिम की इताअत करो तो जन्नत में जाओगे।"

इनके अलावा और भी अहादीस इसी मज़मून की है। रहा इजमाअ सो तमाम उम्मत इस अम्र पर मुत्तफ़िक़ है कि ज़कात अरकाने इस्लाम में से एक रुक्न है जिसकी ख़ास शराइत हैं। (किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–659)

मस्अला: दुर्रेमुख़्तार व शामी में है कि ज़कात का हुक्म कुरआन करीम में नमाज़ के साथ 32 जगह आया है और नमाज़ के अलावा जो ज़िक्र आया है वह नहीं लिखा।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–41)

ज़कात के अहकाम का जानना कब फ़र्ज़ है?

मस्अला: आदमी जब तक निसाबे ज़कात यानी साढ़े सात (7.5) तोला सोना, सतासी (87) ग्राम चार सौ उनासी (479) मिली ग्राम या साढ़े बावन (52.5) तोला छः सो

बारह (612) ग्राम पैंतीस (35) मिली ग्राम चांदी या उसकी क़ीमत के बराबर नक़दी, सामने तिजारत वग़ैरा का मालिक न हो, उस वक़्त तक उसको अहकामे अमलीया ज़कात सीखना फ़र्ज़ और ज़रूरी नहीं, गो एतेक़ाद फ़रज़ियत का फ़र्ज़ है और जब माल का मालिक हो उस वक़्त अहकामे अमलीया ज़कात का सीखना फ़र्ज़ और ज़रूरी हो गया। उस वक़्त अहकामे अमलीया की क़ैद इसलिए लगाई कि अक़ीदा के दरजा में तो हर शख़्स को ज़कात की फ़रज़ीयत का इक़रार ज़रूरी है। (इमदादुल फ़तावा मसाइलुज़्ज़कात सफ़्हा—10 बहवाला तासीसुलबयान सफ़्हा—4)

ज़कात कब फ़र्ज़ हुई?

अहादीस और आसार से ये मालूम होता है और फराइज़े ख़मसा की तारीख़े तशरीअ़ से इस अम्र की ताईद होती है कि सब से पहले पंजगाना नमाज़ें शबे मेराज में मुसलमानों पर फ़र्ज़ हुईं, फिर मदीना तैयबा में 2 हिजरी में रोज़े फ़र्ज़ हुए और उसके साथ ही ज़कात, फ़ित्र फ़र्ज़ हुई ताकि रोज़ादार लग़्व और रफ़स से पाक हो जाए और ईद के रोज़ मिस्कीनों की इमदाद हो जाए, बाद अज़ाँ ज़कात मअ़ निसाब और मक़ादीर फ़र्ज़ हुई, लेकिन इस अम्र पर कोई क़तई दलील मौजूद नहीं है कि ज़कात के बारे में ये तहदीदात (Limitation) किस सन में मुक़र्रर हुई।

(फ़िक़्हुज़्ज़कात जिल्द—1 सफ़्हा—101 व फ़तावा दारुलउलूम देवबंद जिल्द—6 सफ़्हा—41)

सदक़ा, ज़कात की फ़रज़ीयत सही ये है कि अवाइले इस्लाम ही में मक्का मुकर्रमा के अन्दर नाज़िल हो चुकी थी, जैसा कि इमाम तफ़सीर इब्ने कसीर (रह.) ने सूरए

मुज़्ज़म्मिल की आयत "فَاَقِيْمُوا الصَّلٰوةَ وَاٰتُوا الزَّكٰوةَ" से इस्तिदलाल फ़रमाया है क्योंकि ये सूरत बिल्कुल इब्तिदाए वह्य के ज़माना की सूरतों में से है, इसमें नमाज़ के साथ ज़कात का भी हुक्म है, अलबत्ता रिवायाते अहादीस से ऐसा मालूम होता है कि इब्तिदाए इस्लाम में ज़कात के लिए कोई ख़ास निसाब या ख़ास मिक्दार मुक़र्रर न थी, बल्कि जो कुछ एक मुसलमान की अपनी ज़रूरतों से बच रहे वह सब अल्लाह की राह में ख़र्च किया जाता था, निसाबों का तअय्यन व मिक्दारे ज़कात का ब्यान हिजरत के बाद मदीना तय्यबा में हुआ है और फिर ज़कात व सदक़ात की वसूलयाबी का निज़ाम मुहकमाना अंदाज़ का फ़त्हे मक्का के बाद अमल में आया है। इस आयत में बइज्माए सहाबा (रज़ि.) व ताबईन (रह.) इसी सदक़ए वाजिबा के मसारिफ़ का ब्यान है जो नमाज़ की तरह मुसलमानों पर फ़र्ज़ है, क्योंकि जो मसारिफ़ इस आयत में मुतअैयन किए गए हैं वह सदक़ाते फ़र्ज़ के मसारिफ़ हैं, नफ़्ली सदक़ात में रिवायात की तस्रीहात की बिना पर बहुत उसअत है वह उन आठ मसारिफ़ में मुनहसिर नहीं हैं।

(मआरिफुलकुरआन जिल्द–4 सफ़्हा–394)

ज़कात का हुक्म पहली शरीअतों में

ज़कात की इस ग़ैर मामूली अहमियत और इफ़ादियत की वजह से उसका हुक्म पहले पैग़म्बरों की शरीअतों में भी नमाज़ के साथ ही साथ बराबर रहा है। सूरए अंबिया में हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम और उनके साहबज़ादे हज़रत इस्हाक़ अलैहिस्सलाम और फिर उनके साहबज़ादे हज़रत याकूब अलैहिस्सलाम का ज़िक्र करते हुए इरशाद

फ़रमाया गया है–

"وَاَوْحَيْنَا اِلَيْهِمْ فِعْلَ الْخَيْرَاتِ وَاِقَامَ الصَّلٰوةِ وَاِيْتَاءَ الزَّكٰوةِ (انبياء)"

और हम ने उनको हुक्म भेजा नेकियों के करने का (ख़ास कर) नमाज़ क़ाइम करने और ज़कात देने का। और सूरए मरयम में हज़रत इस्माईल अलैहिस्सलाम के बारे में फ़रमाया गया है– "وَكَانَ يَأْمُرُ اَهْلَهٗ بِالصَّلٰوةِ وَالزَّكٰوةِ" और अपने घर वालों को नमाज़ और ज़कात का हुक्म देते थे।

कुरआन करीम की इन आयात से ज़ाहिर है कि नमाज़ और ज़कात हमेशा से असमानी शरीअ़तों के ख़ास अरकान और शआइर रहे हैं, हाँ उनके हुदूद और तफ़सीली अहकाम व तअैयुनात में फ़र्क़ रहा है और ये फ़र्क़ तो ख़ुद हमारी शरीअ़त के भी इब्तिदाई और आख़िरी तकमीली दौर में रहा है मसलन ये कि पहले हर फ़र्ज़ नमाज़ सिर्फ़ दो रकअ़त पढ़ी जाती थी, फिर फ़ज्र के अलावा बाक़ी चार वक्तों में रकअ़तें बढ़ गईं।

इसी तरह हिजरत से पहले मक्का के ज़मानए क़याम में ज़कात का हुक्म था। चुनांचे सूरए मोमिन व नमल और सूरए लुक़मान की बिल्कुल इब्तिदाई आयतों में अह्ले ईमान की लाज़मी सिफ़ात के तौर पर इक़ामते सलात यानी नमाज़ क़ाइम करना और ज़कात अदा करने का ज़िक्र मौजूद है जबकि ये तीनों सूरतें मक्की हैं।

(मआ़रिफुलहदीस जिल्द–4 सफ़्हा–23)

मक्की दौर में ज़कात का मतलब

लेकिन मक्की दौर में ज़कात का मतलब सिर्फ़ ये था कि अल्लाह के हाजत मंद बंदों पर और ख़ैर की दूसरी राहों में अपनी कमाई सर्फ़ की जाए।

निज़ामे ज़कात के तफ़सीली अहकाम उस वक़्त नहीं आये थे वह हिजरत के बाद मदीना तय्यबा में आए। पस जिन मुअर्रिख़ीन और मुसन्निफ़ीन ने ये लिखा है कि ज़कात का हुक्म हिजरत के बाद दूसरे साल में या उसके बाद में आया, उनका मतलब ग़ालिबन यही है कि उसकी हुदूद, तअैयुनात और तफ़सीली अहकाम उस वक़्त आए, वरना ज़कात का मुतलक़ हुक्म तो यक़ीनन इस्लाम के इब्तिदाई दौर में हिजरत से काफ़ी पहले आ चुका था। हाँ निज़ामे ज़कात के तफ़सीली मसाइल और हुदूद व तअैयुनात हिजरत के बाद आए और मकरज़ी तौर पर उसकी तहसीले वसूल का निज़ाम तो 8 हिजरी के बाद क़ाइम हुआ।

(मआरिफुल हदीस जिल्द–4 सफ़्हा–24)

क़ानूने इस्लामी की तारीख़ में मशहूर बात यही है कि ज़कात मदीना मनव्वरा में फ़र्ज़ हुई है। इसलिए ये सवाल पैदा होता है कि ये बात मक्की दौर की सूरतों में किस हद तक हम आहंग है? उसका जवाब ये है कि मक्की दौर के कुरआन में जिस ज़कात का ज़िक्र आया है वह बिऐनिही वह ज़कात नहीं है जो मदीना में फर्ज़ हुई है जिसकी मिक्दार मुक़र्रर और हुदूद मुतअैयन हैं और जिसकी वसूली के लिए और उसके मसारिफ़ में ख़र्च करने के लिए कारिंदे भेजे गए और रियासत ने उसका इंतिज़ाम करने की ज़िम्मादारी संभाली।

मक्की दौर में जो ज़कात थी वह मुतलक़ थी और उसमें हुदूद और कुयूद नहीं थीं और उसका मदार अफ़राद के ईमान, उनके शुऊर और उनके एहसासे उख़ूवत पर था और उस वक़्त मोमिनीन के साथ हुस्ने सुलूक में कभी

कम ख़र्च करना पड़ता और कभी ज़्यादा ख़र्च करना पड़ता था। (फ़िक़्हुज़्ज़कात जिल्द–1 सफ़्हा–85 अज़ डॉ० यूसुफ़ अलक़रज़ावी)

मदनी दौर में ज़कात की नौईयत

मक्की दौर में मुसलमानों की दावते इस्लामी इन्फ़िरादी थी और वह उस दावत की बिना पर मुआशरे से कट कर अलग थलग हो गए थे जब कि मुसलमान मदीना मनव्वरा पहुंचे तो एक मुनज़्ज़म इज्तिमाई सूरत में आ गए और मदीना में मुसलमानों की रियासत तशकील पा गई और उनका इक़्तिदार क़ाइम हो गया तो फिर इसलिए इस्लामी ज़िम्मेदारियों ने भी उस नई सूरतेहाल में तअमीम और इतलाक़ की जगह तहदीद और तख़सीस की सूरत इख़्तियार कर ली और जो पहले राहनुमाई करने वाली हिदायात थीं वह अब लाज़मी क़वानीन की सूरत इख़्तियार कर गई और उन क़वानीन के निफ़ाज़ के लिए ईमान व यक़ीन के साथ साथ इक़्तिदार और क़ूवत से काम लेना भी नागुज़ीर हो गया है। चुनांचे मदीना मनव्वरा में आकर ज़कात ने भी यही सूरत इख़्तियार की कि शारेअ़ अलैहिस्सलाम (यानी हुज़ूर स.अ.व.) ने उन अमवाल की तहदीद फ़रमा दी जिनमें ज़कात फ़र्ज़ है, और उसकी फ़रज़ीयत की शराइत और उसकी लाज़मी मिक़्दारों का तअय्युन फ़रमा दिया, उसके मसारिफ़ मुक़र्रर कर दिए और उसकी तंज़ीम और उसके दायरएकार का एक लाएहएअमल मुक़र्रर फ़रमा दिया।

(फ़िक़्हुज़्ज़कात जिल्द–1 सफ़्हा–86)

ज़कात के तीन पहलू

ज़कात में नेकी और इफ़ादियत के तीन पहलू हैं। एक

ये कि मोमिन बंदा जिस तरह नमाज़ के क़याम और रुकूअ़ व सुजूद के ज़रीआ अल्लाह तआ़ला के हुज़ूर में अपनी बंदगी और तज़ल्लुल व नियाज़मंदी का मुज़ाहरा जिस्म व जान और ज़बान से करता है ताकि अल्लाह तआ़ला की रज़ा व रहमत और उसका कुर्ब उसको हासिल हो, उसी तरह ज़कात अदा कर के वह उसकी बारगाह में अपनी माली नज़्र इसी ग़र्ज़ से पेश करता है और इस बात का अमली सुबूत देता है कि उसके पास जो कुछ है वह उसे अपना नहीं बिल्क ख़ुदा का समझता और यक़ीन करता है और उसकी रज़ा और उसका कुर्ब हासिल करने के लिए वह उसको कुर्बान करता और नज़राना चढ़ाता है।

ज़कात का शुमार "इबादात" में इसी पहलू से है। दीन व शरीअ़त की ख़ास इस्तिलाह में "इबादात" बंदे के उन्ही आमाल को कहा जाता है जिनका ख़ास मक़सद व मौज़ूअ़ अल्लाह तआ़ला के हुज़ूर में अपनी अबदीयत और बंदगी के तअल्लुक़ को ज़ाहिर करना और उसके ज़रीआ उसका रहम व करम और उसका कुर्ब ढूंडना हो।

दूसरा पहलू ज़कात में ये है कि उसके ज़रीए अल्लाह तआ़ला के ज़रूरत मंद और परेशान हाल बंदों की ख़िदमत व इआनत होती है। इस पहलू से ज़कात अख़लाक़ियात का निहायत ही अहम बाब है।

तीसरा पहलू इसमें इफ़ादियत का ये है कि हुब्बे माल (माल की मुहब्बत) और दौलत परस्ती जो एक ईमान कुश और निहायत मुहलिक "रूहानी बीमारी" है, ज़कात उसका इलाज और उसके गंदे और ज़हरीले असरात से नफ़्स की ततहीर और तज़किया का ज़रीआ है।

(मआरिफुलहदीस जिल्द–4 सफ़्हा–20)

ज़कात का एक और मक़सद

इस्लाम ये नहीं चाहता कि दौलत किसी एक गिरोह की ठीकेदारी में आ जाए या सूसाइटी में कोई ऐसा तब्क़ा पैदा हो जाए जो दौलत को ख़ज़ाना बना बना कर जमा करे, बल्कि वह चाहता है कि दौलत हमेशा सैर व गरदिश में रहे और ज़्यादा से ज़्यादा तमाम अफ़रादे क़ौम में फैले और मुनक़सिम हो।

यही वजह है कि उसने वुरसा के लिए तक़्सीम व इस्हाम का क़ानून नाफ़िज़ कर दिया और अक़वामे आलम के आम क़वानीन की तरह ये नहीं किया कि ख़ानदान के एक ही फ़र्द के क़ब्ज़ा में रहे। ज्योंहि एक शख़्स की आँखें बंद हुईं उसकी दौलत जो उस वक़्त तक तन्हा एक जगह में थी, अब वारिसों में बट कर कई जगहों में फैल जाएगी और फिर उनमें से हर वारिस के वारिस होंगे और उसे बाँटते और फैलाते रहेंगे।

(हक़ीक़तुज़्ज़कात सफ़्हा–20)

मुन्किरे ज़कात का हुक्म

ज़कात की अहमियत के पेशे नज़र फ़ुक़्हाए किराम (रह.) ने फ़रमाया है कि ज़कात और उसकी फ़रज़ीयत का इन्कार करने वाला काफ़िर है और इस्लाम से बिल्कुल ख़ारिज है।

इस सिलसिले में इमाम नववी (रह.) फ़रमाते हैं कि अगर कोई ऐसा शख़्स जो हाल ही में इस्लाम लाया हो या इस्लामी माहौल से दूर कहीं जंगल में पला बढ़ा हो और वह ज़कात की फ़रज़ीयत से इन्कार कर के उसे

अदा न करे तो उसको औवलन फ़रज़ीयते ज़कात की वजूह और उसकी अहमियत बताई जाएगी, अगर वह उसके बावजूद बदस्तूर अपने इन्कार पर क़ाइम रहे तो उसके कुफ्र का हुक्म लगाया जाएगा। लेकिन अगर कोई शख़्स मुस्लिम मुआशरे में रहता हो और उसे ज़कात की फ़रज़ीयत का इल्म हो और उसके बावजूद वह इन्कार करे तो वह काफ़िर हो जाएगा और उस पर मुरतद के अहकाम जारी होंगे। यानी पहले उसे तौबा के लिए कहा जाएगा और तौबा न करने पर उसे क़त्ल कर दिया जाएगा, क्योंकि ज़कात की फ़रज़ीयत का इल्म लाज़मी है और इस इल्म के बावजूद उसका इन्कार अल्लाह और उसके रसूल (स.अ.व.) की तकज़ीब है।

(अलमजमूअ़ जिल्द–5 सफ़्हा–334)

ग़रज़ कि मुन्किरीने ज़कात के बारे में वाज़ेह शरई हुक्म मौजूद है और जिस पर इजमाअ़ भी है।

(फ़िक़्हुज़्ज़कात जिल्द–1 सफ़्हा–120 व किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–959)

मानेईने ज़कात से जंग

इस्लाम ने सिर्फ़ इस अम्र पर इक्तिफ़ा नहीं किया कि ज़कात नादिहिन्दगान से माली तआउन ले लिया जाए या उन्हें ताज़ीरी सजाऐं दे दी जाऐं बल्कि अगर साहबे कूवत गिरोह सरकशी इख़्तियार कर के अदाए ज़कात से इन्कार कर दे तो इस्लाम ने उन से जंग करने का हुक्म भी दिया है और इस फ़र्ज़ की अदाएगी की ख़ातिर जान से मार डालने (क़त्ले नफ़्स) और ख़ून बहाने से भी दरेग़ नहीं किया है, हालांकि इस्लमा तो आया ही इसीलिए है

कि इंसानों को जानी तहफ़्फ़ुज़ फ़राहम करे, इसलिए कि जो ख़ून हक़ की ख़ातिर बहे वह राएगां नहीं जाता, बल्कि अल्लाह तआला के रास्ता में क़त्ल होने वाला उसकी ज़मीन में अद्ल क़ाइम करने की ख़ातिर मर जाने वाला कभी नहीं मरता और जो जानें अल्लाह और रसूल (स.अ.व.) की नाफ़रमानी की बिना पर और उसका हक़ अदा न करने और उससे किए हुए अहद की पासदारी न करने की बिना पर तलफ़ होंगी वह भी इस वजह से होंगी कि उन्होंने अपने तर्ज़े अमल और अपनी बुरी रविश से ख़ुद ही तहफ़्फ़ुज़ को पामाल कर दिया, जो इस्लाम ने उनको अता किया था।

(फ़िक़्हुज़्ज़कात जिल्द–1 सफ़्हा–111)

सरकशी और बग़ावत के तौर पर ज़कात से इन्कार करने वालों से (क़िताल) जंग अहादीसे सहीहा से और इजमाए सहाबा (रज़ि.) से साबित है।

रसूलुल्लाह (स.अ.व.) की वफ़ात के बाद ज़कात न देने पर इसरार करने वाले अरबों के साथ हज़रत अबूबक्र सिद्दीक़ (रज़ि.) ने ये मौक़फ़ इख़्तियार किया और बड़े बड़े सहाबए किराम (रज़ि.) ने इस मौक़फ़ की ताईद की और आप (रज़ि.) के साथ मानेईने ज़काृत से जंग में शरीक हुए, यहां तक कि इस जंग में उन सहाबए किराम (रज़ि.) ने भी शिरकत फ़रमाई जो इब्तिदाअन जंग के बारे में हज़रत अबूबक्र सिद्दीक़ (रज़ि.) की राए से पूरी तरह मुत्तफ़िक़ नहीं थे (और इस तरह इस्लामी शरीअत में मानेईने ज़कात से जंग करना एक इजतिमाई सूरत इख़्तियार कर गया। क्योंकि) जंग के मौक़फ़ की ताईद में हज़रत अकूबक्र

सिद्दीक़ (रज़ि.) ने दलाइल दिए यहां तक कि तमाम साहाबए किराम (रज़ि.) ने आप (रज़ि.) की राए से इत्तिफ़ाक़ कर लिया और इस तरह उनके मौक़्फ़ पर तमाम सहाबा (रज़ि.) का इजमाअ़ हो गया।

(अलमजमूअ़ जिल्द–5 सफ़्हा–334)

हज़रत अबूबक्र (रज़ि.) ने मानेईने ज़कात से जंग क्यों की?

हज़रत अबूबक्र सिद्दीक़ (रज़ि.) का मानेईने ज़कात से जंग करना ग़ालिबन इस लिहाज़ से बहुत ज़्यादा अहमियत रखता है कि इंसानी तारीख़ में ये पहला मौक़ा था कि कोई हुकूमत व रियासत मुआ़शरे के मकज़ोर अफ़राद और फ़ुक़रा और मसाकीन के हुक़ूक़ उन्हें दिलाने के लिए आमादए जंग हो गई, जबकि तारीख़ में हमेशा यही होता रहा है कि समाज के ताक़तवर तब्क़े कमज़ोर तब्क़ों को खाते रहे और हुक्काम और उमरा ने कभी ग़रीबों और बेकसों की पुश्त पनाही नहीं की बल्कि अक्सर व बेशतर हुकूमते वक़्त ने दौलतमंद तब्क़ा की हिमायत की है। इल्ला माशा अल्लाह!

(फ़िक़्हुज़्ज़कात जिल्द–1 सफ़्हा–115)

इस्लाम और मस्अलए गुरबत का हल

इस्लाम ने मस्अलए गुरबत का जो हल पेश किया है और जिस तरह ज़रूरतमंदों और कमज़ोरों की किफ़ालत का निज़ाम क़ाइम किया, उसकी आसमानी मज़ाहिब में या इंसानों के बनाए हुए मुरव्वजा क़वानीन में कोई नज़ीर नहीं मिलती और इस्लाम ने इस सिलसिले में जो निज़ामे तरबियत व राहनुमाई दी है और जो क़वानीन व तंज़ीमात फ़राहम किए हैं और जो उन क़वानीन के निफ़ाज़ और

ततबीक़ (Applictioms) के जो क़वाइद बताए हैं उनकी दुनिया के मज़ाहिब व क़वानीन में कोई मिसाल नहीं मिलती।

इस्लाम ने ग़ुरबत के मस्अला को हल करने की जानिब जिस क़दर ज़्यादा तवज्जोह दी और जितना ज़्यादा इस बात का एहतिमाम किया है उसका अंदाज़ा इस अम्र से बख़ूबी हो सकता है कि इस्लाम ने अपने बिल्कुल इब्तिदाई दौर ही में जबकि मुसलमान महज़ चंद गिनती के मजबूर व बेकस अफ़राद थे और जो दावते इस्लाम क़बूल करने के जुर्म में हर क़िस्म के ज़ुल्म व सितम सह रहे थे और जिनका कोई सियासी वजूद न था और न उन्हें कोई इक़्तिदार हासिल था, इस्लाम ने उस दौर में ग़रीबों के मस्अले की जानिब पूरी तवज्जोह की और कुरआन करीम ने इस सिलसिले में बड़ी अहम हिदायात दीं। कभी कुरआन करीम ने इस मस्अला का ज़िक्र "طَعَامِ مِسْكِيْن" ग़रीबो को खाना खिलाने के अलफ़ाज़ से किया और उस पर मुख़ातबीन को आमादा किया, और कभी अल्लाह के दिए हुए रिज़्क़ में से इनफ़ाक़ की नसीहत की और कभी साइल और महरूम का हक़ अदा करने का हुक्म फ़रमाया और कभी मिस्कीन और मुसाफ़िर का हक़ अदा करने की ताकीद की और कभी "اِيْتَاءِ زَكٰوة" यानी ज़कात देने का उनवान इख़्तियार किया।

ग़रज़ इस तरह मक्की दौर के आग़ाज़ ही से कुरआने करीम ने मुसलमानों की रूह में ये हक़ीक़त जाँगुज़ीं कर दी है कि हर इंसान के माल पर ग़रीब और मुहताज का लाज़िमी हक़ है जिसे बहरतौर अदा किया जाना चाहिए क्योंकि ये महज़ नफ़्ली सदक़ा नहीं है कि अगर चाहे

अदा करे और चाहे न अदा करे।

(फ़िक़्हुज़्ज़कात जिल्द–1 सफ़्हा–71)

ज़कात के फ़वाइद

(1) आज पूरी दुनिया में सोशलिज़्म की बात हो रही है, जिसमें ग़रीबों की फ़लाह व बहबूद का नारा लगा कर उन्हें मुतमौवल (मालदार) तब्क़ा के ख़िलाफ़ उकसाया जाता है। इस तहरीक से ग़रीबों का भला कहां तक होता है? ये एक मुस्तक़िल मौज़ूअ़ है मगर यहां ये कहना चाहता हूं कि अमीर और ग़रीब की ये जंग सिर्फ़ इसलिए पैदा होती है कि अल्लाह तआ़ला ने मुतमौवल तब्क़ा के ज़िम्मा पसमांदा तब्क़ा के जो हुक़ूक़ आइद किए थे उनसे उन्होंने पहलू तिही किया, अगर पूरे मुल्क की दौलत का चालीसवाँ हिस्सा ज़रूरतमंदों में तक़्सीम कर दिया जाए और ये अमल एक वक़्ती सी चीज़ न रहे बल्कि एक मुसलसल अमल की शक्ल इख़्तियार कर ले और अमीर तब्क़ा किसी तरग़ीब व तहरीस और किसी जब्र व इकराह के बग़ैर हमेशा ये फ़रीज़ा अदा करता रहे और फिर उस रक़म की मुन्सिफ़ाना तक़्सीम मुसलसल होती रहे तो कुछ अरसा के बाद आप देखेंगे कि गुरबा को अमीरों से शिकायत ही नहीं रहेगी और अमीर व ग़रीब की जिस जंग से दुनिया हजन्नम कदा बनी हुई है वह इस निज़ाम की बदौलत राहत व सुकून की जन्नत बन जाएगी।

मैं सिर्फ़ पाकिस्तान की मिल्लते इस्लामिया से नहीं बल्कि दुनिया भर के इंसानों और मुआशरों से कहता हूं कि वह इस्लाम के निज़ामे ज़कात को नाफ़िज़ कर के उसकी बरकात का मुशाहदा करें और सरमायादार मुल्कों

की जितनी दौलत कम्यूनिज़्म का मुक़ाबला करने पर सर्फ़ हो रही है वह भी इस मद में शामिल कर लें।

(2) माल व दौलत की हैसियत इंसानी मईशत में वही है जो ख़ून की बदन में है अगर ख़ून की गर्दिश में फ़ुतूर आ जाए तो इंसानी ज़िन्दगी को ख़तरा लाहिक़ हो जाता है और बाज़ औक़ात दिल का दौरा पड़ने से इंसान की अचानक मौत वाक़ेअ़ हो जाती है। ठीक उसी तरह अगर दौलत की गर्दिश मुनसिफ़ाना न हो तो मुआ़शरा की ज़िन्दगी ख़तरा में होती है और किसी वक़्त भी हरकते क़ल्ब बंद हो जाने का ख़ौफ़ तारी रहता है। हक़ तआ़ला ने दौलत की मुनसिफ़ाना तक़सीम और आदिलाना गर्दिश के लिए जहां और बहुत सी तदबीरें और इरशाद फ़रमाई हैं उनमें से एक ज़कात व सदक़ात का निज़ाम भी है और जब तक ये निज़ाम सही तौर पर नाफ़िज़ न हो और मुआ़शरा इस निज़ाम को पूरे तौर पर हज़्म न कर ले तब तक न दौलत की मुनसिफ़ाना गर्दिश का तसव्वुर किया जा सकता है और न मुआ़शरा इख़्तिलाल व ज़वाल से महफ़ूज़ रह सकता है।

(3) पूरे मुआ़शरे को एक इकाई तसव्वुर कीजिए और मुआ़शरा को उसके आज़ा समझये आप जानते हैं कि किसी हादसा या सदमा से किसी उज़्व में ख़ून जमा हो कर मुनजमिद हो जाए तो वह गल सड़ कर फोड़े फुंसी की शक्ल में पीप बन कर बह निकलता है। इसी तरह जब मुआ़शरा के आज़ा में ज़रूरत से ज़्यादा ख़ून जमा हो जाता है वह भी सड़ने लगता है और फिर कभी तऐयुश पसंदी और फ़ुज़ूल ख़र्ची की शक्ल में निकलता है, कभी

अदालतों और वकीलों के चक्कर में ज़ाए होता है, कभी बीमारियों और हस्पतालों में लगता है, कभी ऊँची ऊँची बिलडिंगों और महल्लात की तामीरात में बरबाद हो जाता है। कुदरत ने ज़कात व सदक़ात के ज़रीए इन फोड़े फुंसियों का इलाज तजवीज़ किया है जो दौलत के इंजिमाद की बदौलत मुआशरे के जिस्म पर निकल आती हैं।

(4) अपने बनी नौअ से हमदर्दी इंसानियत का उमदा तरीन वस्फ़ है जिस शख़्स का दिल अपने जैसे इंसानों की बेचारगी, गुरबत व इफ़लास, भूक, फ़क्र वा फ़ाक़ा और तंग दस्ती व ज़बूंहाली देख कर नहीं पसीजता, वह इंसान नहीं जानवर है और चूंकि ऐसे मौक़ों पर शैतान और नफ़्स, इंसान को इंसानी हमदर्दी में अपना किरदार अदा करने से बाज़ रखते हैं इसलिए बहुत कम आदमी इसका हौसला करते हैं, हक़ तआ़ला शानहू ने अपने कमज़ोर बंदों की मदद के लिए अमीर लोगों के ज़िम्मा ये फ़रीज़ा आएद कर दिया ताकि इस फ़रीज़ए ख़ुदावंदी के सामने वह किसी नादान दोस्त के मश्वरे पर अमल न करें।

(5) माल जहां इंसानी मईशत की बुनियाद है, वहां इंसानी अख़्लाक़ के बनाने और बिगाड़ने में भी उसका गहरा दख़ल है। बाज़ दफ़ा माल का न होना इंसान को ग़ैर इंसानी हरकत पर आमादा करता है और वह मुआशरा की नाइंसाफ़ी को देख कर मुआशरती सुकून को ग़ारत करने की ठान लेता है। बाज़ औक़ात वह चोरी, डकैती, सट्टा और जुवा जैसी क़बीह हरकात शुरू कर देता है, कभी गुरबत व इफ़लास के हाथों तंग आ कर वह ज़िन्दगी से हाथ धो लेने का फ़ैसला कर लेता है, कभी वह पेट

का जहन्नम भरने के लिए अपनी इज़्ज़त व इसमत को नीलाम करता है और कभी फ़क्र व फ़ाक़ा का मदावा ढूंडने के लिए अपने दीन व ईमान का सौदा करता है। इसी बिना पर एक हदीस शरीफ़ में फ़रमाया गया है कि फ़क्र व फ़ाक़ा आदमी को क़रीब क़रीब कुफ़्र तक पहुंचा देता है।

ये तमाम ग़ैर इंसानी हरकात मुआशरा में फ़क्र व फ़ाक़ा से जन्म लेती हैं और बाज़ औक़ात घरानों के घरानों को बरबाद कर के रख देती हैं। इनका मदावा (हल) ढूंडना मुआशरा की इजतिमाई ज़िम्मादारी है और सदक़ात व ज़कात के ज़रीआ ख़ालिक़े काएनात ने इन बुराईयों का सद्देबाब भी फ़रमाया है।

(6) इसके बरअक्स बाज़ अख़लाक़ी ख़राबियाँ वह हैं जो माल व दौलत के इफ़रात से जन्म लेती हैं, अमीरज़ादों को जो जो चोंचले सूझते हैं और जिस क़िस्म की ग़ैर इंसानी हरकात उनसे सरज़द होती हैं उन्हें ब्यान करने की हाजत नहीं। सदक़ात व ज़कात के ज़रीए हक़ तआ़ला ने माल व दौलत से पैदा होने वाली अख़लाक़ी बुराईयों का भी इंसिदाद फ़रमाया ताकि उन लोगों को ग़ुरबा की ज़रूरीयात का भी एहसास रहे और ग़ुरबा की हालत उनके लिए ताज़ियानए इबरत भी रहे।

(7) ज़कात व सदक़ात के निज़ाम में एक हिकमत ये भी है कि इससे वह मसाइब व आफ़ात टल जाती हैं जो इंसान पर नाज़िल होती रहती हैं। इसी बिना पर बहुत सी अहादीस में ब्यान फ़रमाया गया है कि सदक़ा के ज़रीआ बला दूर होती है और इंसान की जान व माल

आफ़ात से महफ़ूज़ रहती हैं।

(8) ज़कात व सदक़ात का एक फ़ाएदा ये भी है कि इससे माल व दौलत में बरकत होती है और ज़कात व सदक़ात में बुख़्ल करना आसमानी बरकतों के दरवाज़े बंद कर देता है, हदीस शरीफ़ में है कि जो क़ौम ज़कात रोक लेती है अल्लाह तआ़ला उस पर क़हत और ख़ुश्क साली मुसल्लत कर देता है और आसमान से बारिश बंद हो जाती है। तिबरानी, हाकिम। (आप के मसाइल और उनका हल जिल्द–3 सफ़्हा–336)

खुदाई फ़ैसला

इंसान की माद्दी ज़रूरतों का इस काएनात की माद्दी चीज़ों से वाबस्ता होना एक कुदरती चीज़ है और ये भी हिकमते ख़ुदावंदी का तक़ाज़ा और आलमे तकवीन का अटल फ़ैसला है कि माद्दी असबाब व वसाएल तमाम इंसानों को बराबर तक़्सीम न किए जाऐं बल्कि ज़रूरी है कि कुछ लोगों को वसाएले ज़िन्दगी और असबाबे मआ़श इस क़दर फ़रावानी से दिए जाऐं कि उनकी ज़रूरीयाते ज़िन्दगी से बहुत ज़्यादा हों, और कुछ लोगों को उसमें से इतना कम हिस्सा मिले कि वह अपनी रोज़ाना की ज़रूरीयात भी बाआसानी पूरी न कर सकें, अल्लाह तआ़ला का इरशाद है–

"نَحْنُ قَسَمْنَا بَيْنَهُمْ مَعِيْشَتَهُمْ فِي الْحَيٰوةِ الدُّنْيَا الخ"

(سورۂ زخرف ایت–۳۲ پارہ–۲۵)

तर्जुमा: कि हम ने दुनिया की ज़िन्दगी में उनके असबाबे मआ़श उनके दरमियान तक़्सीम कर दिए हैं और बाज़ को बाज़ पर बदर जहा फ़ाइक़ बनाया है कि उनमें

का एक दूसरे को अपना ताबेदार बना लेता है।

और दुनिया का नज़्म व नस्क़ क़ाइम रखने और तवाज़ुन बरक़रार रखने के लिए ये ऊंच नीच बिल्कुल ज़रूरी और लाबुदी चीज़ है। लेकिन खुदा तआला ने ये ऊंच नीच मुक़र्रर कर के दोनों फ़रीक़ को उनके हाल पर नहीं छोड़ दिया बल्कि जहां एक तरफ़ हज़ारों "तकवीनी" मसलिहतों के तहत ये ऊंच नीच रखी गई है वहीं खुदाए कौयूम ने "तशरीई" तौर पर ये हुक्म भी दिया है कि–

"فِىْ اَمْوَالِهِمْ حَقٌّ مَّعْلُوْمٌ الخ" कि उनके मालों में हिस्सा मुक़र्रर है मांगने वालों और (वसाएले मआश से) महरूम लोगों के लिए। (सूरए अलमआरिज आयत–24 पारा–29)

यानी मालदारों के मालों में महरूमों और हाजतमंदों का हिस्सा तय शुदा और मुतअय्यन है जो उनका हिस्सा नहीं देता वह गोया ग़ासिब है और नाजाइज़ तौर पर उस पर क़ब्ज़ा जमाए हुए है। चुनांचे एक हदीस शरीफ़ से इशारतन ये बात समझ में आती है कि जिस शख़्स पर ज़कात जिस वक़्त वाजिब हो जाती है उसी वक़्त खुदाई खाते में खुद बखुद उस माल का चालीसवाँ हिस्सा अलाहिदा मुस्तहिक़ के नाम लिख दिया जाता है, अब उसका अदा न करना "माल का न निकालना" नहीं है बल्कि उसके मुक़र्रर हिस्सा को अपने माल में दोबारा "शामिल करना" है। इरशादे नबवी (स.अ.व.) है–

"مَاخَالَطَتِ الزَّكٰوةُ مَالًا قَطُّ اِلَّا اَهْلَكَتْهُ"

यानी ज़कात का माल जिस माल में भी शामिल होगा उसको हलाक कर के छोड़ेगा।

(मिश्कात जिल्द–1 सफ़्हा–157)

और एक हदीस में ज़कात को माल का मैल क़रार दिया गया है कि–

"اِنَّ هٰذِهِ الصَّدَقَاتُ اِنَّمَا هِیَ اَوْسَاخُ النَّاسِ" (مشکوٰۃ جلد-۱-صفحہ-۱۶۱)

यानी बिला शुब्हा ये ज़कात का माल लोगों (के माल) के मैल के सिवा कुछ नहीं है चुनांचे इसी मैल से उन मालों को पाक साफ़ करने के लिए इरशादे ख़ुदावंदी है कि– "خُذْ مِنْ اَمْوَالِهِمْ صَدَقَةً تُطَهِّرُهُمْ وَتُزَكِّيْهِمْ بِهَا ط" तर्जुमाः उनके मालों में से ज़कात ले कर आप (ऐ मुहम्मद स.अ.व. उनके मालों) को पाक कर दीजिए और उन्हें ज़कात के ज़रीए पाक बातिन कर दीजिए। (सूरए तौबा आयत–103 पारा–10)

अबूदाऊद में रसूलुल्लाह (स.अ.व.) का इरशाद है कि– "अल्लाह तआला ने ज़कात इसलिए फ़र्ज़ की है कि उसके ज़रीए तुम्हारे बक़िया माल को पाक साफ़ कर दे।

(मिश्कात जिल्द–1 सफ़्हा–156)

ज़कात माल का मैल है

जैसे गन्ने के रस को पका कर जब उसका गुड़ या शक्कर बनाते हैं तो कुछ देर पकने के बाद ऊपर झाग की शक्ल में कुछ मैल आ जाता है जिसका निकालना ज़रूरी होता है, अगर उसको पूरे रस से अलाहिदा न किया जाए, तो पूरा माल गंदा, ख़राब और बदशक्ल तैयार होता है। इसी तरह बक़द्रे निसाब माल पर जब एक साल की मुद्दत गुज़र जाती है तो उसका मैल निकल कर ऊपर आ जाता है जिसकी ख़बर चश्मे नुबूवत (स.अ.व.) ने मुशाहदा कर के हमें दे दी है, अगर मैल को जो छट कर ख़ुद बख़ुद अलाहिदा हो चुका है, दोबारा उसमें शामिल कर दिया जाए तो पूरा माल ख़राब हो जाता है और जिस

तरह साफ़ और उमदा माल की मार्किट में वह गंदा और मैला गुड़ शक्कर नहीं चल सकता, उसी तरह ये माल उस साहबे सर्वत (मालदार) आदमी के अच्छे कामों में ख़र्च न होगा बल्कि तरह तरह की नागहानी और ग़ैर मुतवक़्क़े आफ़तों में ख़र्च हो कर ज़ाए व तबाह होगा, जिसका इशारा ऊपर वाली हदीस में भी है। और भी मुतअद्दद अहादीस इस ही क़िस्म की हैं। (अत्तरग़ीब व अत्तरहीब जिल्द–2 सफ़्हा–165, किताबुस्सदक़ात)

शरीअत का अगर सिर्फ़ निज़ामे ज़कात ही मुकम्मल तौर पर क़ाइम हो जाए तो दुनिया की आधी से ज़्यादा मुसीबतें व परेशानियाँ ख़ुद बख़ुद दूर हो जाऐं। मालदार जब ग़रीब के पास रक़म (ज़कात व सदक़ात वग़ैरा) ले कर पहुंचता है और चुपके से उसके हवाले कर देता है तो उस ग़रीब के दिल में उसके माल से बुग्ज़ व हसद की चिंगारी सुलगी रहती है वह हमेशा हमेशा के लिए बुझ जाती है और वह ख़ुद ये मालदार जब ग़रीबों से क़रीब होता है और उनकी परेशानियाँ और मुश्किलात उसके सामने आती हैं तो उसके अन्दर अपनी ख़ुश हाली पर ख़ुदा तआ़ला के लिए जज़बए तशक्कुर पैदा होता है और वह माल की क़द्र को पहचानता है।

(अत्तरग़ीब जिल्द–2 सफ़्हा–169)

आलमे बरज़ख़ में ज़कात न देने वालों का अंजाम

रसूलुल्लाह (स.अ.व.) ने शबे मेराज में देखा आप (स.अ.व.) ने फ़रमाया एक क़ौम पर गुज़र हुआ कि उनकी शर्मगाह पर आगे और पीछे चीथड़े लिपटे हुए थे और वह मवेशी की तरह चर रहे थे और ज़क़्क़ूम और जहन्नम के पत्थर

खा रहे थे। आप (स.अ.व.) ने पूछा ये कौन लोग हैं? जिब्रईल अलैहिस्सलाम ने कहा ये वह लोग हैं जो अपने माल की ज़कात अदा नहीं करते और उन पर अल्लाह तआला ने ज़ुल्म नहीं किया और आप का रब अपने बंदों पर ज़ुल्म करने वाला नहीं। (नश्रुत्तीब सफ़्हा–51)

ज़कात अदा न करने वालों के लिए जो सज़ाऐं ख़ुदा तआला ने आख़िरत में तजवीज़ फ़रमाई हैं वह तो अलग हैं। ये अज़ाब तो हश्र ही से शुरू हो जाएगा। जिस तरह बाज़ संगीन मुजरिमों पर मुक़द्दमा फ़ैसल होने से पहले ही कुछ सख़्तियाँ हवालात ही से होने लगती हैं और अदालत में भी उनको ज़िल्लत व रुसवाई के साथ पेश किया जाता है। इसी तरह ख़ुदा के इन बाग़ी मुजरिमों के साथ भी हश्र में ऐसा ही होगा।

(तरग़ीब जिल्द–2 सफ़्हा–182)

हदीस शरीफ़ में इरशाद है कि इस्लाम की बुनियाद पाँच चीज़ों पर है– (1) इसकी शहादत देना कि अल्लाह के सिवा कोई माबूद नहीं और ये कि मुहम्मद (स.अ.व.) अल्लाह के बंदे और रसूल हैं। (2) नमाज़ क़ाइम करना। (3) ज़कात अदा करना। (4) बैतुल्लाह का हज करना। (5) रमज़ानुलमुबारक के रोज़े रखना।

(बुख़ारी व मुस्लिम जिल्द–1 सफ़्हा–32)

एक और हदीस में है कि जिस शख़्स ने अपने माल की ज़कात अदा कर दी उसने उसके शर को दूर कर दिया। (कंज़ुलउम्माल मज्मउज़्ज़वाइद जिल्द–3 सफ़्हा–63)

एक और हदीस में है कि जब तुम ने अपने माल की ज़कात अदा कर दी तो तुम पर जो ज़िम्मादारी आइद

होती थी उससे तुम सुबुक दोश हो गए।

(तिरमिज़ी जिल्द–1 सफ़्हा–78)

एक और हदीस में है कि अपने मालों को ज़कात के ज़रीए महफ़ूज़ करो, अपने बीमारों का सदक़ा से इलाज करो और मसाइब के तूफ़ान का दुआ व तज़र्रोअ़ से मुक़ाबला करो। (अबूदाऊद)

एक हदीस में है कि जो शख़्स अपने माल की ज़कात अदा नहीं करता, कयामत में उसका माल गंजे सांप की शक्ल में आएगा और उसकी गर्दन से लिपट कर गले का तौक़ बन जाएगा। (निसाई सफ़्हा–333)

जिस शख़्स को अल्लाह जल्ला शानहू ने माल अता किया हो और वह उसकी ज़कात अदा न करता हो तो वह सांप बन कर उसके गले में डाल दिया जाएगा और वह कहेगा कि मैं तेरा माल हूं तेरा ख़ज़ाना हूं।

सांप जिस घर में भी निकल आता है, वह्शत की वजह से अंधेरे में उस घर में जाना मुश्किल हो जाता है कि कहीं लिपट न जाए, लेकिन अल्लाह पाक का पाक रसूल (स.अ.व.) फ़रमाता है कि यही माल जिसको आज महफ़ूज़ ख़ज़ानों में और लोहे की अलमारियों में रखा जाता है, ज़कात अदा न करने पर कल को सांप बन कर तुम्हें लिपटा दिया जाएगा।

घर के सांप का लिपटना ज़रूरी नहीं होता, महज़ एहतेमाम है कि शायद वह लिपट जाए और उस एहतेमाम पर बार बार फ़िक्र व ख़ौफ़ होता है कि कहीं इधर से न निकल आए उधर से न निकल आए। और ज़कात अदा न करने पर उसका अज़ाब यक़ीनी है फिर भी इसका

ख़ौफ़ हम को नहीं होता। (फ़ज़ाइले सदक़ात जिल्द–1 सफ़्हा–236)

ज़कात न देने पर दुनयवी अज़ाब

हज़रत बरीदा (रज़ि.) से रिवायत है कि रसूलुल्लाह (स.अ.व.) ने फ़रमाया जो भी क़ौम ज़कात देना छोड़ देती है अल्लाह तआला उसको क़हत साली में मुब्तला कर देता है और अगर अपने मालों की ज़कात देना छोड़ देंगे तो ज़रूर आसमान से बारिशें रोक दी जाएंगी, हत्ता कि अगर चौपाये न हों तो एक क़तरा न बरसे। (तरग़ीब जिल्द–2 सफ़्हा–190, व फ़िक़्हुज़्ज़कात जिल्द–1 सफ़्हा–107)

क़हत की वबा हम लोगों पर ऐसी मुसल्लत हो रही है कि उसकी हद नहीं, हज़ारों तदबीरें उसके ज़ाएल करने के वासते की जाती हैं लेकिन कोई भी कारगर नहीं हो रही है। जब अल्लाह तआला कोई वबाल किसी गुनाह पर उतार दें तो दुनिया में किसी की क्या ताक़त कि उसको हटा सके, वह तो उसके ही हटाने से हट सकती है। उसने मरज़ बतला दिया है और उसका सही इलाज बता दिया। अगर मरज़ को ज़ाएल करना मक़्सूद हो तो सही इलाज (कुरआन व हदीस की रौशनी में) इख़्तियार कीजिएगा। (फ़ज़ाइले सदक़ात जिल्द–1 सफ़्हा–252)

"जिस माल की ज़कात बाक़ी रह जाती है वह उस माल को ख़राब कर देती है।"

हदीस मज़कूरा बाला के दो मतलब हैं। एक ये कि जिस माल की ज़कात उस माल में बाक़ी रह गई हो और अदा न हुई हो तो वह ज़कात उस माल के ज़ियाअ़ और ख़राबी का बाइस बन जाती है। दूसरा मतलब ये है कि

एक शख़्स जो ख़ुद मालदार हो अगर वह ज़कात ले ले और उसे अपने माल में शामिल कर ले तो उसका सारा माल ज़ाए हो जाता है। (फ़िक़्हुज़्ज़कात जिल्द–1 सफ़्हा–108, बहवाला नैलुलऔतार जिल्द–4 सफ़्हा–126)

मुसलमान के लिए ज़कात इंश्योरेंस है

ज़कात मुसलमानों की कोऑपरेटिव सोसाईटी है, ये उनकी इंश्योरेंस कम्पनी है ये उनका प्रोवीडेंट फ़ंड है, ये उनके लिए बेकारों का सरमायए इआनत है, ये उनके माज़ूरों, अपाहिजों, बीमारों, यतीमों, बेवावों का ज़रीअए परवरिश है और इन सब से बढ़ कर ये (ज़कात) वह चीज़ है जो मुसलमानों को फ़िक्रे फ़रदा से बिल्कुल बे–नियाज़ कर देती है। इसका सीधा सादा उसूल ये है कि आज तुम मालदार हो तो दूसरों की मदद करो, कल तुम नादार हो गए तो दूसरे तुम्हारी मदद करेंगे। तुम को ये फ़िक्र करने की ज़रूरत नहीं कि हम मुफ़्लिस हो गए तो क्या बनेगा? मर गए तो बीवी बच्चों का क्या हश्र होगा? कोई आफ़ाते नागहानी आ पड़ी, बीमार हो गए, घर में आग लग गई, सैलाब आ गया, दीवालिया निकल गया तो इन मुसीबतों से मुख़्लसी की क्या सबील होगी? सफ़र में पैसा न रहा तो क्यों कर गुज़र बसर होगी? इन सब फ़िक्रों से सिर्फ़ ज़कात तुम को हमेशा के लिए बे–फ़िक्र कर देती है, तुम्हारा काम बस इतना है कि अपनी पस अंदाज़ की हुई दौलत में से ढाई फ़ीसद दे कर अल्लाह की इंश्योरेंस कम्पनी में अपना बीमा करालो, इस वक़्त तुम को इस दौलत की ज़रूरत नहीं है, ये उनके काम आएगी जो उसके ज़रूरतमंद हैं। कल जब तुम ज़रूरतमंद

होगे या तुम्हारी औलाद या बीवी ज़रूरतमंद होगी तो न सिर्फ़ तुम्हारा अपना दिया हुआ माल बल्कि उससे भी ज़्यादा तुम को वापस मिल जाएगी।

(फ़िक़्हुज़्ज़कात जिल्द–2 सफ़्हा–713)

सरमायादारी और ज़कात

सरमायादारी और इस्लाम के उसूल व नताइज में कुल्ली तज़ाद नज़र आता है कि सरमायादारी का तक़ाज़ा ये है कि रुपया जमा किया जाए और उसको बढ़ाने के लिए सूद लिया जाए। इस्लाम इसके बिल्कुल ख़िलाफ़ ये हुक्म देता है कि रुपया औवल तो बिल्कुल जमा न हो, और अगर जमा हो भी जाए तो उस तालाब में से ज़कात की नहरें निकाल दी जाऐं ताकि जो खेत सूखे हैं उनको पानी पहुंचे और गिर्दोपेश की सारी ज़मीन शादाब हो जाए। सरमायादारी के निज़ाम में दौलत का मुबादला मुक़य्यद है और इस्लाम में आज़ाद, सरमायादारी के तालाब, से पानी लेने के लिए नगुज़ीर है कि ख़ास आप का पानी पहले से वहां मौजूद हो, वरना आप एक क़तरए आब (पानी) भी नहीं ले सकते।

इसके मुक़ाबले में इस्लाम के ख़ज़ानए आब का क़ाएदा ये है कि जिसके पास ज़रूरत से ज़्यादा पानी (माल) हो वह उसमें ला कर (ज़कात) डाल दे, और जिस को पानी (माल) की ज़रूरत हो वह उससे ले ले।

ज़ाहिर है कि ये दोनों तरीक़े अपनी अस्ली तबीअ़त के लिहाज़ से एक दूसरे की पूरी ज़िद हैं और एक ही मुनज़्ज़म मईशत में दोनों जमा नहीं हो सकते।

(फ़िक़्हुज़्ज़कात जिल्द–2 सफ़्हा–714)

क्या ज़कात इस्लामी टेक्स है?

ज़कात टैक्स नहीं है बल्कि एक आला तरीन इबादत है। बाज़ लोगों के ज़ेहन में ज़कात का एक निहायत घटिया तसव्वुर है कि वह उसको हुकूमत का टैक्स समझते हैं जिस तरह कि तमाम हुकूमतों में मुख़्तलिफ़ क़िस्म के टैक्स आएद किए जाते है।, हालांकि ज़कात किसी हुकूमत का आएद कर्दा टेक्स नहीं, न रसूलुल्लाह (स.अ.व.) ने इस्लामी हुकूमत की ज़रूरीयात के लिए उसको आएद किया है बल्कि हदीस में साफ़ तौर पर इरशाद है कि "ज़कात मुसलमानों के मुतमौवल (मालदार) तब्क़ा से ले कर उनके तंगदस्त तब्क़ा को लौटा दी जाए।

इसी तरह ये समझना भी ग़लत है कि ज़कात देने वाले फ़ुक़रा व मसाकीन पर कोई एहसान करते हैं, हरगिज़ नहीं बल्कि ख़ुद फ़ुक़रा व मसाकीन का मालदारों पर एहसान है कि उनके ज़रीए से उन लोगों की रक़म ख़ुदाई बैंक में जमा हो रही है, अगर आप किसी को बैंक में जमा कराने के लिए कोई रक़म सिपुर्द करते हैं तो क्या आप उस पर एहसान कर रहे हैं? अगर ये एहसान नहीं तो फ़ुक़रा को ज़कात देना भी उन पर एहसान नहीं।

पहली उम्मतों में जो माल अल्लाह तआला की बारगाह में नज़राना के तौर पर पेश किया जाता था उसको इस्तेमाल करना किसी के लिए भी जाइज़ नहीं था बल्कि वह "सोख़्तनी क़ुर्बानी कहलाती थी।" उसको क़ुर्बान गाह में रख दिया जाता था, अब अगर आसमान से आग आ कर उसे राख कर जाती तो ये क़ुर्बानी के क़बूल होने की अलामत ,थी और अगर वह चीज़ उसी तरह पड़ी रहती

तो उसके मरदूद होने की अलामत थी। अल्लाह तआला ने इस उम्मत पर ये ख़ास इनायत फ़रमाई है कि उमरा को हुक्म दिया गया कि वह जो चीज़ हक़–तआला की बारगाह में पेश करना चाहें उसको उनके फ़लाँ फ़लाँ बंदों (फ़ुक़रा व मसाकीन) के हवाले कर दें। इस अज़ीमुश्शान रहमत के ज़रीए एक तरफ़ फ़ुक़रा की हाजत का इंतिज़ाम कर दिया गया दूसरी तरफ़ इस उम्मते मरहूमा के लोगों को रुसवाई और ज़िल्लत से बचा लिया गया है, अब ख़ुदा ही जानता है कि कौन पाक माल से सदक़ा करता है और कौन नापाक माल से? कौन ऐसा है जो महज़ रज़ाए इलाही के लिए देता है और कौन नाम व नुमूद और शोहरत व रिया के लिए। अलग़रज़ ज़कात टेक्स नहीं बल्कि अल्लाह तआला की बारगाह में नज़राना है। यही वजह है कि अल्लाह तआला ने कुरआन करीम में उसे क़र्ज़े हसना फ़रमाया है–

"مَنْ ذَالَّذِیْ یُقْرِضُ اللّٰہَ قَرْضاً حَسَناً فَیُضٰعِفَهٗ لَهٗ اَضْعَافاً کَثِیْرَۃً"

(پارہ–۲ سورۂ بقرہ)

यहाँ सदक़ात को क़र्ज़े हसन से इसलिए ताबीर किया गया है कि जिस तरह क़र्ज़ वाजिबुलअदा है उसी तरह सदक़ा करने वाले को मुतमइन रहना चाहिये कि उनका ये सदक़ा हज़ारों बरकतों और सआदतों के साथ उन्हें वापस किया जाएगा। ये मतलब नहीं कि ख़ुदा तआला को किसी चीज़ की एहतियाज (ज़रूरत) है।

यही वजह है कि सदक़ा फ़क़ीर के हाथों में जाने से पहले अल्लाह तआला की बारगाह में पहुंच जाता है और फ़क़ीर गोया उस देने वाले से वसूल नहीं कर रहा है

बल्कि ये उसी की तरफ़ से दिया जा रहा है जो सब का दाता है। (आप के मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–338)

इस्लामी टेक्स (ज़कात) में ये फ़र्क़ है कि हुकूमत टेक्स ले कर अपने कामों में ख़र्च करती है और इस्लाम टेक्स (ज़कात) की रक़में गुरबा, मसाकीन और मुहताजों में तक़्सीम करा देता है। इस्लाम ने इस रक़म को ख़र्च करने के लिए आठ हलक़े बनाए हैं।

(हक़ीक़तुज़्ज़कात सफ़्हा–58)

ज़कात और टेक्स का बुनियादी फ़र्क़

मस्अला: टेक्स की अदाएगी को ज़कात के लिए काफ़ी समझ लेना या ज़कात की कुछ रक़म को बतौर टेक्स अदा कर देना न दुरुस्त है और न काफ़ी। ज़कात और टेक्स के दरमियान बड़ा बुनियादी और जौहरी फ़र्क़ है। ज़कात एक इबादत है, इसीलिए इसमें नीयत और इरादा ज़रूरी है। इख़्लासे ख़ुदावंदी मतलूब है। इसके लिए मुतअय्यन मसारिफ़ हैं, उन्ही पर इन को ख़र्च किया जा सकता है। ग़ैर मुस्लिमों और आम रिफ़ाही कामों में इसका इस्तेमाल जाइज़ नहीं है। (ज़कात जिनको दी जाए वह मुस्तहिक़ भी हों और मालिक बनने की सलाहियत भी रखते हों) उसकी एक मिक़्दार और तनासुब मुअय्यन है। वाजिब होने के लिए दौलत की एक हद मुक़र्रर है फिर उसकी अदाएगी के लिए एक साल की मुद्दत है, बाज़ ख़ुसूसी अमवाल ही हैं जिनमें वाजिब होती है, हर माल पर वाजिब नहीं होती। ये सारे अहकाम क़ुरआन व सुन्नत से साबित हैं। इसमें अदना तब्दीली और तग़य्युर की कोई गुंजाइश नहीं है।

इसके बरख़िलाफ़ टेक्स इबादत नहीं है बल्कि हुकूमत की इआनत या उससे पहुंचने वाले फ़ाएदे का मुअ़वज़ा है, न उसके लिए कोई मुतअ़य्यन तनासुब और मिक्दार है न किसी माल की तअ़यीन है, न उसके लिए नीयत व इरादा का कोई सवाल है, न उसके मसारिफ़ वह हैं जो ज़कात के हैं और न उसके लिए वह मुनासिब हदें हैं जो शरीअ़त ज़कात के लिए मुतअ़य्यन करती है बल्कि बसा औक़ात ये जुल्म की सतह तक पहुंच जाता है।

(जदीद फ़िक़्ही मसाइल सफ़्हा–125)

ज़कात का एक नुमायाँ फ़र्क़

सब से पहला फ़र्क़ ज़कात और टेक्स के दरमियान उनके नामों से नुमायाँ है कि ज़कात के माना पाकी, नश्वोनुमा और बरकत के हैं। शरीअ़ते इस्लामिया ने माल के उस हिस्सा को जो ज़कात दिहिन्दा फ़क़ीर को देता है ज़कात कहा है। इससे ज़कात दिहिन्दा के नफ़्स में ये तअस्सुर पैदा करना है कि उसका ये अमल सरासर ख़ैर व बरकत का हामिल है और उसके माल को नश्वोनुमा देने वाला और उसको पाक कर देने वाला है।

जबकि टेक्स (ज़रीबा) का लफ़्ज़ महज़ जब्र व इलज़ाम का मफ़हूम अदा करता है, यानी ये एक तावान है जो ज़बरदस्ती और बिलजब्र मालदार शख़्स पर लाद दिया गया है, और यही वजह है कि लोग टेक्स को एक बेहद नागवार बोझ और उनके माल पर पड़ जाने वाला डंड समझते हैं।

ज़कात का लफ़्ज़ अपने पाकीज़गी, बरकत और नश्वोनुमा के मफ़ाहीम के साथ इस अम्र की भी निशानदिही करता

है कि साहबे माल जिस माल को अल्लाह का हक़ अदा किए बग़ैर जमा करता है वह नापाक व नजिस रहता है और ज़कात ही है जो उस माल को पाक करती है और साहबे माल को बुख़्ल और हिर्स से पाक करती है। ज़कात का लफ़्ज़ बलताता है कि जो माल बज़ाहिर अदाए ज़कात से कम होता नज़र आता है दरहक़ीक़त वह नश्वोनुमा पा रहा है और उसमें अफ़ज़ूदगी हो रही है। अल्लाह तआ़ला का इरशाद है सूरए बक़रा पारह 3 में–

"يَمْحَقُ اللّٰهُ الرِّبٰوا وَ يُرْبِى الصَّدَقٰتِ ط"

तर्जुमाः मिटाता है अल्लाह सूद को और बढ़ाता है ख़ैरात को। (फ़िक़्हुज़्ज़कात जिल्द–2 सफ़्हा–899)

क्या ज़कात की वसूलयाबी हुकूमत पर है?

रहा ये सवाल कि जब ज़कात टेक्स नहीं बल्कि ख़ालिस इबादत है तो हुकूमत को उसका इंतिज़ाम क्यों सिपुर्द किया जाए? इसका मुख़्तसर जवाब ये है कि इस्लाम पूरे मुआ़शरे को एक इकाई क़रार देकर उसका नज़्म व नस्क़ इस्लामी हुकूमत के सिपुर्द करता है। इसलिए वह फ़ुक़रा व मसाकीन जो इस्लामी मुआ़शरे का जुज़्व हैं, उनकी ज़रूरीयात का तकफ़्फ़ुल भी इस्लामी मुआ़शरे की कूवते मुक़्तदिरा के सिपुर्द करता है और इस किफ़ालत के लिए उसने सदक़ात व ज़कात का निज़ाम राइज फ़रमाया है जो फ़ुक़रा व मसाकीन की किफ़ालत की सब से बड़ी ज़िम्मादारी हुकूमत पर आएद की गई है। इसलिए इस मद के लिए मख़्सूस रक़म का बंदोबस्त भी हुकूमत का फ़रीज़ा होगा। यही वजह है कि जो लोग हुकूमत की जानिब से सदक़ात की वसूली व इंतिज़ाम पर मुक़र्रर हों,

हदीस शरीफ़ में उनको "ग़ाज़ी फ़ीसबीलिल्लाह" के साथ तशबीह दी गई है। (अबूदाऊद, तिर्मिज़ी)

जिसमें एक तरफ़ उनकी ख़िदमात को सराहा गया है और दूसरी तरफ़ नाज़ुक ज़िम्मादारी का भी उन्हें एहसास दिलाया गया है यानी अगर वह इस फ़रीज़ा को जिहाद फ़ीसबीलिल्लाह समझ कर अदा करेंगे तब अपनी ज़िम्मादारी से सुबुकदोश होंगे और अगर उन्होंने इस माल में एक पैसा की भी ख़्यानत रवा रखी तो उन्हें अच्छी तरह समझ लेना चाहिए कि वह ख़ुदाई माल में ख़्यानत के मुरतकिब हो रहे हैं जो उनके लिए आतिशे दोज़ख़ का सामान है। चुनांचे एक हदीस शरीफ़ में इरशाद है कि– "जिस शख़्स को हम ने किसी काम पर मुक़र्रर किया और उसके लिए वज़ीफ़ा भी मुक़र्रर कर दिया, उसके बाद अगर वह उस माल से कुछ लेगा तो वह ग़नीमत में ख़्यानत करने वाला होगा।"

(अबूदाऊद, आप के मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–339)

क्या सरकारी टेक्स ज़कात में महसूब हो सकता है?

सवालः सरकार तिजारत के मुनाफ़ा और मकानात के किराया पर टेक्स लेती है। क्या ये ज़कात में महबूस हो सकता है?

जवाबः टेक्स में जो रुपया दिया जाता है, वह ज़कात में महसूब नहीं हो सकता, ज़कात अलाहिदा अदा करनी चाहिए। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–147, बहवाल। शामी बाबुज़्ज़कातिलग़नम जिल्द–2 सफ़्हा–32)

क्या इनकम टेक्स अदा करने से ज़कात अदा हो जाएगी?

मस्अलाः इनकम टेक्स मुल्क की ज़रूरीयात के लिए

गवर्नमेन्ट की तरफ़ से मुक़र्रर है। जब कि ज़कात एक मुसलमान के लिए फ़रीज़ए ख़ुदावंदी और इबादात है। इनकम टेक्स अदा करने से ज़कात अदा नहीं होगी, बल्कि ज़कात अलग अदा करना फ़र्ज़ है।

(आप के मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–387)

हाकिमे वक़्त और ज़कात

मस्अलाः अगर हाकिमे वक़्त कोई मुसलमान आदिल है तो उसको हर क़िस्म के माल की ज़कात लेने का हक़ हासिल है, वह तमाम लोगों से ज़कात वसूल कर के मुस्तहिक़्क़ीन पर सर्फ़ करेगा।

मस्अलाः अगर हाकिमे वक़्त कोई ज़ालिम या ग़ैर मुस्लिम हो तो उसको ज़कात लेने का कुछ हक़ नहीं है और अगर वह जबरन ले ले तो देखना चाहिए कि उसने उस माल को मुस्तहिक़्क़ीन पर ख़र्च किया या नहीं? अगर मुस्तहिक़्क़ीन पर सर्फ़ किया है तो ख़ैर, वरना उन लोगों को चाहिए कि फिर दोबारा ज़कात निकालें और बतौरे ख़ुद मुस्तहिक़्क़ीन पर तक़्सीम करें।

मस्अलाः अगर कोई शख़्स ज़कात न देता हो तो हाकिमे वक़्त को चाहिए कि उसको क़ैद कर दे और उससे ज़कात तलब करे। जबरन उसके माल को कुर्क़ न करना चाहिए, क्योंकि ज़कात के सही होने में नीयत शर्त है और ये बात ज़ाहिर है कि जब उसका माल जबरन लिया जाएगा तो वह नीयते ज़कात न करेगा।

(इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–4 सफ़्हा–31)

अमवाले ज़ाहिरा व बातिना की ज़कात का हुक्म

मस्अलाः हुकूमत सिर्फ़ अमवाले ज़ाहिरा की ज़कात

वसूल करेगी। अमवाले बातिना की ज़कात हर शख़्स अपनी सवाबदीद के मुताबिक़ अदा कर सकता है।

(आप के मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–341)

"कारख़ानों और मिलों में तैयार होने वाला माल, तिजारत का माल और बैंक में जमा शुदा सरमाया अमवाले ज़ाहिरा हैं और जो सोना चाँदी, नक़दी घरों में रहती है उनको अमवाले बातिना कहा जाता है।" (मुहम्मद रफ़अ़त क़ासमी ग़ुफ़िरलहू)

मस्अला: अब वह ज़माना है कि मुसलमान को ख़ुद इसका इंतिज़ाम करना चाहिए कि हर शख़्स अपनी ज़कात ख़ुद क़वाएदे शरईया के लिहाज़ से निकाले और अपने तौर पर मुस्तहिक़्क़ीन पर सर्फ़ करे और ख़ुद ही अपने संदूक़चा (सेफ़ वग़ैरा) को ज़कात का बैतुलमाल बनाए यानी ज़कात का साल जिस वक़्त ख़त्म हो, या उश्र जिस वक़्त वाजिब हो तो फ़ौरन अगर मुस्तहिक़्क़ीन दस्तयाब हो जाऐं तो उसी वक़्त तक़्सीम कर दे वरना उसको संदूक़चा में अलाहिदा जमा रखे, जिस वक़्त मुस्तहिक़्क़ीन मिलते जाऐं उस माल को सर्फ़ करता रहे, इस ज़माना में जो लोग मुस्तइदी से क़वाएदे शरईया पर अमल करते हैं उनके लिए बड़ा अज्र है, जैसा कि अहादीसे सहीहा में बसराहत मौजूद है। अल्लाह तआ़ला हम सब को तौफ़ीक़ इनायत फ़रमाए। अमीन!

(इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–4 सफ़्हा–41)

ज़कात के वाजिब होने की शर्तें

(1) मुसलमान होना, काफ़िर पर ज़कात फ़र्ज़ नहीं (ख़्वाह वह पहले से मुसलमान हो या मुरतद होने के बाद

इस्लाम लाया हो) अगर मुरतद (इस्लाम से निकला हो) मुसलमान हो जाए तो उस पर इरतिदाद के ज़माने की ज़कात अदा करना वाजिब नहीं है। मुसलमान होना जिस तरह ज़कात के वाजिब होने की शर्त है उसी वक़्त सेहते अदाएगी की भी शर्त हैं, क्योंकि ज़कात बग़ैर नीयत के दुरुस्त नहीं और काफ़िर का नीयत करना ही दुरुस्त नहीं है। (किताबुलफ़िक़्ह अललमज़ाहिबिलअरबआ जिल्द–1 सफ़्हा–960)

(2) बालिग़ होना, नाबालिग़ पर ज़कात फ़र्ज़ नहीं।

(3) आक़िल होना, मजनून पर ज़कात फ़र्ज़ नहीं। न उस शख़्स पर जिसके दिमाग़ में कोई मरज़ पैदा हो गया हो और इस सबब से उसकी अक़्ल में फ़ुतूर आ गया हो। हाँ इस क़दर तफ़सील है कि जुनूने ग़ैर अस्ली (जुनून अगर बालिग़ होने से पहले आरिज़ हुआ हो तो अस्ली है वरना ग़ैर अस्ली) और ये नुक़्साने अक़्ल अगर पूरे साल भर रहेगा तो ज़कात फ़र्ज़ न होगी और अगर पूरे साल भर न रहे तो लग़्व समझा जाएगा और ज़कात फ़र्ज़ होगी। अलबत्ता अगर जुनून अस्ली है तो उसका हर हाल में एतेबार होगा। साल भर न रहे तब भी ज़कात फ़र्ज़ न होगी मसलन किसी को साल भर में दो एक मरतबा जुनून हो जाए तो उस साल की ज़कात उस पर फ़र्ज़ न होगी बल्कि जिस वक़्त से उसका जुनून ज़ाएल हुआ है उसी वक़्त से उसके साल की इब्तिदा समझी जाएगी।

(दुर्रेमुख़्तार)

(4) ज़कात की फ़रज़ीयत से वाक़िफ़ होना या दारुल इस्लाम में होना, जो शख़्स ज़कात की फ़रज़ीयत से

नावाकिफ़ हो और दारुल इस्लाम में भी न रहता हो उस पर ज़कात फ़र्ज़ नहीं।

(5) आज़ाद होना, गुलाम पर गो वह मुकातब (यानी वह गुलाम जिसको उसके आक़ा ने इस शर्त पर आज़ाद कर दिया हो कि वह इस क़दर रुपया कमा कर उसको दे दे, जब तक वह रुपया उस क़दर कमा कर न दे, गुलाम रहता है और देने के बाद आज़ाद हो जाता है) या माज़ून हो ज़कात फ़र्ज़ नहीं। (माज़ून वह गुलाम जिसको उसके आक़ा ने इजाज़त दी हो कि वह कमाई करे और अपने आक़ा (मालिक) को ला कर दे।)

(इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–4 सफ़्हा–16)

(6) ऐसी चीज़ के निसाब का मालिक होना जो एक साल तक क़ाइम रहती हो, जो चीज़ एक साल तक क़ाइम (बाक़ी) न रहती हो जैसे ककड़ी, खीरा, ख़रबूज़ा, तरबूज़ और बाक़ी तरकारियाँ वग़ैरा उन पर ज़कात फ़र्ज़ नहीं बल्कि उश्र है।

(7) उस माल पर एक साल कामिल का गुज़र जाना, बग़ैर एक साल के गुज़रे हुए ज़कात फ़र्ज़ नहीं।

(8) साल के शुरू और आख़िर में निसाब का पूरा होना चाहिए, चाहे साल के दरमियान में कम हो जाए, हाँ अगर साल के शुरू या आख़िर में निसाब कम हो जाए तो फिर ज़कात फ़र्ज़ न होगी।

(9) उस माल का ऐसे क़र्ज़ से महफ़ूज़ होना जिसका मुतालबा बंदों की तरफ़ हो सकता है ख़्वाह वह अल्लाह जल्ला शानहू, का क़र्ज़ हो जैसे उश्र, ख़िराज (गुज़श्ता सालों की) वग़ैरा कि हक़ अल्लाह का तो हैं मगर उनका

मुतालबा इमामे वक़्त की तरफ़ से हो सकता है, या वह क़र्ज़ बंदों का हो, बीवी का महर भी उसी क़र्ज़ में दाख़िल है अगरचे महरे मुअज्जल हो, (वह महर जो फ़ौरी तौर पर वाजिबुलअदा नहीं होता)। जो माल इस क़िस्म के क़र्ज़ में मुस्तग़रक़ हो या इस क़दर क़र्ज़ हो कि उसके अदा करने के बाद निसाब पूरा न रहे तो उस पर ज़कात फ़र्ज़ नहीं, हाँ अगर ऐसा क़र्ज़ हो कि जिसका मुतालबा बंदों की तरफ़ से नहीं हो सकता मसलन किसी पर कफ़्फ़ारा (रमज़ानुलमुबारक के रोज़ा को जान बूझ कर तोड़ने से कफ़्फ़ारा वाजिब होता है) वाजिब हो या हज, तो उस पर ज़कात फ़र्ज़ होगी, साल के दरमियान में अगर क़र्ज़ हो जाए तो समझा जाएगा कि वह माल फ़ना हो गया, यहां तक कि अगर क़र्ज़ ख़्वाह उस क़र्ज़ को मआफ़ कर दे तब भी ज़कात न देना पड़ेगी, बल्कि जिस वक़्त उसने मआफ़ किया है उस वक़्त से उस माल के साल की इब्तिदा रखी जाएगी।

अगर किसी के पास कई क़िस्म के मालों का निसाब हो, और उस पर क़र्ज़ हो तो उसको चाहिए कि क़र्ज़ को ऐसी चीज़ की तरफ़ राजेअ़ करे जिसकी ज़कात कम हो और उसकी ज़कात न दे मसलन किसी के पास चांदी का एक निसाब हो और बकरी का भी एक हो तो उसको चाहिए कि क़र्ज़ को चांदी के निसाब की तरफ़ राजेअ़ करे। क्योंकि चांदी के एक निसाब की ज़कात ब–सबब इसके कि चांदी के एक निसाब की ज़कात है, बकरी के एक निसाब की ज़कात से बहुत कम होती है, हाँ अगर वह क़र्ज़ इस क़दर ज़्यादा हो कि एक चीज़ का निसाब

उसके लिए काफ़ी न हों तो फिर जितने निसाबों में उसकी अदाएगी मुमकिन हो उसी क़दर निसाबों की तरफ़ राजेअ़ किया जाएगा और उनकी ज़कात न दी जाएगी।

(इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–4 सफ़्हा–18)

(10) वह माल अपनी अस्ली ज़रूरतों से ज़ाएद हो, जो माल अपनी अस्ली ज़रूरतों के लिए हो उस पर ज़कात फ़र्ज़ नहीं, पस पहनने के कपड़ों और रहने के घर पर और ख़िदमत के गुलामों पर, और सवारी के घोड़ों पर और ख़ानादारी के असबाब पर ज़कात फ़र्ज़ नहीं और इसी तरह उन किताबों पर जो तिजारत की न हों, ख़्वाह किसी अह्ले इल्म के पास हों या किसी जाहिल के पास हों और इसी तरह पेशावरों के औज़ार व असबाब पर ज़कात फ़र्ज़ नहीं, ख़्वाह वह औज़ार इस क़िस्म के हों कि उनसे नफ़ा लिया जाए और बाक़ी रहें, जैसे कुल्हाड़ी, बसुली वग़ैरा और इसी तरह वह रुपया जो अपनी अस्ली ज़रूरतों के लिए रखा जाए, उस पर भी ज़कात फ़र्ज़ नहीं, बशर्ते कि वह ज़रूरत उसी साल में दरपेश हो और अगर वह ज़रूरत साले आइंदा में पेश आने वाली हो, बिलफ़ेल न हो (फ़िलहाल साल के अन्दर न हो) तो फिर उस पर ज़कात फ़र्ज़ होगी। (रद्दुलमुह्तार)

(11) माल का अपने या अपने वकील के क़ब्ज़े में होना, जो माल मिल्क व क़ब्ज़े में न हो या मिल्क में हो क़ब्ज़े में न हो या क़ब्ज़े में हो, मिल्क में न हो, उस पर ज़कात फ़र्ज़ नहीं। पस मुकातब के कमाए हुए माल में जक़ात नहीं, न उस पर न उसके मौला पर इसलिए कि वह माल मुकातब की मिल्क में नहीं गो क़ब्ज़े में है और

मौला के क़ब्ज़े में नहीं गो मिल्क में है और इसी तरह माजून की कमाई में भी ज़कात फ़र्ज़ नहीं और रेहन की हुई चीज़ पर भी ज़कात फ़र्ज़ नहीं, न रेहन रखने वाले पर और न रेहन करने वाले पर, इसलिए कि रेहन रखने वाला उस का मालिक नहीं, गो उस पर क़ाबिज़ है। और रेहन करने वाला उस पर क़ाबिज़ नहीं गो उसका मालिक है।

इसी तरह जो माल एक मुद्दत तक खोया रहा, बाद उसके मिल गया तो जिस ज़माना तक खोया रहा उस ज़माना की ज़कात फ़र्ज़ नहीं, क्योंकि उस वक़्त तक क़ब्ज़े में न था, इसी तरह जो माल दरिया में गिर जाए और कुछ ज़माना के बाद निकल आये यानी मिल जाए तो जिस ज़माना तक गिरा रहा, उस ज़माना की ज़कात फ़र्ज़ नहीं, इसी तरह जो माल किसी जंगल में दफ़्न कर दिया गया हो और उसका मक़ाम याद न हो और कुछ ज़माना के बाद याद आ जाए तो जितने ज़माना तक भूला रहा उसकी ज़कात फ़र्ज़ नहीं, हाँ अगर किसी मकान में दफ़्न किया गया हो और उसका मक़ाम याद न रहे और फिर याद आ जाए तो जिस ज़माना में भूला रहा उसकी ज़कात फ़र्ज़ होगी क्योंकि वह क़ब्ज़े से बाहर नहीं हुआ। इसी तरह जो माल किसी के पास अमानत रखा गया हो और भूल जाए कि किस के पास रखा था और फिर याद आ जाए तो जिस ज़माना तक भूला रहा उसकी ज़कात फ़र्ज़ न होगी; बशर्तेकि वह शख़्स जिस के पास अमानत रखी गई थी अजनबी हो, अगर किसी जाने हुए आदमी के पास अमानत रखी जाये और याद न रहे तो

उस भूले हुए ज़माना की ज़कात भी फ़र्ज़ होगी, इसी तरह अगर किसी को कुछ क़र्ज़ दिया जाये और क़र्ज़दार इनकार कर जाये और कोई तहरीर या गवाही उसकी न हो ख़्वाह क़र्ज़दार मालदार हो या मुफ़्लिस, फिर चंद रोज़ के बाद वह लोगों के सामने या क़ाज़ी के रूबरू इक़रार कर ले तो उस इनकार के ज़माना की ज़कात फ़र्ज़ न होगी।

इसी तरह जो माल किसी से जुलमन छीन लिया जाये और फिर कुछ अरसा के बाद वह उसको मिल जाये तो जिस ज़माना तक वह उसको नहीं मिला, उस ज़माना की ज़कात उस पर फ़र्ज़ नहीं होगी। हासिल ये कि जब माल क़ब्ज़ा या मिल्क से निकल जाए तो ज़कात फ़र्ज़ न रहेगी। ज़कात फ़र्ज़ होने के लिए क़ब्ज़ा और मिल्क दोनों का होना शर्त है।

(12) माल में इन तीन वस्फ़ों में से एक वस्फ़ का पाया जाना। (1) नक़दीयत (2) सौम (बढ़ने वाली) (3) नीयते तिजारत। सोने और चांदी में नक़दीयत पाई जाती है, लिहाज़ा उनमें बहरहाल ज़कात फ़र्ज़ होगी, ख़्वाह नीयत तिजारत की हो या न हो और ख़्वाह सोना, चांदी मसकूक हो या ग़ैर मसकूक, ख़्वाह उसके ज़ेवर या बरतन बनाए गए हों। माल में अगर तिजारत की नीयत की जाये तो ज़कात होगी वरना नहीं, ख़्वाह माल कितना ही क़ीमती हो और अज़ क़िस्मे जवाहर ही क्यों न हो। तिजारत की नीयत माल के ख़रीदते वक़्त होना चाहिए। अगर बाद ख़रीदने के नीयत की जाये वह क़ाबिले एतेबार नहीं है तावक़्ते कि उसकी तिजारत शुरू न कर दी जाये अगर

कोई माल तिजारत के लिए ख़रीदा गया हो और ख़रीदने के बाद ये नीयत न रहे तो वह माल तिजारती न रहेगा और उस पर ज़कात फ़र्ज़ न रहेगी फिर उसके बाद अगर नीयत की जाये तो वह क़ाबिले एतेबार न होगी जब तक कि उसकी तिजारत न कर दी जाये।

(13) उस माल में कोई दूसरा हक़ मसलन उश्र या ख़िराज के वाजिब न हो। अगर उश्र या ख़िराज उस माल पर होगा तो फिर उस पर ज़कात फ़र्ज़ न होगी, क्योंकि दो हक़ एक माल पर फ़र्ज़ नहीं होते।

(इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–4 सफ़्हा–21)

अदाएगीए ज़कात की शर्तें

(1) मुसलमान होना। काफ़िर का ज़कात देना सही नहीं, अगर कोई काफ़िर अपने माल की कई साल पेशगी ज़कात दे दे और उसके बाद मुसलमान हो जाये तो वह ज़कात देना उसके लिए काफ़ी न होगा, बल्कि उसको फिर ज़कात देना होगी।

(2) आक़िल होना, मजनून और नाक़िसुलअक़्ल की ज़कात सही नहीं।

(3) बालिग़ होना, नाबालिग़ की ज़कात सही नहीं।

(4) ज़कात का माल फ़क़ीर को देते वक़्त ज़कात की नीयत करना, यानी दिल में ये इरादा करना कि मेरे ऊपर जिस क़दर माल का देना फ़र्ज़ था महज़ अल्लाह तआला की ख़ुश नूदी के लिए देता हूं अगर कोई ज़कात देने के बाद नीयत करे और माल फ़क़ीर यानी जिस को ज़कात को का माल दिया है अभी तक उसके पास मौजूद है तो ये नीयत सही हो गाएगी। और अगर माले ज़कात फ़क़ीर

के पास ख़र्च हो चुका है तो नीयत सही न होगी और फिर उसको दोबारा ज़कात देना होगी, अगर कोई शख़्स अपने वकील (मैनेजर, मुनीम, मुंशी, मोतमद) को ज़कात का माल तक़सीम करने के लिए दे और देते वक़्त ज़कात की नीयत कर ले तो दुरुस्त है, ख़्वाह वकील फ़क़ीरों को देते वक़्त नीयत करे या न करे (कोई हरज नहीं) अगर कोई शख़्स अपने माल में से ज़कात का माल अलाहिदा कर ले, अलाहिदा करते वक़्त ज़कात की नीयत दिल में हो तो ये नीयत काफ़ी है। गो फ़क़ीरों को देते वक़्त नीयत न भी करे।

(5) ज़कात के माल को जिस शख़्स को दिया जाये उसको मालिक और क़ाबिज़ बना देना, अगर कोई शख़्स कुछ खाना पकवा कर फ़क़ीरों को अपने घर में जमा कर के खिला दे और नीयत ज़कात की करे तो सही न होगा, हां अगर वह खाना फ़क़ीरों को दे दे और उन्हें इख़्तियार दे कि इसको जो चाहें करें, जहां चाहें खायें तो फिर दुरुस्त है।

(6) ज़कात का माल ऐसे शख़्स को देना जो उसका मुस्तहिक़ हो। (इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–4 सफ़्हा–21)

माल के ज़ाऐ होने पर ज़कात का हुक्म

ज़कात वाजिब हो जाने के बाद अगर माल हलाक (ज़ाए) हो जाए तो ज़कात साक़ित हो जाएगी। ख़्वाह ज़कात के देने का वक़्त आ गया हो और हाकिमे वक़्त की तरफ़ से उसका मुतालबा भी किया गया हो और उसने किसी वजह से ज़कात न दी हो। हां अगर ख़ुद हलाक कर दे तो फिर उसको ज़कात देना ज़रूरी होगी।

मसलन जानवरों को चारा (घांस) पानी न दे और वह मर जायें या किसी माल को क़स्दन ज़ाए कर दे, किसी को क़र्ज़ या आरियत देने के बाद अगर माल तलफ़ हो जाये तो उसका शुमार हलाक करने में न होगा और उसकी ज़कात साकित हो जाएगी।

तिजारती माल को तिजारती माल से बदल लेने के बाद माल ख़ुद हलाक हो जाए तो उस बदल लेने में ज़कात साकित हो जाएगी। तिजारती माल को ग़ैर तिजारती माल से बदल लेना, इसी तरह साइमा जानवर को दूसरे साइमा जानवर से बदल लेना हलाक कर लेना है और इससे ज़कात साकित न होगी। (इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–4 सफ़्हा–29 व आलमगीरी जिल्द–2 सफ़्हा–40)

मदहोश पर ज़कात का हुक्म

मस्अला: जो शख़्स बेहोश है ख़्वाह उस पर मुसलसल साल भर तक बेहोशी तारी रहे, ज़कात वाजिब होगी। जबकि साहबे निसाब हो।

(फ़तावा आलमगीरी जिल्द–4 सफ़्हा–6)

बच्चे और पागल पर ज़कात का हुक्म

मस्अला: नाबालिग़ शरई के माल में ज़कात वाजिब नहीं है और नुसूस से बच्चे का ग़ैर मुकल्लफ़ होना और मरफ़ूउलक़लम होना साबित है और वाजिब न होना नमाज़ व रोज़ा व हज और जुमला इबादात वग़ैरा का नाबालिग़ पर, ये भी दलील अदमे वजूबे ज़कात की है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–43)

मस्अला: हनफ़ीया (रह.) के नज़दीक नाबालिग़ बच्चे और मजनून के माल में ज़कात वाजिब नहीं है लिहाज़ा

उनके वलियों से उसके अदा करने का मुतालबा नहीं किया जाएगा, क्योंकि ये महज़ इबादत है, बच्चे और मजनून इस हुक्म के मुख़ातब नहीं हैं। अलबत्ता उनके माल से क़र्ज़ और नफ़्क़ा (ज़रूरी ख़र्चा का) अदा करना वाजिब है क्योंकि ये बंदों के हुकूक़ हैं। अलबत्ता ज़मीन की पैदावार का दसवां हिस्सा और सदक़ए फ़ित्र वाजिब है क्योंकि ये गुज़ारा देने की मानिन्द है, लिहाज़ा उसको हुकूकुलइबाद में शामिल किया गया है और फ़ातिरुलअक़्ल (पागल) के माल का वही हुक्म है जो बच्चे के माल का है। उसके माल में ज़कात वाजिब नहीं।

(किताबुलफ़िक़्ह अललमज़ाहिबिलअरबआ जिल्द–1 सफ़्हा–960 व फ़िक़्हुज़्ज़कात जिल्द–1 सफ़्हा–142)

मस्अला: नाबालिग़ीन का हिस्सा जो बतौरे अमानत उनके सरपरसतों के पास हो। उसमें ज़कात लाज़िम नहीं। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–76, बहवाला तहतावी जिल्द–1 सफ़्हा–389 व अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–268)

मस्अला: जब बच्चा बालिग़ हो तो वक़्ते बलूग़ से इब्तिदा शुरू हो जाएगी। (आलमगीरी जिल्द–4 सफ़्हा–6)

मस्अला: हुकूमत अगर नाबालिग़ बच्चे के माल (जमा शुदा) से ज़कात काट लेती है तो ये सही नहीं है।

(आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–345)

मस्अला: ज़कात बालिग़ पर वाजिब है और बुलूग़ की ख़ास अलामतें मशहूर हैं अगर लड़का या लड़की पन्द्रह साल के हो जाएं मगर कोई अलामत बुलूग़ की ज़ाहिर न हो तो पन्द्रह साल की उम्र होने पर वह बालिग़ तसव्वुर

किए जाऐंगे। (आप के मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–344)

ज़कात हिजरी साल से है या ईस्वी से?

मस्अला: एक साल की पूरी मुद्दत गुज़र जाने का मतलब ये है कि ज़कात उस वक़्त तक वाजिबुलअदा नहीं होती जब तक किसी शख़्स को उस माल का मालिक बने रहने की मुद्दत एक साल न हो जाये और साल से मुराद क़मरी (चांद) के हिसाब का साल है, शम्सी (अंग्रेज़ी) हिसाब का साल नहीं। क्योंकि क़मरी हिसाब से एक साल तीन सौ चौव्वन (354) दिन होता है और शम्सी साल कभी तीन सौ पैंसठ दिन का होता है और कभी एक दिन उससे ज़्यादा होता है।

(किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–964)

मस्अला: ज़कात के अदा करने में क़मरी साल का एतेबार है, शम्सी साल का एतेबार नहीं। अब या तो क़मरी साल के एतेबार से अदा करना चाहिए और अगर शम्सी साल के एतेबार से अदा करना ही नागुज़ीर हो तो दस दिन की ज़कात मज़ीद अदा करनी चाहिए।

(आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–362, फ़तावा आलमगीरी जिल्द–4 सफ़्हा–13 व दुर्रेमुख़्तार जिल्द–2 सफ़्हा–50 व किफ़ायतुल मुफ़्ती जिल्द–4 सफ़्हा–145)

ज़कात में महीना का एतेबार है या तारीख़ का?

मस्अला: ज़कात के हिसाब के लिए तारीख़ का एतेबार है, जिस तारीख़ को साल पूरा हो जाये उसी तारीख़ में ज़कात वाजिब होगी, जिस वक़्त भी ज़कात अदा करेगा एतेबार उसी तारीख़े वजूब का रहेगा। अगले साल उसी तारीख़ में ज़कात वाजिब हो जाएगी जिस तारीख़ पर

पिछले साल वाजिब हुई थी।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–75, बहवाला मिश्कात शरीफ़ जिल्द–1 सफ़्हा–157)

मस्अला: अस्ल हुक्म तो ये है कि जिस तारीख़ से आप साहबे निसाब हुए, एक साल के बाद उसी तारीख़ को आप पर ज़कात फ़र्ज़ होगी, ताहम ज़कात पेशगी अदा करना भी जाइज़ है और उसमें ताख़ीर की भी गुंजाइश है। इसलिए कोई तारीख़ मुक़र्रर कर ली जाए। अगर कुछ आगे या पीछे हो जाये तब भी कोई हरज नहीं।

(आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–368 व आलमगीरी जिल्द–4 सफ़्हा–5)

ज़कात का साल शुमार करने का उसूल

मस्अला: जिस तारीख़ को किसी शख़्स के पास निसाब के बक़द्र माल आ जाए उसी तारीख़ से चांद के हिसाब से पूरा साल गुज़ारने पर जितनी रक़म उसकी मिलकियत हो। उसकी ज़कात वाजिब है।

(आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–367)

मस्अला: शरई मस्अला ये है कि साल के किसी महीने में भी जिस तारीख़ को कोई शख़्स निसाब का मालिक हुआ हो, एक साल गुज़रने के बाद उसी तारीख़ को उस पर ज़कात वाजिब हो जाऐगी। ख़्वाह मुहर्रम हो या कोई और महीना हो और उस शख़्स को साल पूरा होने के बाद उस पर ज़कात अदा करना लाज़िम है।

(आप के मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–367)

साहबे निसाब को अगर तारीख़ याद न रहे

आप क़मरी माह की जिस तारीख़ को साहबे निसाब

हुए थे हमेशा वही तारीख़ आप की ज़कात के हिसाब के लिए मुतअय्यन रहेगी, उस तारीख़ में आप के पास सोना, चांदी, माले तिजारत और नक़दी जो कुछ भी हो ख़्वाह एक रोज़ क़ब्ल मिला हो सब पर ज़कात फ़र्ज़ होगी, ज़कात का हिसाब हमेशा उसी तारीख़ में होगा, अदा जब चाहें करें। (जल्दी अदा करना बेहतर है, मौत का इत्मीनान नहीं) अगर दरमियान साल में बक़द्रे निसाब माल नहीं रहा मगर मुतअय्यन तारीख़ में निसाब पूरा हो गया तो भी ज़कात फ़र्ज़ है। अलबत्ता अगर दरमियान में माल बिल्कुल न रहा तो अब फिर जिस तारीख़ में साहबे निसाब होंगे वह मुतअय्यन होगी, अगर साहबे निसाब बनने की क़मरी तारीख़ याद न हो तो ग़ौर व फ़िक्र के बाद जिस तारीख़ का ज़न्ने ग़ालिब हो वह मुतअय्यन होगी, अगर किसी तारीख़ का भी ज़न्ने ग़ालिब न हो तो खुद कोई क़मरी तारीख़ मुतअय्यन कर लें।

(अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–255)

इख़्तितामे साल का एतेबार है

मस्अला: क़मरी साल के ख़त्म होने पर जिसके पास जितना माल हो उस पर ज़कात वाजिब हो जाएगी। मसलन किसी का साले ज़कात यकुम मुहर्रम से शुरू होता है, तो अगले साल यकुम मुहर्रम को उसके पास जितना माल हो, उस पर ज़कात अदा करे, ख़्वाह उसमें कुछ हिस्सा दो महीने पहले मिला हो या दो दिन पहले। अलग़रज़ साल के दौरान जो माल अता रहे उस पर साल गुज़रने का हिसाब अलग से नहीं लगाया जाएगा बल्कि जब अस्ल निसाब पर साल पूरा होगा, तो साल के इख़्तिताम पर

जिस क़दर भी सरमाया हो, उस पूरे सरमाया पर ज़कात वाजिब हो जाऐगी ख़्वाह उसके कुछ हिस्सों पर साल पूरा न हुआ हो। (आप के मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–362)

ज़कात न अदा करने पर अगले साल का शुमार कब से?

सवाल: गुज़श्ता साल ज़कात अदा नहीं की जा सकी, दूसरा साल शुरू हो गया तो नए साल का हिसाब किस तरह किया जाए?

जवाब: जिस तारीख़ को पहला साल ख़त्म हुआ, उस दिन जितनी मालियत थी, उस पर पहले साल की ज़कात फ़र्ज़ होगी। अगले दिन से दूसरा साल शुरू समझा जाएगा।

(आप के मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–368)

क्या रमज़ान में ही ज़कात देना चाहिए?

मस्अला: रमज़ान शरीफ़ के अलावा और महीनों और दिनों में ज़कात देना दुरुस्त है, रमज़ान शरीफ़ की उसमें कुछ तख़सीस नहीं है। बल्कि जिस वक़्त भी माल पर साल पूरा हो उसी वक़्त ज़कात देना बेहतर है।

अलबत्ता जिनका साल ज़कात का रमज़ानुलमुबारक में पूरा हो वह रमज़ान में ज़कात दे दे, ये ज़रूर है कि रमज़ानुलमुबारक में ज़कात देने में सवाब सत्तर गुना ज़्यादा होता है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–100)

मस्अला: अदाए ज़कात के लिए शरअन कोई महीना या कोई दिन मुक़र्रर नहीं, अलबत्ता बाज़ महीनों और दिनों की फ़ज़ीलत को उसमें दख़ल ज़रूर है, यानी जो महीना फ़ी नफ़्सिही मुतबर्रक है जैसे रमज़ानुलमुबारक कि उसमें सदक़ात वग़ैरा की अदाएगी भी अफ़ज़ल है हां ज़रूरत इसकी है कि जिस महीना में अदाए ज़कात वाजिब है

उस महीना में अदा करे और फिर उस महीना को मुक़र्रर कर ले।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़हा–72, बहवाला शामी जिल्द–2 सफ़हा–15)

ज़कात को रमज़ान तक रोकना कैसा है?

मस्अला: ज़कात के अदा करने में एक मिसाल हिसाब के ग़लत होने की बहुत बारीक है वह ये कि अक्सर लोगों की आदत है कि रमज़ान में एक फ़र्ज़ का सवाब सत्तर फ़र्ज़ के बराबर है इसलिए रमज़ानुलमुबारक में ज़कात निकालते हैं और फिर रमज़ान ही से सिलसिला हिसाब का रखते हैं। फिर कभी तो ऐसा होता है कि निसाब के मालिक होने की तारीख़ से जो साल शुरू हुआ है वह रमज़ान से तीन चार माह पहले मसलन ख़त्म हो गया था तो उस शख़्स ने रमज़ान शरीफ़ से हिसाब रखने के लिए उन तीन चार माह की ज़कात भी दे दी। फिर आइंदा के लिए रमज़ान से रमज़ान तक हिसाब जारी रखा।

और कभी ऐसा होता है कि रमज़ान से तीन चार माह बाद साल ख़त्म होता है, तो ये रमज़ान में ज़कात अदा कर के अपने को जल्दी सुबुकदोश समझ लेता है मगर ग़लती इसमें ये होती है कि जब रमज़ान में ये शख़्स ज़कात निकालता है तो जितना माल रमज़ान शरीफ़ में उसकी मिल्क में है ये उसी की ज़कात निकालता है, हालांकि एहतिमाल है कि जो ख़त्मे साल उसका वाक़ई है उसमें निसाब उस वक़्त से ज़्यादा हो और ज़कात वाक़ेअ में उसी ज़्यादा हिसाब से वाजिब होगी तो इस तौर पर हिसाब से कुछ ज़्यादा ज़कात उसके ज़िम्मा रह,

जाएगी और इस तरह से ये हिसाब ग़लत हो जाएगा। मसलन उसका साल रजब में ख़त्म होता है और उस वक़्त उसके पास एक हज़ार रुपया था, जिसकी ज़कात पच्चीस रुपया होती है और रमज़ान शरीफ़ में उसके पास आठ सौ रुपये रह गए जिसकी ज़कात बीस रुपये होती है, तो अब अगर उस शख़्स ने उसी वक़्त का निसाब देख कर बीस रुपये अदा किए, तो पांच रुपये उसके ज़िम्मा रह गए, इसी तरह अगर उसका साल ज़िलहिज्जा में ख़त्म होता है और रमज़ान में उसके पास आठ सौ रुपये थे मगर ज़िलहिज्जा में हज़ार हो गए तब भी बिऐनिही यही ग़लती हुई, इसी तरह हर ख़त्म साल पर यही एहतिमाल है।

सो फ़र्ज़ कीजिए अगर इत्तिफ़ाक़ से पांच साल तक यही क़िस्सा रहा कि ख़त्मे साल पर तो हज़ार रुपये होते हैं और रमज़ान में आठ सौ रुपये, तो पांच रुपये साल में जमा हो कर पांच साल में पच्चीस रुपये उसके ज़िम्मे वाजिबुलअदा रहे, तो ये ऐसा हो गया जैसे पांच साल में चार साल की ज़कात दी और एक साल में न दी, इसलिए ये ज़रूर है कि ख़त्मे साल पर के निसाब को ज़रूर देखा जाए और उसकी ज़कात की मिक़्दार को याद रखे, फिर अगर साल रमज़ान से पहले ख़त्म हुआ है तो रमज़ान शरीफ़ में इस मिक़्दार के बराबर ख़्याल कर के ज़कात दे और अगर रमज़ान के बाद साल ख़त्म होता है तो रमज़ान में जितना अंदाज़ से दिया है उसको याद रखें फिर ख़त्मे साल पर जितनी मिक़्दार ज़कात की है, उस अदा की हुई को उससे मिला दे, अगर कुछ अदा करने से रह

गया हो तो पूरा करे और अगर ज़्यादा दे दिया हो तो अगले साल में लगा लेना जाइज़ है।

(इमदादुलफ़तावा मसाइले ज़कात अज़ सफ़्हा–34, 36)

ज़कात का निसाब क़दीम व जदीद औज़ान से

मस्अला: चांदी का निसाब दो सौ दिरहम यानी बक़द्रे साढ़े बावन तोला है और सोने का निसाब साढ़े सात तोला सोना है, और अगर ज़ेवर दोनों तरह का हो तो सोने की क़ीमत कर के चांदी में शामिल कर के ज़कात अदा की जाएगी। और ज़कात में चालीसवाँ हिस्सा देना वाजिब है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–43 बहवाला हिदाया बाब ज़कातुलमाल जिल्द–1 सफ़्हा–177)

मस्अला: सोने का निसाब साढ़े सात तोला सोना और मौजूदा औज़ान से सत्तासी ग्राम, चार सौ उन्यासी मिली ग्राम, उस शख़्स के लिए जिसके पास सिर्फ़ सोना हो, चांदी, माले तिजारत और नक़्दी में से कुछ भी न हो, इसी तरह चांदी का निसाब साढ़े बावन तोला है और मौजूदा वज़न से छः सौ बारह ग्राम पैंतीस मिली ग्राम उस सूरत में है कि सिर्फ़ चांदी हो, सोना, माले तिजारत और नक़्दी (यानी कैश) बिल्कुल ने हो, अगर सोने या चांदी के साथ कोई दूसरा माले ज़कात भी है तो सब की क़ीमत लगाई जाएगी, अगर सब की मालियत सत्तासी ग्राम चार सौ उन्यासी मिली ग्राम सोने या छः सौ बारह ग्राम पैंतीस मिली ग्राम चांदी की क़ीमत के बराबर हो तो ज़कात फ़र्ज़ है।

ख़ुलासए निसाब

ज़कात के निसाब का ख़ुलासा ये है कि सोना साढ़े

सात तोला सत्तासी ग्राम चार सौ उन्यासी मिली ग्राम, या चांदी साढ़े बावन तोला छः सौ बारह ग्राम पैंतीस मिली ग्राम या माले तिजारत या नक़्दी या इन चारों चीज़ों (सोना, चांदी, माले तिजारत, नक़्दी) में से बाज़ का मजमूआ सोने या चांदी के वज़्ने मज़कूर की क़ीमत के बराबर हो। (अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–254 व फ़िक़्हुज़्ज़कात जिल्द–1 सफ़्हा–201)

ज़कात का निसाब कौन सा मोतबर है?

मस्अला: निसाबे चांदी यानी जिस मिक़्दार पर ज़कात साढ़े बावन तोला (612 ग्राम 35 मिली ग्राम) होता है, क्योंकि शरीअ़त में दराहिम के अन्दर वज़्ने सबआ मोतबर है और उसकी तसरीह फ़ुक़्हा की किताबों में है और वज़्ने सबआ ये है कि दस दिरहम बराबर सात मिस्क़ाल के हों, इस हिसाब से दो सौ दिरहम बराबर एक सौ चालीस मिस्क़ाल के हो गए और मिस्क़ाल का वज़्न मशहूर साढ़े चार माशा है।

चुनांचे इसकी तसरीह बहुत जगह मौजूद है और उलमाए किबार ने इसको इख़्तियार किया है। पस दो सौ दिरहम बराबर छः सौ तीस माशा के हुए और उसको बारह पर तक़्सीम करने से साढ़े बावन तोला ख़ारिज क़िस्मत निकला, यही निसाबे फ़िक़्ह है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–79, बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–38)

निसाब के क्या माना हैं?

निसाब माल की वह ख़ास मिक्दार है जिस पर शरीअ़त ने ज़कात फ़र्ज़ की है। मसलन ऊँट के लिए पांच और पच्चीस वग़ैरा के आदाद और बकरी के लिए चालीस

और एक सौ इक्कीस वग़ैरा का अदद और चांदी के लिए दो सौ दिरहम और सोने के लिए बीस मिस्क़ाल।

(आलमगीरी जिल्द–4 सफ़्हा–7)

चांदी के निसाब को मेयार बनाने की वजह

सवालः आम तौर पर ज़कात के लिए शर्ते निसाब जो सुनने में आती है वह है साढ़े बावन तोला चांदी या साढ़े सात तोला सोना या उनकी मालियत। मालूम ये करना है कि एक शख़्स के पास न सोना है न चांदी बल्कि पांच हज़ार रुपये नक़द हैं। उसे किस निसाब पर अमल करना चाहिए, सोने पर या चांदी पर?

जवाबः आप के सवाल के सिलसिले में चंद बातें समझ लेना ज़रूरी हैं। औवल किस माल में कितनी मिक़्दार वाजिबुलअदा है? किस माल में कितने निसाब पर ज़कात वाजिब होती है? ये बात महज़ अक़्ल व क़यास से मालूम नहीं हो सकती, बल्कि उसके लिए हमें आँहज़रत (स.अ.व.) के इरशादात की तरफ़ रुजूअ करना ज़रूरी है। पस आँहज़रत (स.अ.व.) ने जिस माल का जो निसाब मुक़र्रर फ़रमाया है उसको क़ाइम रखना ज़रूरी है और उसमें रद्दोबदल की गुंजाइश नहीं, ठीक उसी तरह जिस तरह कि नमाज़ की रकअ़त में रद्दोबदल की गुंजाइश नहीं।

दोमः ये कि आँहज़रत (स.अ.व.) ने चांदी का निसाब दो सौ दिरहम (यानी साढ़े बावन तोले, तक़रीबन छः सौ बारह ग्राम पैंतीस मिली ग्राम) और सोने का निसाब मिस्क़ाल साढ़े सात तोले यानी तक़रीबन चार सौ उन्यासी ग्राम 87 मिली ग्राम मुक़र्रर फ़रमाया। अब ख़्वाह सोने चांदी की क़ीमतों के दरमियान वह तनासुब जो आप (स.अ.व.) के

ज़माने में था क़ाइम रहे या न रहे सोने चांदी के उन निसाबों में तब्दीली करने का हमें हक़ नहीं। जिस तरह फ़ज्र की नमाज़ में दो के बजाए चार रकअतें और मग़रिब की नमाज़ में तीन के बजाए दो या चार रकअतें पढ़ने का कोई इख़्तियार नहीं।

सोम: जिसके पास नक़द रुपये पैसे हों या माले तिजारत हो तो ज़ाहिर है कि उसके लिए सोने चांदी में से किसी एक निसाब को मेयार बनाना होगा। रहा ये कि चांदी के निसाब को मेयार बनाया जाए या सोने के निसाब को? उसके लिए फ़ुक़्हाए उम्मत ने जो दरहक़ीक़त हुक्माए उम्मत हैं ये फ़ैसला दिया है कि उन दोनों में से जिसके साथ भी निसाब पूरा हो जाए उसी को मेयार बनाया जाएगा। मसलन चांदी की क़ीमत से निसाब पूरा नहीं होता (और यही आप के सवाल का बुनियादी नुकता है) तो चांदी की क़ीमत से हिसाब लगाया जाएगा और उसकी दो वजहें हैं। एक ये कि ज़कात फ़ुक़रा के नफ़ा के लिए है, और उसमें फ़ुक़रा का नफ़ा ज़्यादा है। दूसरे ये कि उसमें एहतियात भी ज़्यादा है कि जब कि नक़दी (कैश) चांदी के निसाब के साथ पूरा हो जाता है और दूसरे सोने के साथ निसाब पूरा नहीं होता तो एहतियात का तक़ाज़ा ये होगा कि जिस निसाब के साथ (सोने या चांदी के) पूरा हो जाता है। उसी का एतेबार किया जाए।

(आप के मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–356)

जब ये पता न हो कि कब से साहबे निसाब हुआ है?

मस्अला: गुमाने ग़ालिब के मुवाफ़िक़ जिस वक़्त से वह निसाब वाला हो गया है, उसी वक़्त ज़कात अदा

करनी चाहिए। गुज़श्ता सालों की ज़कात भी दी जाए और गुमाने ग़ालिब से सोच लिया जाए या क़राईन से अंदाज़ा लगाया जाए और एहतियातन कुछ ज़्यादा ही मुद्दत लगाई जाए। मसलन अगर ढाई साल का गुमान हो तो तीन साल की ज़कात दी जाए। अला हाज़लक़यास कुछ ज़्यादा हो जाए तो बेहतर है, सवाब ज़्यादा है और कम होने की सूरत में एताब का ख़ौफ़ है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–44, बहवाला दुर्रेमुख़्तार किताबुज़्ज़कात जिल्द–2 सफ़्हा–6)

ज़कात ग़फ़लत की वजह से न दी तो क्या हुक्म है?

मस्अला: अगर कोई साहबे निसाब एक साल ज़कात देने से ग़फ़लत की वजह से क़ासिर रहा तो दूसरे साल उसको मौजूदा और पिछले साल की ज़कात देनी चाहिए और हिसाब ये है कि पिछले साल के ख़त्म पर जिस क़दर माल व रुपये वग़ैरा हों, उसकी ज़कात दे दे और इस साल जिस क़दर रुपये वग़ैरा हैं उसकी ज़कात दे दे। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–65, बहवाला दुर्रेमुख़्तार जिल्द–2 सफ़्हा–9)

साहबे निसाब को जो माल दौराने साल हासिल हुआ

सवाल: मेरे पास साल भर से कुछ रक़म थी जो ख़र्च होती रही, शौवाल के महीने में माहे रजब तक मेरे पास दस हज़ार रुपये बचे और रजब में ही 35 हज़ार रूपये की आमदनी हुई। क्या रमज़ानुलमुबारक में सिर्फ़ दस हज़ार की ज़कात निकालनी होगी या 35 हज़ार भी उसमें शामिल किए जाएंगे? जबकि 35 हज़ार को सिर्फ़ तीन माह का अरसा गुज़रा है?

जवाबः जो आदमी एक बार निसाब का मालिक हो जाए तो जब उस निसाब पर एक साल गुज़रेगा तो साल के दौरान हासिल होने वाले कुल सरमाया पर ज़कात वाजिब होगी। हर रक़म पर अलग अलग साल गुज़रना शर्त नहीं, इसलिए रमज़ानुलमुबारक में आप पर कुल रक़म की ज़कात वाजिब होगी जो उस वक़्त आप के पास हो।

(आप के मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–356 व इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–4 सफ़्हा–30)

ज़कात का निसाब नक़द में कितना है?

सवालः किसी शख़्स के पास सोने व चांदी का मुक़र्रर करदा निसाब नहीं है तो फ़ी ज़मानिना कितने रुपये नक़द होने से ज़कात फ़र्ज़ होगी?

जवाबः जितने रुपये में साढ़े बावन तोला चांदी ख़रीदी जा सके, उतने रुपये के मालिक को साहबे निसाब (निसाब वाला शख़्स) क़रार दिया जाएगा और ज़कात माल का चालीसवां हिस्सा निकालना होगी।

(बहिश्ती ज़ेवर जिल्द–3 सफ़्हा–23, बहवाला दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़्हा–134 व फ़तावा रहीमिया जिल्द–3 सफ़्हा–213 व फ़तावा महमूदिया जिल्द–3 सफ़्हा–50)

नक़द के साथ निसाब से कम सोने का हुक्म

सवालः अगर किसी के पास अड़सठ हज़ार रुपये और छः तोला सोना है तो उस सोने पर भी ज़कात दी जाये या सिर्फ़ नक़द रुपये की?

जवाबः इस सूरत में ज़कात सोने पर भी वाजिब है। साल पूरा होने के दिन जो क़ीमत हो उसके हिसाब से छः तोला सोने की मालियत को भी रक़म में शामिल कर

के ज़कात अदा की जाए।

(आप के मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–356)

निसाब से कम सोने का हुक्म

मस्अला: अगर किसी के पास सिर्फ़ निसाब से कम सोना हो, उसके साथ चांदी या नक़द रुपये (कैश) और दीगर क़ाबिले ज़कात चीज़ें न हों तो साढ़े सात तोला (87 ग्राम 479 मिली ग्राम) से कम सोने पर ज़कात नहीं है। (आप के मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–359)

निसाब से कम सोने व चांदी का हुक्म

सवाल: एक औरत के पास कुछ ज़ेवर चांदी का है और कुछ साने का। मगर दोनों निसाब से कम हैं तो ज़कात का क्या हुक्म है?

जवाब: इस सूरत में क़ीमत का हिसाब लगा कर ज़कात वाजिब होगी। मसलन सोने को चांदी की क़ीमत में कर के कुल मजमा को देखा जाएगा। अगर निसाब चांदी का पूरा हो गया तो ज़कात लाज़िम होगी।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–123, बहवाला बहर्रुराइक़ जिल्द–2 सफ़्हा–230)

"यानी सोने की क़ीमत को देखा जाएगा कि उस क़ीमत से क्या बावन तोला चांदी आ सकती है, अगर आ जाए तो ज़कात वाजिब है।"

(मुहम्मद रफ़अत क़ासमी)

क़ीमत बढ़ कर निसाब को पहुंच जाने का हुक्म

मस्अला: अगर किसी शख़्स के पास कोई तिजारती माल हो मगर उसकी क़ीमत निसाब से कम हो तो फिर चंद रोज़ के बाद उस चीज़ के गिरां (मंहगी) हो जाने के

सबब उसकी क़ीमत बढ़ कर बक़द्र निसाब के हो जाए तो जिस वक़्त से क़ीमत बढ़ी है उसी वक़्त से उसके साल की इब्तिदा समझी जाएगी।

मस्अला: हर चीज़ का नफ़ा जो साल के अन्दर हासिल हुआ हो, उसको अस्ल के साथ मिला लिया जाएगा और अख़ीर साल में जब उसकी अस्ल की ज़कात भी दी जाएगी तो उसकी ज़कात भी दी जाएगी। गो उस पर साल पूरा नहीं गुज़रा। (इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–4 सफ़्हा–30)

दो निसाबों का हुक्म

अगर किसी शख़्स के पास एक माल के दो निसाब ऐसे हों कि एक दूसरे के साथ मिलाया नहीं जा सकता मसलन ज़कात दिए हुए जानवरों की क़ीमत का कुछ रुपया हो और कुछ रुपया उसके अलावा हो, फिर उसको कहीं से कुछ रुपया और मिल जाए तो ये रुपया उस रुपये के साथ मिला लिया जाएगा जिसका साल ख़त्म होता हो, यानी अगर बकरियों की क़ीमत के रुपये का साल पहले ख़त्म होता हो तो ये रुपया उसके साथ मिला लिया जाएगा और अगर दूसरे रुपये का साल पहले ख़त्म होता हो तो ये रुपया उसके साथ मिला लिया जाएगा।

(इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–3 सफ़्हा–31)

साहबे निसाब की इजाज़त के बग़ैर ज़कात लेना?

मस्अला: एक शख़्स पर ज़कात वाजिब है मगर वह अदा नहीं करता, तो किसी मुहताज को ये इजाज़त नहीं कि बग़ैर उस साहबे माल की इत्तिला के उसके माल में से ज़कात की नीयत से कुछ रक़म ले ले, अगर किसी ज़रूरतमंद और मुहताज ने (ये हरकत की और इस तरह)

माल ले लिया तो मालिक को ये हक़ हासिल है कि उससे वह माल वापस ले ले, अगर फ़िलवक़्त उस मुहताज के पास मौजूद है और अगर मौजूद नहीं, ख़त्म हो गया तो वह फ़क़ीर (ज़बरदस्ती या बग़ैर इजाज़त लेने वाला) उसका ज़ामिन होगा।

(फ़तावा आलमगीरी जिल्द–4 सफ़्हा–28)

साहबे निसाब से ज़बरदस्ती ज़कात वसूल करना?

मस्अलाः ज़कात और चर्मे क़ुर्बानी व सदक़ए फ़ित्र का रुपया बिरादरी के चौधर (बड़े अफ़राद) अगर जबरन वसूल करें तो ये जाइज़ नहीं है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–286, बहवाला दुर्रेमुख़्तार जिल्द–2 सफ़्हा–46 व फ़तावा महमूदिया जिल्द–11 सफ़्हा–145)

> "बाज़ जगह ये दस्तूर और आपसी क़ानून पंचाइत का है कि कमेटी वाले या गाँव का चौधरी व परधान वग़ैरा ज़कात वग़ैरा साहबे निसाब से ज़बरदस्ती वसूल कर के तक़सीम करते हैं जो कि शरअन जाइज़ नहीं है, क्योंकि इसमें नीयत शर्त है वह यहां पाई नहीं जाएगी।"
>
> (मुहम्मद रफ़अत क़ासमी ग़ुफ़िरलहू)

ज़रूरते अस्लीया क्या है?

मस्अलाः जो माल आदमी के पास मौजूद हो वह उसकी हाजते अस्ली यानी उसकी बुनियादी ज़रूरीयाते ज़िन्दगी के अलावा हो, जैसे रिहाइशी मकानात, बदन के कपड़े, घरेलू सामान, सवारी के जानवर या मशीन, मोटर साईकल, कार वग़ैरा, ख़िदमतगार ग़ुलाम और इस्तेमाली हथयारों पर ज़कात वाजिब न होगी। ऐसे ही ख़ुर्दनी अशिया

पर और आराइशी ज़ुरूफ़ पर ज़कात वाजिब न होगी बशर्ते कि वह सोने चांदी के न हों, ऐसे ही जवाहरात, मोती, याकूत और ज़मुर्रद वग़ैरा अगर तिजारत के लिए न हों तो उन पर ज़कात वाजिब न होगी। इसी तरह अगर इख़राजात के लिए कुछ सिक्के ख़रीदे तो उन पर भी ज़कात वाजिब न होगी। इसी तरह अह्ले इल्म की किताबों पर (जो ज़ाती मुतालआ व इस्तिफ़ादा के लिए हों) और पेशावरों के आलाते कार करदगी पर ज़कात वाजिब नहीं। ये सब ज़रूरते अस्लीया में दाख़िल होंगी।

(फ़तावा आलमगीरी उर्दू जिल्द–4 सफ़्हा–7 व इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–4 सफ़्हा–14)

क्या औलाद का निकाह हवाइजे अस्लीया में दाख़िल है?

मस्अला: हामिदन व मुसल्लियन, औलाद अगर बालिग़ है तो उसका निकाह बाप के ज़िम्मा फ़र्ज़ नहीं, बल्कि निकाह की ज़िम्मादारी शरअ़न औलाद (लड़कों) पर ख़ुद है, अगर औलाद नाबालिग़ है तो उसके निकाह का शरअ़न ज़रूरी न होना ज़ाहिर है।

औलाद का निकाह हवाइजे अस्लीया में दाख़िल नहीं, सिर्फ़ अदमे बुलूग़ की हालत में बाप के ज़िम्मा नफ़क़ा (ज़रूरी ख़र्चा) वाजिब होता है, वह भी जबकि ख़ुद औलाद की मिल्क में इतना माल न हो कि जिसके ज़रीए से नफ़क़ा पूरा हो सके, अगर औलाद की मिल्क में माल है तो नफ़क़ा बाप के ज़िम्मा नहीं बल्कि उस माल से दिया जाएगा। (फ़तावा महमूदिया जिल्द–3 सफ़्हा–93, बहवाला ज़ैलई जिल्द–3 सफ़्हा–62)

मस्अला: औलाद नाबलिग़ या बालिग़ माज़ूरीन का

नफ़क़ा (ज़रूरी ख़र्चा) तो बाप के ज़िम्मा है, इसलिए महज़ नफ़क़ा हवाइजे अस्लीया में दाख़िल है, लेकिन उनकी शादियों के रस्मी इख़राजात का तसव्वुर हवाइजे अस्लीया में दाख़िल नहीं है और न वह मानेअ़ वजूबे ज़कात है।

(किफ़ायतुलमुफ़्ती जिल्द–4 सफ़्हा–144)

ज़कात किन चीज़ों पर है?

सवाल: ज़कात किस किस चीज़ पर फ़र्ज़ है?

जवाब: ज़कात मुनदरजा ज़ैल चीज़ों पर फ़र्ज़ है–

(1) सोना जब कि साढ़े सात तोला (87.479 ग्राम) या उससे ज़्यादा हो।

(2) चांदी जब कि साढ़े बावन तोला (35.612 ग्राम) या उससे ज़्यादा हो।

(3) रुपये, पैसे और माले तिजारत, जब कि उसकी मालियत साढ़े बावन तोला चाँदी (35.612 ग्राम) के बराबर हो।

नोट: अगर किसी के पास थोड़ा सा सोना है, कुछ चांदी है, कुछ नक़द रुपये हैं, कुछ माले तिजारत है, और उनकी मजमूई मालियत साढ़े बावन तोले (35.612 ग्राम) चांदी के बराबर है तो उस पर भी ज़कात फ़र्ज़ है। इसी तरह अगर कुछ सोना है, कुछ चांदी है या कुछ नक़दी रुपया है या कुछ चांदी कुछ माले तिजारत है तब भी उनको मिला कर देखा जाएगा कि साढ़े बावन तोला चांदी की मालियत बनती है या नहीं? अगर बनती हो तो ज़कात वाजिब है वरना नहीं। अलग़रज़ सोना, चांदी, नक़दी, माले तिजारत में से दो चीज़ों की मालियत जब चांदी के निसाब के बराबर हो तो उस पर ज़कात फ़र्ज़ है।

(4) इन चीज़ों के अलावा चरने वाले मवेशियों पर भी ज़कात फ़र्ज़ है और भेड़ बकरी गाय, भैंस और ऊँट के अलग अलग निसाब हैं।

(5) उश्री ज़मीन की पैदावार पर भी ज़कात फ़र्ज़ है जिसको उश्र कहा जाता है।

(आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–354 व अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–287 व किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–968 व इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–4 सफ़्हा–22)

क्या ज़कात हर साल है?

मस्अला: जिस रुपये और ज़ेवर पर एक साल ज़कात दी जाएगी, जब दूसरा साल पूरा होगा फिर ज़कात देना लाज़िम है। हर साल ज़कात वाजिबुलअदा होती है, ख़्वाह उस रुपये से कुछ नफ़ा हुआ हो या न हुआ हो। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–47, बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–13 किताबुज़्ज़कात व किफ़ायतुलमुफ़्ती जिल्द–4 सफ़्हा–144)

ज़कात अदा करने में ताख़ीर करना कैसा है?

मस्अला: जब माल पर पूरा साल गुज़र जाए तो फ़ौरन अदा कर दे, नेक काम में देर लगाना अच्छा नहीं कि शायद अचानक मौत आ जाए और ये मुआख़ज़ा अपनी गर्दन पर रह जाए और अगर साल गुज़रने पर ज़कात अदा नहीं की, यहां तक कि दूसरा साल भी गुज़र गया तो गुनाह हुआ, अब तौबा कर के दोनों सालों की ज़कात दे दे, बाक़ी न रखे।

ग़रज़ अपनी ज़िन्दगी में गुज़श्ता सालों की ज़कात जो अदा नहीं की थी वह ज़रूर अदा करे।

(फ़िक़्हुज़्ज़कात जिल्द–2 सफ़्हा–362, बहवाला फ़तहुलक़दीर जिल्द–1 सफ़्हा–482 व इमदाद मसाइले ज़कात सफ़्हा–71 व दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़्हा–130)

ज़कात में नीयत का हुक्म

नीयत बहरहाल ज़रूरी है, नीयत ही के तहत फ़ेल के असरात व नताइज मुरत्तब होते हैं, इसलिए जब ज़कात अदा की जाए उसी वक़्त नीयत ज़रूरी है, या अपने माल से वाजिब शुदा मिक़्दार को अलाहिदा करते वक़्त ज़कात की नीयत होनी चाहिए, अगर ऐसी सूरत हुई कि ज़कात की नीयत तो फ़ी नफ़्सिही कर ली, मगर उस वक़्त इस ग़रज़ से कोई रक़म अपने सरमाया से अलाहिदा नहीं की बल्कि अख़ीर साल तक बतदरीज कुछ न कुछ ज़कात देता रहा और इस पूरी मुद्दत में किसी वक़्त भी ज़कात की नीयत माल निकालते और अदा करते वक़्त नहीं की तो ज़कात अदा न होगी, हां अगर इस तरह ज़कात का माल देने के दौरान अगर कोई पूछ बैठे कि ये क्या दे रहे हो तो वह बिला तअम्मुल जवाब दे कि ज़कात है तो उसको नीयत कहा जाएगा और ज़कात अदा हो जाएगी। और अगर ये कहा कि अख़ीर साल तक जो कुछ सदक़ा करूंगा वह सब ज़कात ही की नीयत से अदा होगा तो ये जाइज़ नहीं। (सिराजिया)

मस्अला: ज़कात अदा करने के लिए किसी को वकील बनाया तो उसको रक़म देते वक़्त नीयत कर लेना काफ़ी है, अगर वकील बनाने के वक़्त नीयत नहीं की, अलबत्ता ज़कात की रक़म वकील को देते वक़्त नीयत कर ली तो ये सूरत भी दुरुस्त है। (जौहरा नैयरा)

मस्अला: ज़कात में मुअक्किल की नीयत मोतबर होती है न कि वकील की। (मेराजुद्दराया)

मस्अला: किसी ज़िम्मी को ज़कात की तक़्सीम की ज़िम्मादारी सिपुर्द की जा सकती है इसलिए कि जिसने ज़कात दी है उसकी नीयत काफ़ी है। (मुहीतुस्सुरख़्सी)

मस्अला: वकील को रक़म देने के बाद मुअक्किल की नीयत बदल गई है जबकि वकील ने ज़कात तक़्सीम न की हो, अब ये रक़म बाद वाली नीयत के तहत अदा होगी जबकि वकील को ज़कात अदा करने के लिए कुछ रक़म दी, मगर रुपया तक़्सीम करने से क़ब्ल मुअक्किल ने ये रक़म अपनी नज़्र (मिन्नत) में देने की कर ली तो अब ये रक़म नज़्र की शुमार होगी। (सिराजुलवह्हाज)

मस्अला: अगर किसी नादार शख़्स की अमानत किसी साहबे अमानत के पास से ज़ाए हो जाए और रुपऐ निज़ाअ की ख़ातिर वह उस अमानत के बक़द्र रक़म ज़कात की नीयत से उस शख़्स को अदा कर दे तो ज़कात अदा न होगी। (फ़तावा क़ाज़ी ख़ाँ)

मस्अला: किसी मुहताज को नीयत के बग़ैर कुछ रक़म दी और फिर उसने ज़कात की नीयत कर ली तो ये नीयत उस वक़्त सही होगी जब कि नीयत के वक़्त तक उस मुहताज शख़्स ने वह रक़म ख़र्च न की हो, अगर ख़र्च कर ली तो अब ज़कात की नीयत दुरुस्त नहीं, अगर ज़कात की नीयत कर भी ली तो ज़कात अदा न होगी।

(मेराजुद्दिराया, बह्रुर्राइक़, अैनी, हिदाया, फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–79, बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–1 सफ़्हा–14)

मस्अला: एक शख़्स ने किसी दूसरे शख़्स की जानिब से ख़ुद उसी के माल से उसकी ज़कात अदा कर दी, फिर उस शख़्स ने उसकी इजाज़त दे दी तो उस वक़्त तक अगर दी हुई रक़म उस मुस्तहिक़ के पास मौजूद है तो ज़कात अदा हो जाएगी, वरना अदा न होगी। (सिराजिया)

मस्अला: जिसने अपना सारा माल ख़ैरात कर दिया मगर ज़कात की नीयत नहीं की तो बतौरे इस्तेहसान उसके ज़िम्मा से ज़कात साक़ित हो जाएगी, यानी क़यास का तक़ाज़ा तो यही था कि नीयत के बग़ैर ज़कात अदा न हो, मगर चूंकि अब उसके पास कोई मालियत बाक़ी नहीं रही इसलिए इस सूरत के तहत ज़कात उसके ज़िम्मे से साक़ित हो जाएगी। (आमलगीरी जिल्द–4 सफ़्हा–5)

मस्अला: ज़कात की मिक़्दार को बाक़ी माल से जुदा करते वक़्त की नीयत भी काफ़ी है, अगरचे ये ख़िलाफ़े उसूल है, क्योंकि मुस्तहिक़्क़ीन को देते वक़्त नीयत अलाहिदा अलाहिदा होगी और हर मरतबा नीयत करने में दुश्वारी होगी, इसलिए ज़कात की रक़म अलाहिदा करते वक़्त की नीयत काफ़ी होगी। लेकिन महज़ जुदा करने से उहदा बरा नहीं होगा बल्कि फ़ुक़रा को दे कर उहदा बरा होगा।

(फ़िक़्हुज़्ज़कात जिल्द–1 सफ़्हा–331)

बिला नीयत ज़कात देना कैसा है?

मस्अला: जो रक़म बिला नीयते ज़कात, ख़ैरात की गई, वह ज़कात में महसूब नहीं होगी और ज़कात अदा नहीं होगी। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–336 व दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़्हा–130)

"और अगर किसी ने सारा माल ही ख़ैरात

कर दिया तो ज़कात साक़ित हो जाएगी, क्योंकि माल ही ख़त्म हो गया।"

(मुहम्मद रफ़अ़त क़ासमी)

क्या घर वाले ज़कात की नीयत से कुछ रक़म दे सकते हैं?

सवालः जिस शख़्स को ज़कात देनी हो, अगर उसके घर के अफ़राद ज़कात की नीयत से किसी को कुछ दे दें और मालिक को इत्तिला कर दें तो क्या हुक्म है?

जवाबः अगर मालिक (साहबे निसाब) ने पहले से अपने घर के आदमियों को इजाज़त दे रखी है, ज़कात अदा करने की, तब तो जिस वक़्त उसके घर के अफ़राद ने बनीयते ज़कात किसी को कुछ दिया, ज़कात अदा हो गई। और अगर ऐसा नहीं तो फिर मालिक की इजाज़त देने तक अगर वह रुपया ज़कात का उसके पास मौजूद है जिसको दिया गया तो नीयते ज़कात सही होगी और ज़कात अदा हो गई और अगर ख़र्च हो गया तो ज़कात अदा न होगी।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–101, बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–14)

क्या ज़कात व सदक़ा का सवाब सब घर वालों को मिलेगा?

सवालः अगर किसी घर में नौ या दस अफ़राद हैं और एक शख़्स का इख़्तियार तमाम चीज़ों पर है और मुख़्तार सब की ख़ुशी से बनाया गया है, अगर वह सदक़ा देगा तो उसी को सवाब मिलेगा या सब घर वालों को?

जवाबः जबकि सदक़ा ख़ैरात सब के माले मुश्तरका से उनकी इजाज़त से है, तो सब को सवाब मिलेगा।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–340)

मस्अलाः अगर ज़कात अदा की जाए और किसी शरई वजह से वह अदा न हो तो सवाब मिलेगा।

"اِنَّ اللّٰهَ لَايُضِيْعُ اَجْرًا لْمُحْسِنِيْنَ (القرآن)"

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–333)

ज़कात अदा किए बग़ैर मर जाए तो क्या हुक्म है?

सवालः एक साहबे निसाब के ज़िम्मा माल की ज़कात वाजिबुलअदा थी, मगर वह ज़कात अदा किए बग़ैर एक नाबालिग़ लड़का छोड़ कर फ़ौत हो गया, तो क्या बेवा उस माल में से ज़कात निकाले?

जवाबः बग़ैर वसीयत के मरने वाले के माले मतरूका मुश्तरका से ज़कात अदा नहीं की जा सकती क्योंकि वारिस नाबालिग़ लड़का भी है। उसके हिस्से में बिला वसीयत के ये तसर्रुफ़ नहीं हो सकता।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–330, बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–98 बाब सदक़तुलफ़ित्र)

मरहूम शौहर की ज़कात का हुक्म

मस्अलाः मरहूम शौहर की ज़कात बेवा के ज़िम्मा फ़र्ज़ नहीं है, उसके मरहूम शौहर के ज़िम्मा है, वही गुनहगार होगा, उसकी तरफ़ से अगर वारिस अदा कर दें तो अच्छा है। (आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–247 व फ़िक़्हुज़्ज़कात जिल्द–2 सफ़्हा–380)

ज़कात वाजिब होने के बाद इंतिक़ाल हो गया तो क्या हुक्म है?

मस्अलाः अगर कोई शख़्स ज़कात वाजिब हो जाने के बाद मर जाए तो उसके माल की ज़कात न ली जाएगी। हां अगर वह वसीयत कर गया हो तो उसका तिहाई माल

ज़कात में ले लिया जायेगा। गो ये तिहाई पूरी ज़कात को किफ़ायत न करे और अगर उसके वारिस तिहाई से ज़्यादा देने पर तैयार न हों तो जिस क़दर वह अपनी ख़ुशी से दे दें ले लिया जाएगा। (इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–4 सफ़्हा–31)

ज़कात की रक़म अलग कर के फ़ौत हो गया तो क्या हुक्म है?

सवाल: ज़कात की नीयत से ज़कात की रक़म अलग कर ली या वकील को दे दी, इस हालत में अदाएगी से क़ब्ल इंतिक़ाल हो गया तो उस रक़म का क्या हुक्म है?

जवाब: अगर मैयत ने वसीयत कर ली हो तो ये रक़म ज़कात में दी जाएगी, बशर्तेकि कुल तरका की एक तिहाई से ज़ायद न हो, और अगर वसीयत नहीं की तो तरका में शुमार कर के वारिसों में तक़्सीम होगी। मरने वाले का वकील (मरने वाले ने अपनी ज़कात का वकील बनाया था, इख़्तियार दिया था) फ़क़ीर के क़ाइम मक़ाम नहीं और जिस पर कि ज़कात वाजिब हुई थी, उसकी मौत से ये माज़ूल हो गया है, इसलिए उसको ये रक़म ज़कात में सर्फ़ करने का इख़्तियार नहीं।

(अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–265)

क्या मैयत के माल से ज़कात वसूल की जाएगी?

मस्अला: मैयत के माल से ज़कात वसूल नहीं की जाएगी क्योंकि ज़कात के लिए नीयत शर्त है। वह इस सूरत में पाई नहीं गई। और अगर मरने वाले ने ज़कात अदा करने की वसीयत की थी तो ज़कात का उसके तिहाई माल से लेना मोतबर होगा। कुल माल से लेना मोतबर नहीं है, क्योंकि वसीयत तिहाई माल में जारी होती है, अलबत्ता अगर वुरसा कुल माल से देना चाहें तो कुल

माल से लेना दुरुस्त होगा। (दुर्रेमुख़्तार जिल्द–2 सफ़्हा–49 व आमलगीरी जिल्द–4 सफ़्हा–46)

क्या काग़ज़ के नोट माल के हुक्म में हैं?

सोने और चांदी को ख़ुसूसियत क़ानूने शरई में सिर्फ़ इसलिए दी गई कि पूरी दुनिया में वही मेयारे ज़र की हैसियत रखते हैं। उन्हें खाया नहीं जा सकता, ओढ़ा नहीं जा सकता, बिछाया नहीं जा सकता, उनकी अहमियत फ़क़त ये है कि उनके बदले दूसरी ज़रूरीयात हासिल की जा सकती हैं। एक ग्राम सोना दे कर आप अपनी ज़रूरीयाते ज़िन्दगी फ़राहम कर सकते हैं और ये काग़ज़ का नोट ही दे कर आप चांदी और सोना भी ख़रीद सकते हैं। लिहाज़ा उस काग़ज़ के नोट की क़ानूनी हैसियत जो भी हो, वह मुसल्लमा तौर पर माल और दौलत है महज़ ज़ाहिरी शक्ल व हैअत ने उसकी इफ़ादियत में कोई फ़र्क़ वाक़ेअ नहीं किया।

कुरआन शरीफ़ में दसयों जगह पर अल्लाह तआला ने रिज़्क़ का ज़िक्र फ़रमाया है–

"وَاللّٰهُ يَرْزُقُ مَنْ يَّشَاءُ بِغَيْرِ حِسَابٍ."

अल्लाह जिसे चाहे बेहिसाब रिज़्क़ देता है।

"يَرْزُقُكُمْ مِنَ السَّمَاءِ وَالْاَرْضِ."

वह तुम्हें रिज़्क़ देता है आसमान और ज़मीन से।

हर पढ़ा लिखा जानता है कि ऐसी तमाम आयात में रिज़्क़ से मुराद महज़ पका हुआ खाना या अनाज (जिन्स) या चांदी सोना या जाएदाद नहीं बल्कि वह चीज़ है जिसे मुहावरे में "माल व मनाल" कहा जाता है। किसी शख़्स के पास सोना चांदी न हो मगर एक करोड़ रुपये काग़ज़ी

नोटों की शक्ल में जमा हों तो उसे मुफ़्लिस व ग़रीब नहीं मालदार कहेंगे। उन नोटों पर "रिज़्क़" का इतलाक़ होगा क्योंकि ये कागज़ की बेफ़ाएदा रसीदें नहीं बल्कि अपनी पुश्त पर हुकूमते वक़्त की ज़मानत लिए हुए सिक्के हैं जिनसे हर चीज़ पलक झपकते ही ख़रीदी जा सकती है और आज तो उर्फ़ आम में सोना और चांदी भी उनकी कनीज़ व गुलाम हैं। क्योंकि ज़िन्दगी गुज़ारने का हर सामान ये चुटकी बजाते ही मुहय्या कर सकते हैं। मज़ीद सूरए बक़रह में फ़रमाया गया है—

"اَلَّذِیْنَ یُنْفِقُوْنَ اَمْوَالَهُمْ بِالَّیْلِ وَالنَّهَارِ سِرًّا وَّ عَلَانِیَةً الخ"

जो लोग अल्लाह की राह में अपना माल दिन रात, छुपे और खुले ख़र्च करते हैं, उनके लिए अल्लाह के पास उनका अज्र है। (पारा—3 अलबक़रह)

क्या आदमी दिन रात गुरबा को सोना चांदी बांटेगा? क्या इस आयत में माल का इतलाक़ सिवाए उन सिक्कों के भी किसी और चीज़ पर होता है जिनसे हर चीज़ ख़रीदी जाती है।

कुरआन बार बार लफ़्ज़े "अमवाल" भी इस्तेमाल करता है, अमवाल माल ही की जामा है। माल हर वह शय है जिसके बदले आप कोई ज़रूरते ज़िन्दगी हासिल कर सकें, इस कागज़ के नोट से बढ़ कर माल और क्या होगा जिसे किसी भी मुल्क में इस सिरे से लेकर उस सिरे तक हर फ़र्द बिला तअम्मुल क़बूल कर के बदले में मतलूबा चीज़ देता है, हिन्दुस्तान का नोट पाकिस्तान में या पाकिस्तान का नोट अमरीका में न चले, बग़ैर तब्दीली करेंसी के तो उससे उस की हैसियत पर क्या असर

पड़ा, जो ज़कात का बुनियादी मूजिब है, यानी अह्ले हाजत की हाजत बरारी। आप ये काग़ज़ी नोट हिन्दुस्तान में बैठ कर किसी अमरीकी ग़रीब को तो दे नहीं रहे हैं जो उसको अमरीका ले जा कर ग़ल्ला ख़रीदने की कोशिश करेगा। आप अपने ही मुल्क के उन गुरबा को दे रहे हैं जो इसी मुल्क में उससे अपनी ज़रूरीयात हासिल करेंगे। फिर बताइये क्या वजह हो कि इस काग़ज़ी नोट पर ज़कात आइद न हो जो तमाम ज़रूरीयात की शाह कलीद है।

"यानी उस काग़ज़ के नोट ही से तमाम चीज़ें ख़रीदी जा सकती हैं।"

(मुहम्मद रफ़अत क़ासमी)

सोने व चांदी की अहमियत क्यों है?

सोना और चांदी दोनों ऐसी क़ीमती नादिर और नफ़ीस अश्या हैं और अल्लाह सुब्हानहू व तआला ने उन दोनों अश्या को बनी नौअ इंसान के लिए इस क़दर मुफ़ीद बनाया है कि इंसानियत के आग़ाज़े आफ़्रीनश से ये दोनों चीज़ें इंसानी मुआशरे में ज़रे नक़द और क़ीमते अश्या के तौर पर इस्तेमाल हो रही हैं। इसीलिए शरीअ़त ने इन दोनों मादनी अश्या को फ़ितरी तौर पर अफ़ज़ाइश पज़ीर दौलत (माले नामी यानी बढ़ने वाली) क़रार दिया है और उन पर ज़कात फ़र्ज़ की है, ख़्वाह ये ज़रे नक़द की सूरत में हों या उनके परे और तख़्तियाँ ढाल ली गई हों या उनके बरतन, मुजस्समे, आराइशी अश्या और ज़ेवरात वग़ैरा बना लिए गए हों। (फ़िक़्हुज़्ज़कात जिल्द–1 सफ़्हा–321)

इंसान जहां भी रहा है उसने सोने, चांदी की दरयाफ़्त के बाद उन्हें माली मआमलात और कारोबारी लेन देन के

लिए मेयार और पैमाना करार दिया है। दुनिया की तमाम माद्दी चीज़ों की क़द्र व क़ीमत उसी के तहत क़ाइम की जाती है और तबादलए अजनास में भी उसको बुनियादी हैसियत हासिल रही है। दीने इलाही ने भी अपनी तशरीह व तफ़सील में इंसानी ज़िन्दगी के हर उतार चढ़ाव को मलहूज़ रखा है, चूंकि इंसानी आबादियों में सोने और चांदी को एक बुनियादी पैमाने की हैसियत दाएमी तौर पर हासिल हो गई है, इसलिए इस्लाम ने भी उस पैमाने को बरक़रार रखा है। (आलमगीरी जिल्द–4 सफ़्हा–20)

सोने, चांदी के निसाब में इस क़दर तफ़ावुत क्यों?

सवालः ज़कात उन लोगों पर वाजिब है जिनके पास साढ़े बावन तोला चांदी या साढ़े सात तोला सोना साल भर तक रहा हो, ये समझ में नहीं आता कि बावन तोला चांदी को साढ़े सात तोला सोने से क्या निसबत है, मसलन चांदी का भाव (रेट) अगर रुपया तोला है तो उसकी क़ीमत बावन रुपये आठ आने होती है और अगर सोने का रेट तीस रुपया तोला हो तो उसकी क़ीमत दो सौ पच्चीस रुपये हो जाते हैं। क्या पहले ज़माना में मज़कूरा बाला वज़न सोने और चांदी की क़ीमत बराबर हुआ करती थी?

जवाबः आँहज़रत (स.अ.व.) के ज़माना में और उसके बाद भी एक ज़माना तक चांदी और सोने की क़ीमत में तक़रीबन इसी क़दर तफ़ावुत था जिस क़दर उनके निसाब में तफ़ावुत है। उस ज़माने में एक दीनार सोने का दस दिरहम नुक़रा (चांदी) की क़ीमत के बराबर था। इस हिसाब से सोना तक़रीबन दस रुपये तोला होता था।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द– सफ़्हा–107, बहवाला

रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–42 बाबुलमाल)

सोने व चांदी पर ज़कात क्यों है?

सवाल: ये उज़्र कि अगर हर साल ज़कात देते रहें तो बाज़े माल तो तक़रीबन ख़त्म हो जाएंगे मसलन जिस रुपये से हम तिजारत नहीं करते वैसे ही रखा है, या ज़ेवर कि तिजारत के काम ही का नहीं तो नश्वनुमा कुछ होगा नहीं और हर साल एक जुज़्व ज़कात का निकला करेगा तो यूंही फ़ना (ख़त्म) हो जाएगा?

जवाब: इसका जवाब ये है कि रुपया से तिजारत करने को किस ने मना किया। अब अगर ख़ुद न करो तो शरीअ़त उसकी ज़िम्मादार नहीं। इसी तरह चांदी, सोना, ज़ेवर के लिए अस्ल ख़लक़त में वह "समन" है। (यानी रुपया सिक्का राइजुलवक़्त) जो तिजारत के लिए पैदा हुआ है, सो ज़ेवर तुम ने ख़ुद अपनी ख़ुशी से बनाया है। शरीअ़त इसकी ज़िम्मादार नहीं है, जब तुम चाहो उससे सिक्का (रुपये) बदल कर तिजारत कर सकते हो और जिससे वह अपनी ज़कात का ख़ुद कफ़ील व मुतहम्मिल हो सकता है। (इमदाद, मसाइले ज़कात जिल्द– सफ़्हा–40)

मस्अला: शरीअ़ते इस्लामिया ने मिक़्दार पर ज़कात फ़र्ज़ कर के इंसान को इस तरफ़ मुतवज्जेह किया है कि वह उस सरमाया को बेकार न पड़ा रहने दे, बल्कि उसे अफ़ज़ाइश बख़्श कामों (तिजारतों) में लगायें, ख़ुद फ़ाएदा उठाए और मुआशरे को और समाजी इक़्तिसादियात को फ़ाएदा पहुंचाए। (फ़िक़्हुज़्ज़कात जिल्द–1 सफ़्हा–1)

मस्अला: जब तक बक़द्रे निसाब रुपया व ज़ेवर मौजूद है तो ज़कात वाजिब होना ख़िलाफ़े अक़्ल नहीं है क्योंकि

जो शख़्स मालिके निसाब है वह शरअन और उरफ़न ग़नी (मालदार) कहलाता है और मालदार को मुहताजों की ख़बरगीरी और उनको अपने पास से कुछ देना मरव्वत और अक़्ल का मुक़तज़ा है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–53)

"इस्लाम के इस क़ानूने ज़कात का मंशा ये भी मालूम होता है कि लोग रुपये जमा कर के बेकार न रख छोड़ें बल्कि उसे कारोबार में या ज़मीन व जाएदाद में लगाएं ताकि मुल्क व क़ौम को उससे फ़ाएदा हो और ज़कात बार न गुज़रे, नक़द जमा रखने से मुल्क और क़ौम को खुला नुक़सान है, क्योंकि जब उस रुपये में या सोने चांदी में नुमू और बढ़ने की सलाहियत मौजूद है, अब कोई उसे रोक कर रखे ख़र्च न करे और जो काम उससे लेना है न ले, तो ये रोकने यानी जामा करने वाले का कुसूर है, ज़कात के वाजिब होने का सबब ज़्यादती नहीं, उस मालियत में ख़ुद सलाहियत मौजूद है।"

(मुहम्मद रफ़अत क़ासमी ग़ुफ़िरलहू)

ज़कात के डर से मुस्लिम को ग़ैर मुस्लिम लिखवाना कैसा है?

सवालः एक साहब ने एक औरत को मशवरा दिया है कि अगर वह अपने आप को ग़ैर मुस्लिम लिखवा दें तो ज़कात नहीं कटेगी (सरकारी तौर पर) क्या ऐसा करने से ईमान पर असर नहीं पड़ेगा?

जवाबः किसी शख़्स का अपने आप को ग़ैर मुस्लिम लिखवाना कुफ़्र है। ज़कात से बचने के लिए ऐसा करना

डबल कुफ्र है, और किसी को कुफ्र का मश्वरा देना भी कुफ्र है। पस जिस शख़्स ने ग़ैर मुस्लिम लिखवाने का मश्वरा दिया उसको अपने ईमान और निकाह की तजदीद करनी चाहिए और अगर बेवा औरत ने उसके कुफ्रिया मश्वरा पर अमल कर लिा हो तो उसको भी अज़ सरे नौ ईमान की तजदीद करनी चाहिए।

(आप के मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–343)

ज़कात से बचने के लिए माल का हिबा करना?

मस्अला:- अगर कोई शख़्स अपना माल किसी को हिबा (बग़ैर पैसों के) कर दे और एक साल के बाद रुजूअ़ करे यानी वह हिबा की हुई चीज़ वापस ले ले तो उसकी ज़कात वाहिब (हिबा करने वाले) पर होगी न कि मोहिब (जिसको दिया) पर। और हिबा करने से पहले जितने जमाना तक वह माल वाहिब के कब्ज़ा में रहा था वह ज़माना कलअदम समझा जाएगा। उसका हिसाब न किया जाएगा, मसलन किसी ने ज़काती माल (जिस माल पर ज़कात वाजिब हुई थी) दस महीने तक अपने पास रख कर किसी को हिबा कर दिया और फिर चंद रोज़ के बाद उससे वापस ले लिया तो अब वह ज़माना महसूब कर के दो महीने के बाद उस पर ज़कात देने का हुक्म न दिया जाएगा, बल्कि अज़सरे नौ पूरा साल गुज़र जाएगा तब ज़कात वाजिब होगी, जब उस पर ज़कात फ़र्ज़ होगी।

और अगर कोई शख़्स ख़ास कर ज़कात के साक़ित (ख़त्म) करने की नीयत से ये हीला करे कि ज़कात का माल जब ख़त्म होने के क़रीब आये तो वह माल किसी को हिबा कर दे, फिर वापस ले ले तो अगरचे ज़कात

साकित हो जाएगी मगर ये फ़ेल उसका मकरूहे तहरीमी होगा, क्योंकि उसमें फ़क़ीरों का नुक़सान और उनके हक़ का बातिल करना और ज़कात के दरवाज़ा का बंद करना है। (इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–4 सफ़्हा–34)

साहबे निसाब दीवालिया हो जाए तो क्या हुक्म है?

मस्अला: किसी के माल पर पूरा साल गुज़र गया लेकिन अभी ज़कात नहीं निकाली थी कि सारा माल चोरी हो गया या और किसी तरह से जाता रहा तो ज़कात भी मआफ़ हो गई। अगर ख़ुद अपना माल किसी को दे दिया या और किसी तरह अपने इख़्तियार से हलाक कर डाला तो जितनी ज़कात वाजिब हुई थी वह मआफ़ नहीं हुई, बल्कि देना पड़ेगी। (बहिश्ती जेवर जिल्द–3 सफ़्हा–27, बहवाला हिदाया जिल्द–1 सफ़्हा–173)

मस्अला: साल पूरा होने के बाद किसी ने अपना सारा माल ख़ैरात कर दिया तब भी ज़कात मआफ़ हो गई।

(बहिश्ती ज़ेवर जिल्द–3 सफ़्हा–27, बहवाला हिदाया जिल्द–1 सफ़्हा–168)

मस्अला: किसी के पास दो सौ रुपये थे, एक साल के बाद उसमें से एक सौ रुपये चोरी हो गए या एक सौ रुपये ख़ैरात कर दिए तो एक सौ रुपये बाक़ी मांदा की ज़कात देना पड़ेगी और एक सौ की ज़कात मआफ़ होगी।

(बहिश्ती ज़ेवर जिल्द–3 सफ़्हा–27, बहवाला मिश्कात जिल्द–1 सफ़्हा–159)

सोने व चांदी का चालीसवां हिस्सा अगर पैसों से निकाला तो आइंदा ज़कात का हुक्म

सवाल: मेरे पास निसाब का सोना आठ तोला है।

मैंने आठ तोले की ज़कात अदा की (पैसों से) आइंदा साल तक मैंने उसमें कोई इज़ाफ़ा नहीं किया और पिछले साल की ज़कात निकाल कर ये सोना निसाब से कम है यानी मौजूद तो आठ तोले ही है। लेकिन चूंकि मैं आठ तोले की ज़कात चालीसवां हिस्सा अदा कर चुका हूं तो वह चालीसवां हिस्सा निकाल कर फिर हिसाब बनेगा या हर साल आठ तोले पर ही ज़कात देना होगी?

जवाबः पहले साल आप पास के आठ तोले सोना था, आप ने उसकी ज़कात अपने पास से पैसों से अदा करदी और वह सोना ज्यों का त्यों आठ तोले महफ़ूज़ रहा तो आइंदा साल भी उस पर ज़कात वाजिब होगी। हां! अगर आप ने सोना ही ज़कात में दे दिया होता और सोने की मिक़्दार साढे सात तोले से कम हो गई होती और आप के पास कोई और असासा (सामान वग़ैरा) भी न होता जिस पर ज़कात आती हो तो इस सूरत में आप पर ज़कात वाजिब न होती।

(आप के मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–366)

मस्अलाः लेकिन सोने की ये मिक़्दार तो आप के पास महफ़ूज़ है और साल पूरा होने तक महफ़ूज़ रहेगी। इसलिए आइंदा साल भी इस पूरी मालियत पर ज़कात लाज़िम होगी, अलबत्ता अगर सोने ही का कुछ हिस्सा ज़कात में अदा कर देतीं और बाक़ी मांदा सोना बक़द्रे निसाब न रहता तो इस सूरत में ये देखना होगा कि उस सोने के अलावा तो आप के पास कोई ऐसी चीज़ तो नहीं जिस पर ज़कात फ़र्ज़ है मसलन नक़द रुपया या तिजारती माल या किसी कम्पनी के हिसस (शेयर) वग़ैरा, पस अगर

सोने के अलावा कोई और चीज़ भी मौजूद हो जिस पर ज़कात आती है और वह सोने के साथ मिल कर निसाब की मिक्दार को पहुंच जाती है तो ज़कात फ़र्ज़ होगी।

(आप के मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–365)

मस्अला: जिस रुपये की ज़कात एक साल अदा कर दी गई है तो अगर वह रुपये (निसाब के बराबर) आइंदा साल तक महफ़ूज़ रहे और बक़द्रे निसाब हों तो फिर उस में आइंदा ज़कात अदा करनी होगी और जब निसाब से कम हो जाऐं तो ज़कात नहीं है।

(किफ़ायतुलमुफ़्ती जिल्द–4 सफ़्हा–154)

क्या कागज़ के नोटों पर ज़कात है?

रसूलुल्लाह (स.अ.व.) के ज़माने में दिरहम (चांदी के सिक्के) की वह बुनियादी इकाई थी जिस पर सारे लेन देन चालू होते थे, उसके बाद सोने के दीनार (सिक्के) को ये दर्जा हासिल था, लेकिन ज़्यादा तर कारोबार दिरहमों ही पर होता था, उस वक़्त बाहर की तरक़्क़ी याफ़्ता दुनिया भी उन्ही पैमानों से आशना थी, इसलिए उस वक़्त शरीअ़त ने माली एतेबार से लेन देन, ज़कात, सदक़ात व ख़ैरात वग़ैरा की जितनी तफ़सीलात ब्यान की हैं वह ज़्यादा तर दिरहम को सामने रख कर ब्यान की हैं, उसमें वज़न का भी लिहाज़ किया गया है और दिरहम की अददी हैसियत को भी ज़कात में ख़ास अहमियत हासिल है।

इस वक़्त दुनिया दिरहम के चलन से ख़ाली हो चुकी है मगर दिरहम की मालियत का बदल राएजुलवक़्त सिक्कों को क़रार दे कर ज़कात का तअल्लुक़ उन से क़ाइम कर के किया जाएगा ख़्वाह किसी जगह रुपया वक़्त का सिक्का

हो, या शलिंग या पौंड हो, डालर या रूबल हो, लेरा या दीनार हो, दो सौ दिरहम की मालियत (साढ़े बावन तोला चांदी की क़ीमत) के बक़द्र मौजूदा सिक्कों की मालियत क़ाइम कर के उन सिक्कों को दिरहम का क़ाइम मक़ाम क़रार दिया जाएगा, इस तरह हर मुल्क में हर वक़्त ज़कात का ये निसाब चालू और नाफ़िज़ हो सकता है।

(फ़तावा आलमगीरी जिल्द–4 सफ़्हा–20)

मस्अलाः नोट (कागज़ के) जब कि बक़द्रे निसाब हों ज़कात वाजिब है और ज़कात रुपये से अदा हो जाती है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–83)

मस्अलाः कागज़ के नोटों पर हौलाने हौल यानी साल गुज़रने पर ज़कात लाज़िम हो जाती है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–163, बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–13)

मस्अलाः जमहूर फ़ुक़हा के नज़दीक कागज़ के करेंसी नोटों पर ज़कात वाजिब है, क्योंकि आम कारोबार में सोने चांदी की जगह उनसे काम लिया जाता है और उनका लेन देन चांदी के बजाए बग़ैर किसी दुश्वारी के मुमकिन है। (किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–984 व फ़िक़्हुज़्ज़कात जिल्द–1 सफ़्हा–365)

हर क़ानून के कुछ मसालेह व मफ़ादात हुआ करते हैं, ज़कात की ये मसलिहत किसी तशरीह की मुहताज नहीं कि जिन लोगों को अल्लाह तआ़ला ने उनकी ज़रूरत से ज़ाएद रिज़्क़ दिया है वह अपने रिज़्क़ का कुछ हिस्सा उन बंदगाने ख़ुदा की तरफ़ मुन्तक़िल करें जिन्हें रिज़्क़ कम मिला है और मज़ीद रिज़्क़ के मुहताज हैं।

"नोट की ठेट आईनी हैसियत ख़्वाह कुछ हो, देखना ये है कि उस पर माल व दौलत का इतलाक़ होता है या नहीं। आज ही नहीं बल्कि हमेशा से ये इस्तिलाह ज़बान ज़दे ख़ास व आम है कि फ़लां शख़्स मालदार है, इस इस्तिलाह को इस्तेमाल करते हुए ये शोशा किसी के ज़ेहन में नहीं होता कि उस शख़्स के पास लाज़िमन सोना चांदी जमा है, बल्कि सिर्फ़ ये बात ज़ेहन में होती है कि ये शख़्स पैसे वाला है और आप भी लाख पती, करोड़ पती उसे ही कहते हैं जिसके पास लाख, करोड़ रुपये जमा हों, ख़्वाह काग़ज़ी नोटों की शक्ल में, ख़्वाह चांदी या सोने के सिक्कों की शक्ल में।

आज कल तो कम से कम हमारे मुल्क में चांदी या सोने के सिक्कों का सवाल ही नहीं, नापैद हैं। दौलत या तो जाएदाद की शक्ल में होती है या काग़ज़ी नोटों की शक्ल में। ये काग़ज़ का नोट ही वह चीज़ है जिससे आप बाज़ार की हर चीज़ ख़रीदते हैं, ख़रीद और फ़रोख़्त कुनिन्दा के दरमियान ये बहस नहीं उठती कि ये अस्ल दौलत है या उसकी रसीद, सोने व चांदी से बढ़ कर उन काग़ज़ों में तासीर है कि मसलन एक माशा चांदी या सोना लेकर आप सब्ज़ी फ़रोश की दूकान पर चले जाएं कि लाओ दो किलो गोभी और एक किलो आलू दे दो और बाक़ी पैसे लौटा दो तो वह आप की

सूरत देख कर हंसेगा और तरह तरह की चेमीगोइयां होंगी, लेकिन ये काग़ज़ का नोट लेकर आप जाऐं तो किसी बहस और ताख़ीर के बग़ैर आपको तरकारी वग़ैरा और बक़िया रेज़गारी वग़ैरा मिल जाएगी, इसी का नाम है दौलत, यही है वह चीज़ जिसकी ग़रीब को हाजत है। फ़ाक़ा कश के लिए पेट की आग बुझाने के लिए आपका दिया हुआ ये काग़ज़ का नोट ही काफ़ी हो जाता है और नान बाई, होटल वाला उससे ये बहस नहीं करता कि तुम दौलत नहीं बल्कि सिर्फ़ रसीद लिए फिर रहे हो, ख़ुलासा ये कि काग़ज़ के नोट जब निसाब के बराबर हो जाऐं तो ज़कात है।"

(मुहम्मद रफ़अत क़ासमी ग़ुफ़िरलहू)

जमा शुदा नोटों पर ज़कात क्यों है?

मस्अला: रुपया हक़ीक़तन रखने (जमा) करने के लिए नहीं है बल्कि काम (तिजारत) बढ़ाने के लिए है। उसको बेकार व महफ़ूज़ रखना अस्ल के ख़िलाफ़ है। इसलिए उसके रहने और रखने में ज़कात साक़ित नहीं है।

(किफ़ायतुलमुफ़्ती जिल्द–4 सफ़्हा–145)

नोट भुनाने पर बट्टा लेना कैसा है?

मस्अला: ज़रूरत के वक़्त नोट भुनाने में बट्टा देना जब कि कोई सूरत पूरा रुपया मिलने की न हो दुरुस्त है अगरचे अस्ल क़ाएदा से बट्टा (कटौती) देना नोट पर दुरुस्त नहीं, लेकिन बज़रूरते मजबूरी बट्टा देना दुरुस्त है और लेना दुरुस्त नहीं है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6

सफ़्हा–163 बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–2 सफ़्हा–13)

क्या सरकारी टिकटों पर ज़कात है?

पोस्ट के टिकटों का भी यही मआमला है कि कोई शख़्स अपनी दौलत उन टिकटों में मुन्तक़िल कर के नहीं रखता, अगर ये टिकट राएजुलवक़्त हैं तो लोग उन्हें ख़र्च के मुताबिक़ ही ख़रीदते हैं। ख़रीद कर इस्तेमाल कर डालते हैं। उन पर साल गुज़रने का सवाल ही पैदा नहीं होता, अगर साल गुज़र भी जाए तो ये ज़रूरीयात में शामिल हैं। उन्हें अगर कारोबारी मुरासलत में सर्फ़ किया जाता है तो उनकी ज़कात फ़ीलहक़ीक़त उस ज़कात में शामिल है जो कारोबार पर क़वाएद के मुताबिक़ वाजिब होगी, और अगर वह ज़ाती मुरासतल के लिए हैं तो उनका "ज़रूरीयात" में शामिल होना ज़ाहिर ही है। आख़िर ग़ैर तिजारत्ती किताबों और ज़ाती रिहाईश के मकानों और मसनूआत निकालने वाली मशीनों पर भी तो ज़कात वाजिब नहीं होती।

> "रहे वह पूराने टिकट जिन्हें बाज़ लोग जमा करते हैं तो अगर महज़ शौक़िया जमा किया है तो ज़ाहिर है कि ये बेक़ीमत शैय हैं। और अगर फ़रोख़्त की नीयत से किया है तो उनकी क़ीमत ही मुतअय्यन नहीं महज़ इत्तिफ़ाक़ (चांस) पर मुन्हसिर है कि दो पैसे वाला टिकट दो हज़ार का बिक जाए या दो रुपये में भी न बिके। लिहाज़ा उन पर फ़िलहाल ज़कात आएद नहीं होगी कि ये माल ही नहीं हैं। हाँ जब फ़रोख़्त हो जाऐंगे तो हासिल शुदा रक़म पर साल भर

बाद उसी क़ाएदे से ज़कात वाजिब होगी जिस क़ाएदे से रुपये पैसे पर होती है।"

(मुहम्मद रफ़अत क़ासमी गुफ़िरलहू)

ज़रूरीयात के लिए जो रक़म है उसका हुक्म

सवालः एक शख़्स के पास कई हज़ार रुपये जमा हैं, उस पर साल भी गुज़र चुका है, मगर उसके पास न मकान है और न ही घरेलू सामान, अभी शादी भी नहीं की, उन्ही ज़रूरीयात के लिए रुपया जमा कर रखा है, उस पर ज़कात फ़र्ज़ है या नहीं?

जवाबः उस पर ज़कात फ़र्ज़ है, अलबत्ता अगर साल पूरा होने से क़ब्ल तामीरे मकान का सामान या घरेलू इस्तेमाल की अश्या वग़ैरा ख़रीद ले तो ज़कात फ़र्ज़ न होगी। (अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–291, बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–7)

मस्अलाः अगर निसाब के बक़द्रे रक़म किसी ख़ास मक़्सद मसलन बहन वग़ैरा की शादी के लिए जमा कर रखी हो, तब भी उस पर ज़कात वाजिब है।

(आप के मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–363)

मस्अलाः अपनी किसी ख़ास ज़रूरीयात के लिए जो रुपया जमा किया है तो उस पर भी एक साल गुज़रने के बाद ज़कात वाजिब है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–64, बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–13)

"यानी साल के अन्दर अन्दर अगर ख़त्म हो जाए तो ज़कात नहीं है और बाक़ी निसाब के बराबर है तो ज़कात है।"

(मुहम्मद रफ़अत क़ासमी गुफ़िरलहू)

क्या घर के तमाम अफ़राद के माल की ज़कात घर के सरबराह पर है?

सवाल: मैं घर का सरबराह हूं, मेरे दोनों लड़के साहबे रोज़गार हैं और मेरे लड़कों की बीवियों के पास कम से कम बारह बारह तोला फ़ी कस ज़ेवरात हैं और मेरी अहलिया के पास पांच तोला के ज़वरात और कुंवारी लड़की की शादी के लिए तीन तोला के ज़ेवरात हैं जिसको एक साल से ख़रीद कर रखा हूं। नीज़ आज कल मुश्तरका ख़ानदान में भी ज़ेवर हर मुतअल्लिक़ा औरत की ज़ाती मिलकियत ही शुमार होता है। एक औरत का ज़ेवर दूसरी औरत मुस्तक़िल तौर पर नहीं ले सकती, यहां तक कि सास अपनी बहू का ज़ेवर अपनी लड़की को नहीं दे सकती। क्या ऐसी सूरत में मुझे घर के तमाम ज़ेवरात की मालियत के मुताबिक़ ज़कात निकालना चाहिए? या फ़रदन फ़रदन की हिसाब से?

जवाब: ज़कात के वाजिब होने में हर शख़्स की इन्फ़िरादी मिलकियत का एतेबार है। आप की बहुओं के पास जो ज़ेवर है, देखना ये है कि उसका मालिक कौन है? आपकी बहुओं का ज़ेवर अगर उनकी मिलकियत है तो ज़कात उनके ज़िम्मा वाजिब है और अगर कुछ ज़ेवर बहुओं की मिलकियत है। मसलन जो ज़ेवर उनके मैके से मिला है और कुछ लड़कों की मिलकियत, तो अगर हर एक की मिलकियत निसाब को पहुंचती है तो ज़कात वाजिब है वरना नहीं, इसी तरह आपकी अहलिया के पास जो सोना है वह अगर उसकी मालिक हैं और उसके अलावा उनकी मिलकियत में कोई रुपया पैसा नहीं तो

उनके जिम्मा ज़कात नहीं है। (क्योंकि सिर्फ़ पांच तोला पर ज़कात नहीं होती) और अगर वह सोना आप की मिलकियत है तो दूसरे अमवाले ज़कात के साथ उस ज़ेवर की ज़कात भी आपके ज़िम्मा होगी। आप ने लड़की के लिए जो सोना ख़रीद रखा है, उसके बारे में भी ये देखना होगा कि आप ने वह सोना लड़की की मिलकियत कर दिया है या नहीं? अगर लड़की की मिलकियत नहीं है तो उसकी ज़कात आप के ज़िम्मा है, और अगर लड़की की मिलकियत है और उसके पास कोई नक़द रुपये पैसे नहीं है तो उस पर ज़कात वाजिब नहीं और अगर कुछ रुपया भी उसके पास है तो ज़कात उसके ज़िम्मा वाजिब है। (आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–350)

इन्फ़िरादी मिलकियत पर ज़कात है

सवालः किसी घर में तीन भाई इकट्ठे रहते हों, एक ही जगह खाते हों, लेकिन कमाते अलग हों, हर एक की बीवी के पास ढाई या तीन तोला सोना हो और सब का मिला कर तक़रीबन साढ़े आठ तोला सोना बनता हो तो क्या उनको उस ज़ेवर की ज़कात अदा करना होगी?

जवाबः अगर उनके पास और कोई माल नहीं जिस पर ज़कात फ़र्ज़ हो और वह निसाब की हद को पहुंचता हो तो उन पर ज़कात फ़र्ज़ नहीं। क्योंकि निसाबे ज़कात में इन्फ़िरादी मिलकियत का एतेबार है और यहां किसी की इन्फ़िरादी मिलकियत बक़द्रे निसाब नहीं।

(आप के मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–349)

मुश्तरका घरदारी में ज़कात का हुक्म

सवालः हमारे घर में ये तरीक़ा है कि सब भाई तन्ख़्वाह

ला कर वालिदा को देते हैं जो घर का ख़र्च चलाती हैं, जब कि ज़ेवर और कुछ बचत की रक़म हमारे पास होती है तो क्या ज़कात देनी हमारे ज़िम्मा है या वालिदा साहिबा के?

जवाब: अगर वह सोना और बचत की रक़म इतनी हो कि अगर उसको तक़्सीम किया जाए तो सब भाई साहबे निसाब हो सकते हैं तो ज़कात वाजिब है वरना नहीं। (आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–349 व दुर्रेमुख़्तार जिल्द– 2 सफ़्हा–58)

मस्अला: अगर कुछ माल चंद लोगों की शिरकत में हो तो हर एक का हिस्सा अलाहिदा कर के अगर निसाब पूरा होता हो तो ज़कात उस पर फ़र्ज़ होगी वरना नहीं।

(इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–4 सफ़्हा–28)

जो रक़म वालिदैन को दी जाए उसकी ज़कात किस पर है?

ज़ैद ने जो रुपये माहवारी ख़र्चा के तौर से अपने बाप उमर को दिया और उनके पास भेजा, उमर (बाप) उसका मालिक हो गया। फिर जो कुछ रुपये उमर ने बचाया (अगरचे इस ख़्याल से बचाया हो कि ये रुपया बेटे ज़ैद के काम आएगा) उसका मालिक उमर है और बक़द्रे निसाब हो जाने पर साल भर के बाद उसकी ज़कात उमर पर वाजिब है, लेकिन अगर ज़ैद उमर की तरफ़ से उमर की इजाज़त से ज़कात गुज़श्ता ज़माना की और आइंदा की अदा करे तो दुरुस्त है और ज़कात अदा हो जाएगी। ज़ैद को चाहिए कि उमर को इत्तिला कर दे कि मैं ज़कात उस रुपये की गुज़श्ता ज़माना की अदा करता हूं और आइंदा भी अदा करता रहूंगा। आप मुझ को इजाज़त दे

दीजिए।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–138, बहवाला शामी जिल्द–2 सफ़्हा–14)

जो माल किसी दूसरे के क़ब्ज़ा में रहे उसका हुक्म

सवालः ज़ैद का माल उसके वालिदैन और भाई के क़ब्ज़े में रहा, सिन्ने बुलूग़ से इस वक़्त तक कि अब ज़ैद की उम्र बाईस साल है, अब ज़ैद अपने कुल माल पर क़ादिर व क़ाबिज़ हुआ है तो ज़कात कैसे और कब से अदा करना चाहिए?

जवाबः आइंदा को जब से उसके क़ब्ज़े में माल आया है (एक साल गुज़रने पर) ज़कात अदा करे, गुज़श्ता ज़माने की ज़कात लाज़िम नहीं है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–55, बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–48 बाब ज़कातुलमाल)

जो माल बाप और बेटे ने कमाया, उसकी ज़कात किस पर है?

सवालः (1) ज़ैद ने अपना कमाया हुआ माल वालिदैन के पास रख दिया और वालिद को इख़्तियारे ताम हासिल है तो ज़कात किस पर वाजिब है? (2) और एक माल वालिद और लड़के दोनों ने कमाया, वालिद के क़ब्ज़ा में है और वही मुतसर्रिफ़ है, ज़कात किस पर है?

जवाबः (1) जो मालिक है उस पर ज़कात वाजिब है, यानी लड़के पर। (2) और इस सूरत में चूंकि वालिद को तमाम तसर्रुफ़ात और इंतिज़ामात के मुतअल्लिक़ इख़्तियारे ताम हासिल है तो फिर ज़कात का अदा करना भी उन्ही के ज़िम्मा है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–70, बहवाला हिदाया जिल्द–1 सफ़्हा–165 किताबुज़्ज़कात)

मुसाफ़िर पर ज़कात का हुक्म

मस्अला: मुसाफ़िर पर भी (जब कि वह साहबे निसाब हो) अपने माल की ज़कात इसलिए वाजिब है कि वह अपने नाइब के ज़रीआ से अपने माल में तसर्रुफ़ की कुदरत रखता है। (फ़तावा आलमगीरी जिल्द–4 सफ़्हा–7)

क्या इस्तेमाल वाले ज़ेवर पर ज़कात है?

सवाल: ज़ेवरात जो औरत के इस्तेमाल में रहते हैं, क्या उन पर ज़कात है? क्योंकि इस्तेमाल में रहने वाली अश्या पर ज़कात नहीं है, और बाज़ अरब लोग ऐसे ज़ेवर की ज़कात नहीं देते और कहते हैं कि रोज़मर्रा इस्तेमाल की चीज़ है?

जवाब: इमाम अबूहनीफ़ा (रह.) के नज़दीक ऐसे ज़ेवरात पर भी ज़कात है जो इस्तेमाल में रहते हों।

(आप के मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–364)

मस्अला: ज़ेवर सोने व चांदी का जब बमिक़्दारे निसाब हो, उसमें ज़कात वाजिब है इस्तेमाल करे या न करे।

(हीदाया जिल्द–1 सफ़्हा–77)

मस्अला: नक़द रुपये और ज़ेवर, ग़रज़ सोने व चांदी की हर चीज़ और सिक्का पर ज़कात एक साल गुज़रने के बाद लाज़िम व फ़र्ज़ है अगरचे वह (जेवर रुपया, पैसा बग़रज़े हिफ़ाज़त) दफ़्न हो या इस्तेमाल में न आता हो।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–117, बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–42)

मस्अला: हनफ़ीया (रह.) के नज़दीक ज़ेवरात पर बहरहाल ज़कात वाजिब है, ख़्वाह वह मर्दों के हों या औरतों के, तराश कर बने हों या पिघला कर, बरतन हों या कुछ

और, (इस्तेमाल में आते हों या न आते हों) यानी अगर निसाब के बराबर होंगे तो ज़कात है।

(किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–978)

खोये हुए ज़ेवर की ज़कात

सवाल: अगर कोई ज़ेवर खोया जाए तो उसकी ज़कात देना लाज़िम है या नहीं?

जवाब: अगर वह ज़ेवर (माल) ख़ुद ख़र्च कर दिया तब तो सालहाए गुज़श्ता की ज़कात वाजिब रहेगी, और अगर ख़ुद गुम हो गया तो गुजश्ता सालों की ज़कात साक़ित हो गई, और अगर गुम होने के बाद मिल गया तो देखना चाहिए कि अगर उस साल ज़कात पूरा होने के बाद मिला, तो उन अैयामे गुम गश्तगी की ज़कात लाज़िम न आएगी। रहा आइंदा के लिए ज़कात का आना, उसका ये हुक्म है कि अगर सिवाए उसके उस शख़्स के पास पहले से इस क़िस्म का निसाब है तो उसके साथ उसकी ज़कात भी दी जाएगी, और अगर निसाब से कम है तब पाने के वक़्त से साले कामिल गुज़रना शर्त होगा। और अगर साल के अन्दर मिल गया तब भी देखना चाहिए कि उसके पास सिवाए उसके और माल भी उस क़िस्म का है या नहीं। अगर नहीं तो वक़्त पाने से जब एक साल गुज़र जाए तब ज़कात लाज़िम आएगी और अगर माल भी है कि दोनों मिल कर निसाबे ज़कात या ज़ाएद हो जाए तो उसकी ज़कात माले बाक़ी के साथ दी जाएगी।

(इमदादुलफ़तावा जिल्द–2 सफ़्हा–23)

ज़ेवर की ज़कात से मुतअल्लिक़ चंद सवालात

सवाल: (1) मुख़्तलिफ़ औक़ात में मुख़्तलिफ़ ज़ेवर ख़रीदे

गए, उन पर ज़कात कब फ़र्ज़ होगी? (2) ज़ेवरात की ख़रीद की क़ीमत पर ज़कात है या कि मौजूदा क़ीमत पर? (3) ज़ेवरात की क़ीमत में मोतियों और नगीनों की क़ीमत और बनाई की भी उजरत लगाई जाएगी या कि सिर्फ़ सोने की क़ीमत लगाएंगे? (4) ज़ेवर में सोने के अलावा मिलावट भी होती है, क्या उसकी ज़कात भी फ़र्ज़ है?

जवाबः आपके पास जिस रोज़ इतना माल हो गया कि सोना, चांदी, माले तिजारत और नक़दी, इन चारों या बाज़ का मजमूआ या उनमें से कोई एक चीज़ 612.35 ग्राम चांदी की क़ीमत के बराबर होगी, उस रोज़ आप साहबे निसाब हो गए, उस दिन की क़मरी तारीख़ याद रखें, एक साल के बाद फिर जब यही क़मरी तारीख़ आएगी उस में आपके पास मज़कूरा चारों चीज़ों में से जो मिक़्दार मौजूद होगी उस पर ज़कात फ़र्ज़ होगी। अगरचे कोई चीज़ तारीख़े मज़कूर से सिर्फ़ एक ही रोज़ पहले आप की मिल्क में आई हो, बशर्तेकि उस तारीख़ में निसाब पूरा हो, यानी चारों चीज़ों का मजमूआ 612.35 ग्राम चांदी की क़ीमत से कम न हो।

(2) जिस क़मरी तारीख़ में साल पूरा हुआ उसमें जो निर्ख़ हुआ होगा वह लगाया जाएगा।

(3) सिर्फ़ सोने की क़ीमत पर ज़कात है, मोतियों और नगीनों की क़ीमत और ज़ेवर बनवाने की उजरत नहीं लगाई जाएगी।

(4) ज़ेवर बनाने में जिस हिसाब से मिलावट शामिल की गई, उस क़िस्म के मख़्लूत क़ीराती सोने की क़ीमत लगाई जाएगी। (अहसनुल फ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–270)

बीवी के साहबे निसाब होने से शौहर का हुक्म

मस्अला: बीवी अगर साहबे निसाब हो तो उसकी वजह से शौहर साहबे निसाब नहीं होता और कुर्बानी व ज़कात वग़ैरा उसके ज़िम्मे वाजिब नहीं है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–50, बहवाला हिदाया जिल्द–1 सफ़्हा–167, किताबुज़्ज़कात)

बीवी का ज़ेवर और क़र्ज़ मर्द पर

मस्अला: ज़ेवर बीवी का है और क़र्ज़ मर्द के ज़िम्मे है, इसलिए ज़कात अदा करते वक़्त उस क़र्ज़ को मिन्हा (वज़ा) नहीं किया जाएगा, बल्कि बीवी पूरे ज़ेवर की ज़कात अदा करेगी, अलबत्ता अगर बीवी के ज़िम्मे क़र्ज़ हो तो वह मिन्हा किया जाएगा।

(आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–347)

क्या ज़कात में शौहर की इजाज़त ज़रूरी है?

मस्अला: अगर वह ज़ेवर शौहर का दिया हुआ और बनवाया हुआ है और उसने बीवी की मिल्क नहीं किया जैसा कि (बाज़ जगह का) उर्फ़ है तो उसकी ज़कात शौहर के ज़िम्मा है औरत पर उसकी ज़कात लाज़िम नहीं है। अगर शौहर उसकी ज़कात न देगा तो वह गुनहगार होगा, औरत गुनहगार नहीं होगी। और अगर वह ज़ेवर औरत के जहेज़ में उसके वालिदैन की तरफ़ से आया हुआ है तो वह उसकी मिल्क है, उसी में से कुछ हिस्सा (या) फ़रोख़्त कर के ज़कात अदा करे, और शौहर की इजाज़त की ज़रूरत नहीं है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–120, बहवाला हिदाया किताबुज़्ज़कात जिल्द–1 सफ़्हा–167)

मस्अलाः जब कि शौहर ने उस ज़ेवर का मालिक बीवी को बना दिया तो ज़कात बीवी के ज़िम्मा है अगर शौहर उसकी तरफ़ से ज़कात अदा करे, ये भी दुरुस्त है।
(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–121 व जिल्द–6 सफ़्हा–47, बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–502)

ज़ेवरात की ज़कात औरत कहां से दे?

सवालः ज़ेवरात औरत की मिलकियत होते हैं, उसकी ज़कात का बोझ मर्दों पर क्यों डाला जाता है? और अगर औरत ख़ुद अदा करे तो कहां से, क्यों कि उसके पास सिवाए ज़ेवरात के और कुछ (नक़द) नहीं है?

जवाबः जो ज़ेवर औरत का ममलूका व मक़्बूज़ा है और निसाब के बराबर है, उसकी ज़कात उस औरत ही के ज़िम्मा वाजिब है, अगर उसका शौहर तबर्रुअन बीवी की तरफ़ से दे दे या औरत शौहर से लेकर दे दे या जो ख़र्च उसका शौहर उसको देता है, उसमें से (बचा कर) अदा कर दे तो ये जाइज़ है। और अगर कुछ भी न हो सके तो उस औरत को उसी ज़ेवर में से ज़कात देनी पड़ेगी। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–285, बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–40)

ज़ेवर का कुछ हिस्सा बक़द्रे ज़कात दे दिया जाएगा कि ये क़र्ज़ अल्लाह तआला का है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–109 व आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–345)

क्या बीवी के ज़ेवर की ज़कात मर्द पर है?

सवालः एक थोड़ी आदमनी वाले शख़्स की बीवी शादी के मौक़ा पर दस तोला सोना ज़ेवरात की शक्ल में लाती है, क्या शौहर के लिए ज़रूरी है कि हर हाल में

उसकी ज़कात अदा करे?

जवाबः चूंकि ये ज़ेवरात बेगम साहबा की मिलकियत में हैं इसलिए उन ज़ेवरात की ज़कात बेगम साहबा के ज़िम्मा है, ग़रीब शौहर के ज़िम्मा नहीं। औरत को चाहिए कि उन ज़ेवरात का बक़द्रे वाजिब हिस्सा ज़कात में दे दिया करे, अपनी ज़कात शौहर के ज़िम्मा न डाले।

मस्अलाः ज़ेवर अगर बीवी की मिलकियत (बक़द्रे निसाब) है तो ज़कात उसी के ज़िम्मा है लेकिन अगर बीवी के कहने पर उसकी तरफ़ से मर्द ज़कात अदा कर दे तो अदा हो जाएगी। (आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–345)

शौहर और बीवी की ज़कात का हिसाब

सवालः शादी पर लड़कियों को जो ज़ेवरात मिलते हैं वह उनकी मिलकियत होते हैं लेकिन वह ज़कात अपने शौहरों की कमाई हुई रक़म से अदा करती हैं तो क्या इस सूरत में अगर शौहरों के पास भी कुछ रक़म हो लेकिन निसाब से वह कम हो तो क्या उस रक़म को बीवियों के ज़ेवरात की मालियत में शामिल कर के ज़कात दी जा सकती है या दोनों का हिसाब अलग अलग होगा?

जवाबः दोनों का अलग अलग हिसाब होगा।

(आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–346)

दुल्हन को जो ज़ेवर दिया जाता है उसकी ज़कात किस पर है?

सवालः दुल्हा का बाप दुल्हन को जो ज़ेवर चढ़ाता है (देता है) उसकी ज़कात किस के ज़िम्मा है?

जवाबः वह ज़ेवर जो दुल्हा का (यानी लड़के का) बाप देता है, वह ज़ेवर हमारे उर्फ़ में दुल्हन की मिल्क नहीं है लिहाज़ा उसकी ज़कात दुल्हा के बाप के ज़िम्मा है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द—6 सफ़्हा—74 व किफ़ायतुलमुफ़्ती जिल्द—4 सफ़्हा—246)

"और जहां उर्फ़ में वह ज़ेवर दुल्हन की मिल्क क़रार पाता है उसकी ज़कात दुल्हन पर होगी।"

(मुहम्मद रफ़अत क़ासमी गुफ़िरलहू)

लड़की के लिए ज़ेवर बनवा कर रखा तो उसकी ज़कात किस पर है?

सवालः जो ज़ेवर लड़कियों की शादी के लिए बनवा कर रखा जाता है तो लड़की के ऐसे ज़ेवर पर ज़कात उसके वालिदैन पर है या लड़की पर?

जवाबः हामिदन व मुसल्लियन। अगर वह ज़ेवर लड़की की मिल्क कर दिया है तो उस पर ज़कात बुलूग़ से पहले फ़र्ज़ नहीं है न लड़की पर न वालिदैन पर। बालिग़ होने के बाद खुद लड़की पर फ़र्ज़ होगी, अगर लड़की की मिल्क नहीं किया तो जिसकी मिल्क है उस पर ज़कात फ़र्ज़ होगी। (फ़तावा महमूदिया जिल्द—11 सफ़्हा—126)

लड़की के वालदैन ने जो ज़ेवर दिया उसकी ज़कात किस पर है?

सवालः ज़ैद की बीवी को जो ज़ेवर वालिदैन से मिला है, उसकी ज़कात ज़ैद पर है या बीवी मज़कूरा पर?

जवाबः ज़कात ज़ैद की बीवी के ज़िम्मा है (जो ज़ेवर माँ के घर से मिला है, क्योंकि उसकी लड़की ही मालिक होती है) वही अदा करे, ज़ैद के ज़िम्मा उसकी ज़कात अदा करना लाज़िम नहीं है, और जब ज़ैद को वुसअत हो जाए और वह अपनी बीवी की तरफ़ से ज़कात देना चाहे तो वह भी दे सकता है और कई साल की ज़कात मुतफ़र्रिक़ तौर से थोड़ी थोड़ी देना भी दुरुस्त है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–66 बहवाला रद्दुलमुह्तार किताबुलज़कात जिल्द–2 सफ़्हा–16)

महर में जो ज़ेवर दिया गया उसकी ज़कात किस पर है?

मसअला: जब वह ज़ेवर औरत को महर में दिया गया तो वह मालिक हो गई ज़ेवर की, पस ज़कात उस ज़ेवर की उसी के (औरत के) ज़िम्मा होगी, शौहर के ज़िम्मा न होगी। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–54, बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–13 किताबुज़्ज़कात)

उर्फ़ यानी रिवाज का मतलब

शरीअ़त ने मर्द को आज़ाद छोड़ा है कि बीवी के लिए जो ज़ेवर मर्द बनायें उसे अपनी ही मिलकियत में रख कर आरियतन (उधार सिर्फ़ इस्तेमाल करने के लिए) उसे इस्तेमाल करायें या मिलकियत भी बीवी ही की कर दें। शरीअ़त किसी भी सूरत में आप पर दबाव या पाबंदी नहीं लगाती है। अब रिवाज को देखिएगा कि किसी कुंबे व ख़ानदान में ज़ेवर के मुतअ़ल्लिक़ जो भी रिवाज होगा वह अमली नज़ाइर की बिना पर ही तो होगा। दस, बीस, पचास, सौ वाक़िआत ऐसे ज़रूर पेश आए होंगे जिन से वाज़ेह हो गया होगा कि उस कुंबे के मर्द अपनी बीवियों को ज़ेवर आरियतन देते हैं या तोहफ़तन। अगर तोहफ़तन देते हैं तो उसका मतलब ये हुआ कि बीवी मालिक हो जाती है। ऐसी सूरत में उस कुंबे का कोई भी मर्द अगर बीवी को ज़ेवर देगा और देते वक़्त ये सराहत न करे कि ये आरियतन है या तोहफ़तन तो कुदरती बात है कि बीवी की मिल्क हो जाएगा। और अगर शौहर तोहफ़तन नहीं देना चाहता था तो उस पर लाज़िम था कि देते वक़्त

वज़ाहत व सराहत कर देता कि मैं आरियतन दे रहा हूं, तब बेशक औरत मालिक न बनती। इसी तरह बरअक्स। अगर अमली नज़ाइर की बुनियाद पर कुंबे वाले ये जानते हैं कि हमारे यहाँ जो ज़ेवर बीवियों को दिया जाता है वह तोहफ़तन नहीं दिया जाता बल्कि आरियतन दिया जाता है तो ज़ाहिर है कि उस कुंबे का जो मर्द अपनी बीवी को कोई ज़ेवर देगा और किसी क़िस्म की वज़ाहत नहीं करेगा तो उसके बारे में यही समझा जाएगा कि कुंबे के मारूफ़ रिवाज के मुताबिक़ उसने आरियतन दिया है तोहफ़तन नहीं। लिहाज़ा औरत उसकी मालिक न बनेगी।

यहां इससे बहस नहीं कि रिवाज क्या है। रिवाज चाहे ज़ेवर आरियतन देने का हो या तोहफ़तन। ये इंसानों की अपनी अपनी पसंद का मआमला है, इसमें जो भी सूरत ख़ानदान पसंद करता है, शरीअ़त उसके लिए जवाब देह नहीं। मसलन जिस कुंबे के आप फ़र्द हैं फ़र्ज़ कीजिए उसमें रिवाज ये है कि ज़ेवर औरतों को आरियतन दिया जाता है न कि तोहफ़तन। अब आप अपनी लड़की की शादी उसी कुंबे के किसी फ़र्द से करना चाहते हैं और ख़्वाहिश ये है कि जो ज़ेवर आप की बेटी को मिले वह आरियतन न मिले बल्कि तोहफ़तन मिले, तो बेशक आप को ये ख़्वाहिश करने का हक़ है। शरीअ़त बिल्कुल मना नहीं करती, मगर शरीअ़त का ये कहना भी माकूल होगा कि आप लड़के के वालिदैन पर खुल कर अपनी ख़्वाहिश का इज़्हार फ़रमा दें ताकि वह ग़ौर कर सकें कि ये बात हमारे लिए क़ाबिले क़बूल है या नहीं। अगर आप इज़्हार नहीं फ़रमाएंगे तो ख़मोशी का मतलब इसके सिवा क्या

समझा जाएगा कि जो रिवाज, तरीक़ा उनके कुंबे का है उसी को आप ने भी मान लिया है। फिर ये कैसे जाइज़ होगा कि बाद में किसी वक़्त आप की बेटी ये दावा करे कि शौहर का दिया हुआ ज़ेवर मेरी मिलकियत है। इसी का नाम है "अलमारूफु कलमशरूत" तो ज़कात भी उस पर ही है जिसकी मिल्क ज़ेवर हो।

(मुहम्मद रफ़अत क़ासमी ग़ुफ़िरलहू)

लड़कियों के नाम सोना करने पर ज़कात का हुक्म

सवालः मेरी तीन बेटियाँ हैं, मैंने उनकी शादी के लिए बीस तोला सोना ले रखा है और उसके अलावा बरतन, कपड़े वग़ैरा भी हैं, क्या उन चीज़ों पर ज़कात देनी पड़ेगी?

जवाबः अगर आप ने उस सोने का मालिक अपनी बच्चियों को बना दिया है तो उनके जवान (बालिग़) होने तक तो उन पर ज़कात वाजिब नहीं, जवान होने के बाद उन में जो साहबे निसाब हों उन पर ज़कात होगी। और अगर बच्चियों को मालिक नहीं बनाया, मिलकियत आप ही की है तो उस सोने पर ज़कात फ़र्ज़ है। बरतन, कपड़े वग़ैरा इस्तेमाल की चीज़ें आप ने उनके लिए ले रखी हैं उन पर ज़कात नहीं है।

(आप के मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–345)

मस्अलाः चूंकि बच्चियों के नाम ज़ेवर कर दिया गया है, इसलिए वह उसकी मालिक बन गईं इसलिए उस शख़्स के ज़िम्मा यानी जो पहले मालिक था, ज़कात नहीं और हर एक बच्ची की मिलकियत चूंकि **हद्दे** निसाब से कम है इसलिए उनके ज़िम्मा भी ज़कात नहीं, अलबत्ता

जो लड़की बालिग़ हो और उसके पास उस ज़ेवर के अलावा भी कुछ नक़द रुपया पैसा हो ख़्वाह उसकी मिक़्दार कितनी ही कम हो, और उस पर साल भी गुज़र जाए तो उस लड़की पर ज़कात लाज़िम होगी, क्योंकि जब सोने चांदी के साथ कुछ नक़्दी मिल जाए और मजमूआ की क़ीमत साढ़े बावन तोले चाँदी के बराबर हो जाए तो ज़कात फ़र्ज़ हो जाती है। और जो लड़की नाबालिग़ है उसकी मिलकियत पर ज़कात नहीं, जब तक कि वह बालिग़ नहीं हो जाती।

(आप के मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–363)

सिर्फ़ नाम करना ही काफ़ी नहीं है

मस्अला: अगर लड़की को ज़ेवर का मालिक बना दिया तो जब तक वह लड़की नाबालिग़ है उस पर ज़कात नहीं। बालिग़ होने के बाद लड़की के ज़िम्मा ज़कात वाजिब होगी। जबकि सिर्फ़ ये ज़ेवर या उसके साथ कुछ नक़द रुपया निसाब की मिक़्दार को पहुंच जाए सिर्फ़ ये नीयत करने से कि ये ज़ेवर लड़की के जहेज़ में दिया जाएगा ज़कात से मुस्तसना नहीं क़रार दिया जा सकता जब तक कि लड़की को उसका मालिक न बनाया जाए, और लड़की को मालिक बना देने के बाद फिर उस ज़ेवर का (बग़ैर लड़की की इजाज़त के) खुद पहनना जाइज़ नहीं होगा।

(आप के मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–348)

मस्अला: लेकिन औलाद को हिबा करने के बाद उस ज़ेवर पर आप का कोई तअल्लुक़ नहीं होगा।

(आप के मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–366)

क्या महर के वसूल होने से क़ब्ल ज़कात है?

सवालः औरत का महर जो कि शौहर ने अदा नहीं किया तो इस सूरत में औरत के ज़िम्मा महर की ज़कात वाजिब है या नहीं?

जवाबः ज़कात उस पर वसूल होने से पहले वाजिब नहीं है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–57, बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–3 व फ़तावा महमूदिया जिल्द–3 सफ़्हा–87)

मस्अलाः हनफ़ीया के नज़दीक पूरे तौर पर मालिक होने के ये माना हैं कि माल क़ब्ज़े में हो। अगर कोई शख़्स ऐसी चीज़ का मालिक क़रार पाया जो अभी तक उसके क़ब्ज़े में न आई हो, तो उस पर ज़कात वाजिब नहीं है, जैसे औरत का माले महर कि जब तक उसके क़ब्ज़े में नहीं आया उसकी ज़कात वाजिब नहीं है, इस तरह उस माल पर भी ज़कात नहीं है जिस पर कोई शख़्स क़ाबिज़ हो, लेकिन उसका मालिक न हो, जैसे मक़रूज़ कि माल तो उसके क़ब्ज़ा में होता है लेकिन मालिक उसका दूसरा शख़्स होता है। (किताबुलफ़िक्ह अललमज़ाहिबिलअरबआ जिल्द–1 सफ़्हा–961)

"महर वसूल होने से क़ब्ल ज़कात वाजिब नहीं, वसूल होने के बाद उस रुपये पर पूरा एक साल भी गुज़र जाए जब ढाई फ़ीसद के हिसाब से ज़कात वाजिब होगी, और जो रुपया साल के अन्दर ख़र्च हो गया है उस पर नहीं है सिर्फ़ बचत पर है और गुज़श्ता सालों की भी नहीं है।" (मुहम्मद रफ़अत क़ासमी)

महर वाली औरत को ज़कात देना कैसा है?

मस्अलाः एक औरत का महर तीन हज़ार रुपये है लेकिन उसका शौहर बहुत ग़रीब है कि अदा नहीं कर सकता, तो ऐसी औरत को भी ज़कात का पैसा देना दुरुस्त है और अगर उसका शौहर अमीर है लेकिन महर नहीं देता या उस औरत ने अपना महर मआफ़ कर दिया है तो भी उस औरत को ज़कात देना दुरुस्त है, लेकिन जिस औरत को ये उम्मीद हो कि जब अपने शौहर से महर मांगूंगी वह अदा कर देगा, तो ऐसी औरत को ज़कात की रक़म देना दुरुस्त नहीं है।

(इमदाद मसाइलुज़्ज़कात सफ़्हा–74)

क्या बीवी का महर ज़कात के वाजिब होने में मानेअ है?

मस्अलाः मिक़्दारे निसाब का मालिक होने के बाद ज़कात उसी वक़्त वाजिब होती है जब आदमी पर इतना ज़्यादा क़र्ज़ न हो कि उसके अदा करने में निसाबे ज़कात बाक़ी न रह सके। उस क़र्ज़ से हुक़ूक़ुल्लाह मुस्तस्ना हैं यानी बंदों पर अल्लाह तआला के जो क़र्ज़ हैं मसलन कफ़्फ़ारे, सदक़ए फ़ित्र, सफ़रे हज वग़ैरा उनके इख़राजात मिन्हा (वज़अ) करने के बाद अगर माल इतना न रहता हो कि ज़कात वाजिब हो सके तो भी ज़कात वाजिब होगी और ये हुक़ूक़ुल्लाह ज़कात के वाजिब होने में रुकावट नहीं बनेंगे। (ख़ुलासतुलफ़तावा जिल्द–1 सफ़्हा–240)

अलबत्ता बंदों के जो हुक़ूक़ हों उनकी अदाएगी के बाद अगर निसाब बाक़ी न रहता हो तो ज़कात वाजिब नहीं होगी। उसका तक़ाज़ा है कि बीवी के महर की रक़म वज़अ करने के बाद अगर निसाब-बाक़ी न रह

पाता हो तो ज़कात वाजिब न होगी। मगर अमलन चूंकि इस ज़माना में लोग महर की तरफ़ से बहुत ग़ाफ़िल हो चुके हैं और बीवियाँ उमूमन उसे मआफ़ कर देती हैं इसलिए इस क़र्ज़ की वजह से ज़कात पर कोई असर नहीं पड़ेगा और ज़कात वाजिब होगी।

फ़तावा आलमगीरी में है कि अगर मर्द के ज़िम्मा महरे मुअज्जल हो और उसकी अदाएगी का इरादा न रखता हो तो ये फ़र्ज़ वजूबे ज़कात के लिए रुकावट नहीं होगा। (फ़तावा आलमगीरी जिल्द–1 सफ़्हा–89 व जदीद फ़िक़्ही मसाइल सफ़्हा–124)

मस्अला: महरे मुअज्जल (जो फ़ौरी तौर पर वाजिबुलअदा नहीं) जैसा कि उमूमन होता है मानेअ़ ज़कात से नहीं है यानी ये क़र्ज़ (औरत का) महर मुअज्जल रुपया से वज़अ़ न किया जाएगा बल्कि तमाम रुपया मौजूदा की ज़कात देना ज़रूरी है।

मसलन अगर किसी के पास दस हज़ार रुपयां मौजूद है और पांच हज़ार का क़र्ज़ महरे मुअज्जल बीवी का उसके ज़िम्मा है तो वह शख़्स पूरे दस हज़ार रुपये की ज़कात ढाई सौ रुपये अदा करेगा। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–46, बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–6)

मस्अला: शौहर के ज़िम्मा दैने महर वाजिब है अगर वह मुअज्जल है यानी जिस वक़्त भी बीवी तलब करे उसका अदा करना ज़रूरी है या महरे मुवज्जल (फ़ौरी नहीं) है लेकिन शौहर ख़ुद ही उसको अदा करने की फ़िक्र और सई में लगा हुआ है और जमा कर रहा है ताकि अदा करे तो ऐसा दैन (क़र्ज़) मानेअ़ अ़न वजूबे

ज़कात है। इस मिक़्दारे दैन के अलावा उसके पास बकद्रे निसाब माल होगा तो उस पर ज़कात वाजिब होगी वरना नहीं। और अगर शौहर अदा करने की फ़िक्र व सई में लगा हुआ नहीं है बल्कि उसको इत्मीनान है कि अदा नहीं करना, तो ऐसा दैन मानेअ़ अ़न वजूबे ज़कात नहीं है। (फ़तावा महमूदिया जिल्द–13 सफ़्हा–104)

औरत को महर मिल जाने पर ज़कात का हुक्म

अगर किसी औरत को निकाह के बाद पूरा महर मिल जाए और एक साल तक उसके क़ब्ज़े में रहे और उसके बाद उसका शौहर ख़लवते सहीहा से क़ब्ल उस औरत को तलाक़ दे दे और दिए हुए महर में से निस्फ़ वापस कर ले तो अगर वह महर नक़द यानी सोने, चांदी की क़िस्म से है तो उस औरत को पूरे महर की ज़कात देना होगी और अगर वह नक़द की क़िस्म से नहीं है तो फिर पूरे महर की ज़कात उसके ज़िम्मा न होगी, बल्कि निस्फ़ की होगी। (इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–4 सफ़्हा–33)

महर में मिली हुई ज़मीन का हुक्म

सवालः एक ज़मीन जो मैंने तिजारत की नीयत से ली थी, वह या उसका एक हिस्सा मैं अपनी अहलिया को उसके महर की रक़म के बदले में देना चाहता हूं, क्या मेरी अहलिया को उस ज़मीन के हिस्सा पर ज़कात देनी होगी? अगर वह उसको घर बनाने की नीयत से रखना चाहे?

जवाबः आपकी अहलिया पर उस ज़मीन की ज़कात फ़र्ज़ नहीं, ख़्वाह उसमें तिजारत की नीयत करे या तामीर की, अलबत्ता महर की रक़म के एवज़ में आप से ख़रीदते वक़्त अगर उसकी तिजारत की नीयत हो तो ज़कात

फ़र्ज़ होगी। (अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–296)

मस्अलाः औरत का महर मसलन दस कोन्टल गेहूं था, उसने वसूल करते वक़्त उसमें तिजारत की नीयत की कि उसमें तिजारत करूंगी और खाऊँगी नहीं तो सिर्फ़ नीयते तिजारत से ज़कात वाजिब न होगी जब तक अमले तिजारत न करे। (अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–295, बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–15)

क्या इस्तेमाल वाले ज़ेवरात पर ज़कात है?

मस्अलाः ज़ेवर सोने व चांदी का जब बमिक़्दारे निसाब हो, उस में ज़कात वाजिब है, इस्तेमाल करे या न करे।

(हिदाया जिल्द–1 सफ़्हा–177)

मस्अलाः सोने व चांदी की हर चीज़ और सिक्का पर ज़कात एक साल गुज़रने पर है, अगरचे वह दफ़्न हो या इस्तेमाल में न आता हो।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–117)

अशरफ़ी पर ज़कात का हुक्म

सवालः क्या ज़कात दोनों अक़्साम के सोने, चांदी पर है या सिर्फ़ अशरफ़ी की शक्ल के सोने पर, और चांदी पर?

जवाबः ज़कात दोनों पर वाजिब है, यानी ज़ेवरात और अशरफ़ी दोनों पर। (जबकि निसाब को पहुंच जाए)।

(आप के मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–365)

ज़ेवर के नग और खोट का हुक्म

मस्अलाः सोने के ज़ेवर में जो नग वग़ैरा लगाते हैं उन पर ज़कात नहीं, क्योंकि उनको अलग किया जा सकता है, अलबत्ता जो खोट मिला देते हैं वह सोने के

वज़न में शुमार होगा। उस खोट मिले सोने की बाज़ार में जो क़ीमत होगी, उसके हिसाब से ज़कात अदा की जाएगी।

(आप के मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–365)

जड़ाव ज़ेवरात की ज़कात किस तरह दें?

सवाल: किसी ज़ेवर में चपड़ा भरा हुआ है और बाज़ में नग जड़े हुए हैं, अगर ये निकाल दिए जाएं तो ज़ेवर ख़राब हो जाएगा, अगर अंदाज़ा कराया जाए तो पूरी तरह पता नहीं चल सकता है। अगर सोना निसाब से कम है तो उसकी ज़कात बशुमूल चांदी के दी जाएगी या सोने की ज़कात अलाहिदा दी जाएगी और सोने व चांदी की ज़कात एक चीज़ से निकाली जाएगी या सोने की ज़कात सोने से और चांदी की ज़कात चांदी से दी जाएगी। और अगर ज़कात में कोई ज़ेवर निकाला जाए तो कोई हरज तो नहीं है?

जवाब: अंदाज़ा सहीह करा के ज़ेवर सोने व चांदी की ज़कात देनी चाहिए, ये दुरुस्त है मगर अंदाज़ा करने वाले से कह दिया जाए कि जहां तक हो एहतियात को मद्दे नज़र रखे, मसलन ज़्यादा से ज़्यादा जिस क़दर चांदी व सोना उसमें मालूम हो उसको लिया जाए और सोने की ऐसी सूरत में क़ीमत कर के चांदी को शामिल कर के चांदी से ज़कात दी जाए, ख़्वाह दोनों की ज़कात सोने से दी जाए। अलग़रज़ एक चीज़ से ज़कात देना दुरुस्त है, ढाई फ़ीसद के हिसाब से ज़कात दी जाए, और ज़कात में अगर ज़ेवर ही दे दिया जाए तो कुछ हरज नहीं है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–119, बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–45 बाब ज़कातुलमाल व हिदया

जिल्द–1 सफ़्हा–176)

जिस ज़ेवर में जवाहरात जड़े हों उसका हुक्म

मस्अला: ज़ेवर जो चांदी और सोने का हो (जिसमें जवाहरात जड़े हुए हों) उसमें बक़द्रे चांदी व सोने के ज़कात फ़र्ज़ है। यानी अगर उसमें जवाहरात हों तो उनकी मालियत पर ज़कात फ़र्ज़ नहीं है, सिर्फ़ चांदी सोने की मालियत पर ज़कात है। (किफ़ायतुलमुफ़्ती जिल्द–4 सफ़्हा–229 व फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–130 बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–42)

ख़ालिस जवाहरात के ज़ेवरात का हुक्म

मस्अला: जवाहरात मसलन हीरा, ज़मुर्रद, लाल, याक़ूत वग़ैरा पर ज़कात नहीं है मगर जब कि वह तिजारत के लिए न हों। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–133)

मस्अला: जो ज़ेवर ख़ालिस जवाहरात के हों, उनका हुक्म ये है कि ज़ेवरात जवाहरात के अगर तिजारत के लिए नहीं हैं तो उन पर ज़कात नहीं है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–130, बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–18 व फ़तावा महमूदिया जिल्द–3 सफ़्हा–71)

मस्अला: सच्चे मोतियों के हार वग़ैरा पर ज़कात नहीं है, मगर माले तिजारत पर है। (बहिश्ती ज़ेवर जिल्द–3 सफ़्हा–25 व रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–131)

मस्अला: सोने चांदी के अलावा दीगर अश्या के ज़ेवरात मसलन जवाहरात, मरजान, ज़बरजद और अलमास के बने हुए (बग़ैर सोने या चांदी के) ज़ेवरात पर ज़कात नहीं है क्योंकि ये पत्थर अफ़ज़ाइश पज़ीर नहीं हैं।

(फ़िक़्हुज़्ज़कात जिल्द–2 सफ़्हा–277)

जिन ज़ेवरात में ग़श मिला हुआ हो उनका हुक्म

सवाल: हमारे यहां जो ज़ेवर सोने का बनता है उस में तीसरा हिस्सा ग़श (खोट) का मिलाया जाता है। ऐसे ज़ेवर की ज़कात किस हिसाब से दी जाएगी?

जवाब: जिसमें ग़ालिब सोना हो, यानी निस्फ़ से ज़ाएद सोना हो तो वह सोने के हुक्म में है और मिस्ल ख़ालिस सोने के उसमें ज़कात वाजिब है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–115, बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–42)

मस्अला: फ़ीरोज़ा, याक़ूत वग़ैरा पर ज़कात वाजिब नहीं, उनके वज़न को महसूब कर के सोने चांदी के ज़ेवर की ज़कात अदा की जाएगी।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–13 सफ़्हा–113)

नोट: अगर किसी शख़्स ने हीरे व जवाहरात को शौक़िया जमा कर के रखा है तो उस पर ज़कात नहीं है और अगर सिर्फ़ ज़कात से बचने के लिए ये हीला किया तो शरई एतेबार से हनफ़ीया (रह.) के नज़दीक उन पर ज़कात नहीं, लेकिन चूंकि गुरबा का हक़ मारा जाता है तो नीयत के पेशेनज़र इन्दल्लाह मुवाख़ज़ा का ख़ौफ़ है। (रफ़अत)

मिलावटी अश्या पर ज़कात का हुक्म क्या है?

मस्अला: हनफ़ीया (रह.) के नज़दीक मिलावटी अश्या में उस धात का एतेबार किया जाएगा जिसकी मिक्दार ज़्यादा हो, ख़्वाह वह सोना हो या चांदी या कोई और

धात, लिहाज़ा सोने के साथ चांदी मिली हुई अश्या में अगर सोना ज़्यादा है तो सोने के मताबिक़ ज़कात अदा की जाएगी और उस पूरी चीज़ को सोना तसव्वुर किया जाएगा। और अगर चांदी की मिक़्दार ज़्यादा है तो चांदी तसव्वुर किया जाएगा। पस अगर निसाब पूरा हो जाए तो ज़कात निकाली जाए वरना नहीं। (किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–996 व दुर्रेमुख़्तार जिल्द–2 सफ़्हा–54 व फ़तावा महमूदिया जिल्द–3 सफ़्हा–71)

सच्चे गोटा और कामदार कपड़े पर ज़कात

सवालः औरत के क़ीमती कपड़े जिसमें चांदी के तार होते हैं, ऐसे कपड़ों की ज़कात किस तरह मुशख़्ख़स की जाए क्योंकि उसमें ये अंदाज़ा नहीं होता कि चांदी कितनी है?

जवाबः जो तार ज़री के बनारसी कपड़ों वग़ैरा में हैं उनका अंदाज़ा खुद कर के या जानने वालों से करा कर ज़कात देनी चाहिए और (सच्चे चांदी वग़ैरा के) गोटे ठप्पे का भी अंदाज़ा करा लेना चाहिए। उसका अंदाज़ा आसान है कि मसलन ठप्पा का वैसा ही थान तौल कर देख लिया जाए कि किस क़दर वज़न का है। अलग़रज़ ऐसे मवाक़ेअ़ में अंदाज़ा काफ़ी है। अंदाज़ा (तख़्मीना) हत्तलवुसअ़ ऐसा कया जाए कि कमी न रहे, चाहे कुछ ज़्यादती हो जाए। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–121, बहवाला हिदाया बाब ज़कातुलमाल जिल्द–1 सफ़्हा–77)

मस्अलाः गोटा जब कि बक़द्रे निसाब हो जाए तो उसमें ज़कात वाजिब है, या अगर निसाब चांदी वग़ैरा का मौजूद हो तब भी गोटे का अंदाज़ा कर के उसमें शामिल

कर के ज़कात देनी चाहिए।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–330, बहवाला रद्दुलमुहतार बाबज़कातुलमाल जिल्द–2 सफ़्हा–41)

मस्अला: इस्तेमाली बरतन और कपड़ों पर ज़कात वाजिब नहीं, हां उन कपड़ों में अगर सच्चा काम हो तो उसमें ज़कात वाजिब होगी। तिजारती सामान और तिजारती कपड़ों में ज़कात वाजिब है। (फ़तावा रहीमिया जिल्द–5 सफ़्हा–153, बहवाला दुर्रेमुख़्तार मअ़ शामी जिल्द–2 सफ़्हा–10 व इमदादुलफ़तावा जिल्द–2 सफ़्हा–6)

मस्अला: कपड़ों पर चाहे जितने क़ीमती हों ज़कात नहीं है, लेकिन उनमें सच्चा काम इतना है कि अगर चांदी छुड़ाई जाए तो साढ़े बावन तोला बैठे तो उस चांदी पर ज़कात है और अगर कम हो तो ज़कात नहीं है।

(बहिश्ती ज़ेवर बहवाला जौहरा नैय सफ़्हा–117 व किफ़ायतुलमुफ़्ती जिल्द–4 सफ़्हा–153)

जो रक़म वुरसा के लिए जमा की, क्या उस पर ज़कात होगी?

सवाल: एक शख़्स ने अपनी जाएदाद अपनी ज़िन्दगी में फ़रोख़्त कर दी और वह रक़म अपने वुरसा के लिए रखी है तो उस पर उस रक़म की ज़कात वाजिब है या नहीं?

जवाब: फ़िलहाल वह शख़्स उस रक़म का मालिक है, इसलिए उस पर उस रक़म की ज़कात वाजिब है।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–5 सफ़्हा–154)

तरका मिलने पर ज़कात का हुक्म

सवाल: एक बीवा को जिसके औलाद भी है शौहर के तरका में तक़रीबन चालीस हज़ार रुपये मिला है। क्या

उस पर ज़कात वाजिब है?

जवाबः उस रक़म को शरई हिस्सों पर तक़्सीम किया जाए। हर एक के हिस्से में जो रक़म आए, अगर वह निसाब (साढ़े बावन तोला चांदी की मालियत) को पहुंची हो तो उस पर ज़कात फ़र्ज़ है, नाबालिग़ बच्चों के हिस्से पर नहीं। (आप के मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–396)

गुज़श्ता सालों की ज़कात का हुक्म

मस्अलाः गुज़श्ता सालों की ज़कात जो अदा नहीं हुई, उसकी अदाएगी की अब इसके सिवाए और कुछ सूरत नहीं हो सकती कि अपने ख़्याल में उन बरसों का अंदाज़ा किया जाए कि हर साल में कितना कितना रुपया तख़्मीनन मौजूद था और उस अंदाज़ा से जिस क़द्र रुपया हर साल में मौजूद होना ख़्याल में आए, उसकी ज़कात का हिसाब करा कर उसको अदा किया जाए और हत्तलवुस्अ़ तख़्मीना ऐसा किया जाए कि अपने ख़्याल के मुवाफ़िक़ उसमें कमी न रहे, कुछ ज़्यादा ही हो जाए कि एहतियात इसी में है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–337)

साबिक़ा ज़माना की ज़कात मालूम ने हो तो क्या करे?

सवालः ज़कात के वाजिबुलअदा होने की मुद्दत का शुमार जब कि ज़कात की रक़म का ठीक ठीक हिसाब करना दुश्वार है, क्योंकि सोने का भाव (रेट) हासिल करना मुश्किल है तो फिर ज़कात किस तरह अदा की जाए?

जवाबः इस सूरत में तख़मीना और अंदाज़ा ही किया जा सकता है कि क़रीबन इतनी रक़म वाजिबुलअदा होगी, एहतियातन अंदाज़ा से ज़्यादा दें।

(आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–367)

शादी के बाद से ज़कात ही न दी तो क्या हुक्म है?

सवालः शादी को नौ साल हो गए हैं, बेगम साहबा के पास जब से अब तक अस्सी तोला सोना है। हम ने अभी तक ज़कात अदा नहीं की, क्योंकि मेरी आमदनी इतनी नहीं है कि कुछ बच जाए, अब ज़कात कैसे अदा करें?

जवाबः अगर ज़कात अदा करने के लिए पैसे न हों तो उतना हिस्सा ज़ेवर का दे दिया जाए। बहरहाल गुज़श्ता सालों की ज़कात आप की बीवी के ज़िम्मा लाज़िम है। हर साल का हिसाब कर के जितनी ज़कात बनती है अदा की जाए। (आप के मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–348)

ज़कात ख़रीद कर्दा क़ीमत पर होगी या मौजूदा क़ीमत पर?

सवालः ज़कात माल की ख़रीद कर्दा क़ीमत पर होगी या मौजूदा क़ीमत पर?

जवाबः ज़कात के अदा करते वक़्त जो क़ीमत है उसका एतेबार होगा, और ज़कात का हिसाब ये है कि चालीसवाँ हिस्सा ज़कात में देना (या उसकी क़ीमत) लाज़िम है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–61, बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–30 ज़कातुलग़नम)

मस्अलाः अदाएगीये ज़कात में माले ज़कात की क़ीमत जहां मुज़क्की (ज़कात देने वाला) है वहां की मोतबर न होगी बल्कि जहां माल मौजूद हो, वहां की क़ीमत मोतबर होगी, और हौलाने हौल भी वहां का मोतबर होगा जहां माल मौजूद हो। (अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–268)

सोने व चांदी की ज़कात किस रेट पर दी जाए?

सवालः सोने का रेट (भाव) डली का तो और है और बने हुए ज़ेवर का अलग है, किस निर्ख़ (रेट) पर ज़कात

दी जाए, क्योंकि बाज़ार वालों का देने का निर्ख़ और है और लेने का अलग है। अगर फ़ुक़रा को सोना ज़कात में दिया जाए तो उनका नुक़सान होता है, क्योंकि बाज़ार वाले उन से कम क़ीमत से ख़रीदते हैं।

जवाब: जो निर्ख़ (रेट) बाज़ार में ऐसे सोने का है यानी जिस क़ीमत में दुकानदार फ़रोख़्त करते हैं, वह क़ीमत लगा कर ज़कात दे और अगर सोना ही ज़कात में देना हो तो मौजूदा सोने का चालीसवाँ हिस्सा ज़कात में दे दे, ये भी दुरुस्त है और ज़कात अदा हो जाएगी, अगरचे फ़ुक़रा किसी भी क़ीमत में फ़रोख़्त कर दें।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–124, बहवाला रद्दुलमुहतार ज़कातुलग़नम जिल्द–2 सफ़्हा–30)

"सोने व चांदी की क़ीमत लगा कर अगर ज़कात देना हो तो जो क़ीमत ज़कात निकालने के वक़्त चांदी सोने की वहां के बाज़ार में हो, उसी हिसाब से अदा करे, क्योंकि ख़रीद के दिन के हिसाब का एतेबार न होगा और क़ीमत भी फ़रोख़्त होने की वह लगाई जाएगी जिस क़ीमत पर वह सोना चांदी उस दिन फ़रोख़्त हो सकता है।" (मुहम्मद रफ़अत क़ासमी)

मस्अला: सोने, चांदी की ज़कात और उश्र में वक़्ते वजूब की क़ीमत मोतबर है, अलबत्ता ज़काते सवाइम में वक़्ते अदा की क़ीमत का एतेबार है।

(अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–268)

रेट मालूम न हो तो क्या किया जाए?

सवाल: अगर क़ीमत सोने व चांदी की सही मालूम न

हो तो अंदाज़ा कर के दो चार माह पेशतर के रेट ज़ेहन में रख कर ज़कात अदा की जा सकती है या नहीं?

जवाबः अस्ल तो यही है कि अदाए ज़कात के वक़्त जो क़ीमत हो उसकी तफ़तीश कर के उसके मुताबिक़ ज़कात अदा की जाए। मगर चूंकि दो चार माह में कोई मज़ीद फ़र्क़ नहीं होता इस वजह से अगर जानिबे एहतियात को पेशे नज़र रख कर इस तरीक़ा से ज़कात अदा करे तो ज़कात अदा हो जाएगी।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–131, बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–30 बाबुलग़नम)

कर्ज़े हसना की ज़कात

सवालः जो रुपया किसी को क़र्ज़े हसना दिया, उस पर ज़कात है या नहीं?

जवाबः वसूल होने के बाद उस रुपया की ज़कात दी जाएगी, अगर वसूल होने से क़ब्ल ज़कात दे दे तो ये भी दुरुस्त है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–45, बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–12)

मस्अलाः क़र्ज़ जो दिया गया है अगर वह तन्हा या दूसरे रुपये मौजूद के साथ मिल कर बक़द्रे निसाब है तो उस पर ज़कात वाजिब है, लेकिन अदा करना बाद वसूले क़र्ज़ के लाज़िम होता है, अगर क़ब्ल अज़ वसूल भी ज़कात दे दी जाएगी तो अदा हो जाएगी। और वह क़र्ज़ जिसके एवज़ (बदला) कुछ ज़ेवर रिहन रखा हो और वह क़र्ज़ जिसके एवज़ कुछ रहन न रखा हो, ज़कात के हुक्म में दोनों बराबर हैं, दोनों की ज़कात बाद वसूल ही के लाज़िम होती है। और वह शुब्हा (कि हमेशा ज़कात

देते देते निसाब न रहे, जबकि तिजारत में न लगा हो) उसका जवाब ये है कि रुपया जमा शुदा ज़कात देते देते जब निसाब से कम हो जाएगा उस वक़्त ज़कात आइंदा को साक़ित हो जाएगी, और जब तक बक़द्रे निसाब रुपया मौजूद है तो ज़कात वाजिब होना ख़िलाफ़े अक़्ल नहीं है, क्योंकि जो शख़्स मालिके निसाब है वह शरअन और उरफ़न ग़नी (मालदार) कहलाता है, और ग़नी को मुहताजों की ख़बरगीरी और उनको अपने पास से कुछ देना मुरव्वत और अक़्ल का तक़ाज़ा है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–52, बहवाला हिदाया बाब ज़कातुलमाल जिल्द–1 सफ़्हा–177)

"इस्लाम के इस क़ानून का मंशा ये भी मालूम होता है कि लोग रुपये जमा कर के बेकार न रख छोड़ें बल्कि उस रुपये को कारोबार में या खेत व ज़मीन में लगाऐं ताकि मुल्क और क़ौम का फ़ाएदा हो और ज़कात बार न गुज़रे, नक़द जमा रखने से मुल्क और क़ौम को सरासर नुक़्सान है, क्योंकि रुपये और सोने चांदी में नुमू और बढ़ने की सलाहियत मौजूद है, अब जो उसको जमा रखे और जो काम उसका है उससे न ले यानी तिजारत वग़ैरा में लगा कर नफ़ा न उठाए तो ये रोकने वाले का क़ुसूर है, ज़कात के वजूब का सबब ज़्यादती नहीं है।"

(मुहम्मद रफ़अ़त क़ासमी ग़ुफ़िरलहू)

जो क़र्ज़ थोड़ा थोड़ा वसूल हो, उसकी ज़कात

मस्अला: जिस वक़्त जिस क़दर क़र्ज़ वसूल होता

जाए, उस वक़्त तक की मअ़ पिछले सालों के ज़कात अदा करनी चाहिए, अगर मक़रूज़ से क़र्ज़ के बदला ज़मीन आई, तब भी क़र्ज़ वसूल हो गया। गुज़श्ता सालों की ज़कात लाज़िम होगी। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–85 बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–48)

जिस क़र्ज़ के वसूल होने की उम्मीद न हो

मस्अला: क़र्ज़ में जो रुपये हैं उसकी ज़कात वसूल होने के बाद अदा करना वाजिब होती है। पस जो रुपया वूसल न हो उसकी ज़कात अदा करना लाज़िम नहीं है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–77, रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–12)

जिस क़र्ज़ की वसूलयाबी की उम्मीद न थी और वह मिल जाए?

मस्अला: जिस वक़्त क़र्ज़ वसूल हो जाए उस वक़्त पिछले सालों की ज़कात भी देना वाजिब है और जिससे वसूल न हो उसकी ज़कात उस वक़्त वाजिब नहीं है, लेकिन अगर कभी वसूल हो गया तो पिछले सालों की भी ज़कात देना वाजिब है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–97, बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–12)

क़र्ज़ की ज़कात किसके ज़िम्मा है?

सवाल: दस माह पेशतर ज़ैद ने बकर को बीस हज़ार रुपये क़र्ज़े हसना दिया। अदाएगी की मुद्दत लामहदूद है, बकर ने दस हज़ार रुपये मकान ख़रीदने में और दस हज़ार रुपये कारोबार में लगाए, रक़म मुनाफ़ा के साथ अब दस हज़ार से बढ़ कर तेरह हज़ार हो गई है। क्या

इस सूरत में ज़कात वाजिब होगी? और अगर होगी तो किस सूरत में?

जवाबः उसूल ये है कि जो रक़म किसी को क़र्ज़ के तौर पर दी जाए उसकी ज़कात क़र्ज़ देने वाले के ज़िम्मा होती है। क़र्ज़ लेने वाले के ज़िम्मा नहीं होती, पस ज़ैद ने जो बीस हज़ार रुपये की रक़म बकर को दे रखी है उसकी ज़कात ज़ैद के ज़िम्मे है। बकर के पास जो सरमाया है ख़्वाह वह कारोबार में लगा हुआ हो या सोने, चांदी और नक़दी की शक्ल में उसके पास मौजूद हो, उस तमाम सरमाया की मजमूई रक़म में बीस हज़ार रुपया मिन्हा कर दिया जाए, जो उसके ज़िम्मा क़र्ज़ है। बाक़ी सरमाया अगर साढ़े बावन तोले चांदी की मालियत के बराबर है तो उसके ज़िम्मा उसकी ज़कात वाजिब है।

(आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–351 व किफ़ायतुलमुफ़्ती जिल्द–4 सफ़्हा–251)

क्या क़र्ज़ दी हुई रक़म पर ज़कात है?

सवालः अगर कुछ रक़म किसी को क़र्ज़ दी हुई हो तो उस रक़म पर ज़कात देनी होगी?

जवाबः जी हां! उस रक़म पर भी हर साल ज़कात वाजिब है। अलबत्ता आप को ये इख़्तियार है कि हर साल जब दूसरे माल की ज़कात देते हैं उसके साथ क़र्ज़ पर दी हुई रक़म की ज़कात दे दिया करें और ये भी इख़्तियार है कि जब क़र्ज़ वसूल हो जाए तो गुज़श्ता तमाम सालों की ज़कात जो उस क़र्ज़ की रक़म पर वाजिब हुई थी वह यकमुश्त अदा करें।

(आप के मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–351)

नादिहिन्दा क़र्ज़दार को दी गई रक़म पर ज़कात

सवालः मुझ से पांच साल पहले दोस्तों ने कुछ रक़म उधार ली थी, वापस देने की कोई तारीख़ या तहरीर नहीं लिखी गई थी, कई मरतबा मुतालबा भी किया। पांच साल हो गए हैं कोई उम्मीद नज़र नहीं आती, और मैंने अब नाउम्मीद हो कर मांगना छोड़ दिया है। क्या उस रक़म पर जो कि मेरे पास नहीं है, पांच साल हो गए हैं ज़कात देनी होगी?

जवाबः जो रक़म किसी को क़र्ज़ दी हो उस पर ज़कात लाज़िम है। अलबत्ता ये इख़्तियार है कि चाहे तो हर साल अदा कर दिया करे या वसूल होने के बाद गुज़श्ता तमाम सालों की ज़कात यकमुश्त (एक साथ) अदा करे। (आप के मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–325)

मक़रूज़ के इन्कार की सूरत में ज़कात का हुक्म

मस्अलाः अगर मक़रूज़ क़रज़ा से मुनकिर हो और क़र्ज़ दिहिन्दा के पास गवाह भी न हो तो वसूल होने से पहले उसकी ज़कात लाज़िम नहीं और वसूल होने के बाद भी गुज़श्ता सालों की ज़कात नहीं है। (आप के मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–352 व दुर्रेमुख़्तार जिल्द–2 सफ़्हा–15 व अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–266)

साहबे निसाब मक़रूज़ पर ज़कात का हुक्म

सवालः एक शख़्स मक़रूज़ है और उसके पास कुछ सोना है तो उस पर ज़कात वाजिब है या नहीं?

जवाबः क़र्ज़ वज़ा करने के बाद उसके पास जो सोना या चांदी के ज़ेवरात हों, वह ज़ेवरात इस्तेमाल में आते हों या न आते हों, अगर वह साढ़े सात तोला हों, या अगर

कम हों मगर उसके पास चांदी या उसका ज़ेवर हो या नक़द रक़म हो, या तिजारती माल हो और सोना चांदी मिल कर या नक़द रक़म और सोना मिल कर, या तिजारती माल और सोना मिल कर इतनी मालियत का हो जाए कि सोना या चांदी का निसाब बन जाए तो उस पर वाजिब होगी वरना नहीं।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–5 सफ़्हा–155 बहवाला हिदाया जिल्द–1 सफ़्हा–166 व 176)

ज़कात फ़र्ज़ होने के बाद मक़रूज़ हो गया तो क्या हुक्म है?

मस्अला: अगर वजूबे ज़कात के बाद मक़रूज़ हो गया तो उससे ज़कात साक़ित न होगी।

(अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–251)

मस्अला: उसूल ये है कि अगर किसी के पास माल भी हो और वह मक़रूज़ भी हो तो यही देखना चाहिए कि क़र्ज़ वज़ा करने के बाद उसके पास निसाब के बराबर मालियत बचती है (यानी साढ़े बावन तोला चांदी की मालियत) या नहीं? अगर क़र्ज़ वज़ा करने के बाद निसाब के बराबर मालियत बच रहती हो तो उस पर ज़कात वाजिब है। ख़्वाह वह क़र्ज़ अदा करे या न करे और अगर क़र्ज़ वज़ा के बाद निसाब के बराबर मालियत नहीं बचती तो उस पर ज़कात नहीं है।

(आप के मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–399)

क्या मक़रूज़ क़र्ज़ की ज़कात अदा कर सकता है?

सवाल: ज़ैद ने बकर को एक हज़ार रुपया क़र्ज़े हसना दिया, फिर बाहमी रज़ामंदी से साल के इख़्तिताम पर बकर ने उस रक़म की ज़ैद की तरफ़ से ज़कात अदा कर दी

तो क्या ज़ैद के ज़िम्मा से ज़कात साक़ित हो जाएगी?

जवाबः दूसरा आमदी (जिसने रक़म क़र्ज़ न ली हो) इजाज़त ले कर अपनी रक़म से साहबे माल की तरफ़ से ज़कात अदा कर दे तो ज़कात अदा हो जाती है, मगर बकर ने ज़ैद से रुपया क़र्ज़ लिया है इस वजह से उस का ज़कात अदा करना सूद शुमार होगा, लिहाज़ा ज़कात अदा न होगी, ज़ैद के ज़िम्मा ज़कात बाक़ी रहेगी।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–5 सफ़्हा–148)

किसी की तरफ़ से इजाज़त ले कर ज़कात अदा करना

मस्अला: अगर दूसरा शख़्स साहबे माल के हुक्म या इजाज़त से उसकी तरफ़ से ज़कात अदा करे तो ज़कात अदा हो जाएगी। (आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–378)

किसी की तरफ़ से बिला इजाज़त ज़कात देना कैसा है?

मस्अला: अगर किसी ने किसी से कुछ नहीं कहा। उसने बिला इजाज़त के उसकी ज़कात अपनी तरफ़ से अदा कर दी तो ज़कात अदा नहीं हुई, अगर वह बाद में इजाज़त भी दे दे तब भी दुरुस्त नहीं और जितनी रक़म उसकी तरफ़ से दी है उसको वसूल करने का भी हक़ नहीं। (अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–300, बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–12 व शामी जिल्द–2 सफ़्हा–14)

ज़कात से मक़रूज़ का क़र्ज़ अदा करना कैसा है?

मस्अला: क़र्ज़ मआफ़ करने से ज़कात अदा नहीं होती, सही सूरत ये है कि मक़रूज़ को ज़कात की रक़म दे कर क़र्ज़ में वापस ले ले, अगर वह वापस न करे तो जबरन भी वापस ले सकता है और अगर वापस न करने का ख़तरा हो तो उस (मक़रूज़) से कहा जाए कि किसी को

अपनी तरफ़ से ज़कात की रक़म वसूल कर के उससे क़र्ज़ अदा करने का वकील बनाए।

(अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–250)

बेवा का क़र्ज़ इस नीयत से अदा करना कि ज़कात में वज़ा कर लूंगा कैसा है?

सवालः एक बेवा मुस्तहिक़्क़े ज़कात है, अगर कोई शख़्स उस औरत का क़र्ज़ इस नीयत से अदा कर दे कि आइंदा ज़कात में उस रुपये को वज़ा कर लूंगा, जाइज़ है या नहीं?

जवाबः इस तरह क़र्ज़ अदा कर देने से ज़कात अदा नहीं होती बल्कि अदाए क़र्ज़ की ये सूरत हो सकती है कि जिस क़दर रुपये देना हो वह रुपये उस बेवा को देकर उसकी मिल्क कर दिया जाए फिर उससे लेकर उसके क़र्ज़ में दे दिया जाए। इस तरह ज़कात भी अदा हो जाएगी और क़र्ज़ भी अदा हो जाएगा।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–89, बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–2 सफ़्हा–16)

मस्अलाः अगर मालिक यानी साहबे निसाब मुस्तहिक़्क़े ज़कात का क़र्ज़ उसके कहे बग़ैर ख़ुद ही अपने माले ज़कात से अदा कर दे तो ज़कात अदा न होगी, अलबत्ता क़र्ज़ तो अदा हो जाएगा।

(किताबुल फ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–1014)

वाजिबुलवसूल रक़म की ज़कात का हुक्म

सवालः मैं एक ऐसा काम करता हूं कि ख़िदमत की अंजाम दिही की रुक़ूम काफ़ी लोगों की तरफ़ वाजिबुलवसूल रहती हैं, क्या उनकी ज़कात है?

जवाबः कारीगर को काम करने के बाद जब उसका हक़्क़ुलख़िदमत यानी मज़दूरी (उजरत) वसूल हो जाए, तब उसका मालिक होता है, पस अगर आप साहबे निसाब हैं तो जब आप का ज़कात का साल पूरा हो, उस वक़्त तक जितनी रुकूम वसूल हो जायें उनकी ज़कात अदा कर दिया कीजिए और जो आइंदा साल वसूल होंगी उनकी ज़कात भी आइंदा साल दी जाएगी।

(आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–373)

जो क़र्ज़ क़िस्तों में वसूल हो, उसका हुक्म

और अगर क़र्ज़ क़िस्तों में वसूल हो तो जिस क़दर वसूल होता जाए उसकी ज़कात अदा करता रहे और अगर एक दफ़ा कुल की ज़कात दे दे ख़्वाह पहले या बाद में ये भी दुरुस्त है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–96 बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–15)

क्या किसी ग़रीब का क़र्ज़ मआफ़ करने से ज़कात अदा हो जाएगी?

सवालः एक शख़्स पर मेरे पांच रुपये क़र्ज़ हैं। मैं बमद्दे ज़कात उसको दे दूं (मआफ़ कर दूं) तो क्या ज़कात अदा हो जाएगी?

जवाबः सूरते मसऊला में ज़कात अदा न होगी। उसका आसान तरीक़ा ये है कि पहले अपनी तरफ़ से पांच रुपये उसको देकर उसको मालिक बना दिया जाए, फिर वह बमद्दे क़र्ज़ अदा कर दे तो इस सूरत में ज़कात भी अदा हो जाएगी और क़र्ज़ भी वसूल हो जाएगा।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–2 साफ़्हा–12 व किफ़ायतुलमुफ़्ती जिल्द–4 सफ़्हा–282)

क़र्ज़ मआफ़ करने पर ज़कात का हुक्म

मस्अला: अगर एक साल बाद क़र्ज़ख़्वाह अपना क़र्ज़ मक़रूज़ को मआफ़ कर दे तो क़र्ज़ख़्वाह को ज़कात उस एक साल की न देना पड़ेगी। हां अगर वह मदयून (यानी जिसको क़र्ज़ दिया था) मालदार है तो उसको मआफ़ करना माल का हलाक करना समझा जाएगा और दाईन (यानी क़र्ज़ ख़्वाह) को ज़कात देनी पड़ेगी, क्योंकि ज़कात माल के हलाक कर देने से साक़ित नहीं होती।

(इमदाद मसाइलुज़्ज़कात सफ़्हा–59 व फ़तावा आलमगीरी जिल्द–2 सफ़्हा–21)

क़र्ज़ दी हुई रक़म में ज़कात की नीयत करना कैसा है?

सवाल: कोई ग़रीब शख़्स क़र्ज़ ली हुई रक़म को आज तक वापस नहीं कर सका; और न ही उम्मीद है। अब क्या हम उसको क़र्ज़ दी हुई रक़म को ज़कात की नीयत कर के छोड़ दें तो ज़कात अदा हो जाएगी?

जवाब: जो सूरत आप ने लिखी है उससे ज़कात अदा नहीं होगी, क्योंकि ज़कात अदा करते वक़्त नीयत करना शर्त है। (आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–383)

मस्अला: वसूल कर के फिर उसको ज़कात की नीयत से दे दे। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–101, बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–14)

क़र्ज़दार जिस की ज़ाती आमदनी भी है?

मस्अला: एक शख़्स के ज़िम्मा दो हज़ार रुपये क़र्ज़ हैं और कुछ सरमायए आमदनी भी है जो क़र्ज़ से कम है तो जब कि क़र्ज़ उसके ज़िम्मे सरमायए आमदनी से ज़्यादा है तो उस पर ज़कात वाजिब नहीं है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–51 बहवाला हिदाया ज़कातुलमाल जिल्द–1 सफ़्हा–177 व कुदूरी सफ़्हा–37)

रिहन का रुपया साल भर रखा रहे उसका हुक्म

मस्अला: किसी शख़्स ने क़र्ज़ लिया और अपनी ज़मीन वग़ैरा रिहन रखी है तो ज़ाहिर है कि ये मक़रूज़ है और मदयून पर बक़द्रे दैन (क़र्ज़) की ज़कात वाजिब नहीं होती। पस अगर उस शख़्स के पास और कुछ रुपया व ज़ेवर वग़ैरा अलावा उस रुपये के बक़द्रे निसाब नहीं है तो उस क़र्ज़ की ज़कात उसके ज़िम्मा वाजिब नहीं है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–53)

गिरवी रखी हुई चीज़ की ज़कात किस पर है?

मस्अला: गिरवी यानी रिहन दी हुई चीज़ की ज़कात न देने वाले पर है और न रखने वाले पर है।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–2 सफ़्हा–12 बहवाला शामी जिल्द–2 सफ़्हा–9)

क़र्ज़ बतला कर ज़कात देना कैसा है?

मस्अला: किसी ने क़र्ज़ मांगा और तुम को मालूम है कि वह इतना तंग दस्त और मुफ़लिस है कि कभी अदा न कर सकेगा या ऐसा न दिहिन्दा है कि क़र्ज़ लेकर कभी अदा नहीं करता, उसको क़र्ज़ के नाम से ज़कात का रुपया दे दिया और अपने दिल में ज़कात की नीयत कर ली तो ज़कात अदा हो गई, अगरचे वह अपने दिल में यही समझे कि मुझे क़र्ज़ दिया है। (इमदाद मसाइले ज़कात सफ़्हा–68 व शामी जिल्द–1 सफ़्हा–14)

मस्अला: मुस्तहिक़्क़े ज़कात फ़क़ीर बहुत ग़ैरतमंद है,

अगर ज़कात की रक़म मालूम हो जाए तो वह नहीं लेगा और क़र्ज़ बतलाया जाए तो ले लेगा कि ये रक़म तुम को क़र्ज़ दी जा रही है, जब आपके पास गुंजाइश हो अदा कर देना। साथ साथ ज़कात की नीयत कर ले, तो इस तरह ज़कात अदा हो जाती है। बाद में उसको कह दो कि मैंने मआफ़ कर दिया, ताकि उसको इत्मीनान व सुकून हो जाए। (शामी जिल्द–2 सफ़्हा–356)

क़र्ज़ वसूल होने की उम्मीद न हो तो ज़कात का क्या हुक्म है?

मस्अला: क़र्ज़ देने वाले को अपना क़र्ज़ वसूल होने की उम्मीद न हो, या वसूल होने में तरद्दुद है, टाल मटोल कर रहा है तो ऐसे क़र्ज़ की ज़कात वसूल होने से पहले अदा करना लाज़िम नहीं, बल्कि वसूल होने के बाद अदा करना लाज़िम है और जितना वसूल होता रहेगा उतने की ज़कात अदा करना लाज़िम है और गुज़श्ता सालों की ज़कात उस पर वाजिब नहीं।

(इमदादुलफ़तावा जिल्द–2 सफ़्हा–35 व फ़िक़्हुज़्ज़कात जिल्द–1 सफ़्हा–183)

तिजारती क़र्ज़ की ज़कात का हुक्म

मस्अला: अगर थोक माल बेचा जाए और उसकी रक़म हासिल होने की उम्मीद रहती है लेकिन देर में वसूल होती है तो ऐसे क़र्ज़ के वसूल होने पर गुज़श्ता सालों की ज़कात भी अदा करना लाज़िम है। जैसा कि आज कल आम तौर से तिजारत और कारोबार (बिज़नेस) में यही तरीक़ा राएज है।

(ईज़ाहुलमसाइल सफ़्हा–111 बहवाला दुर्रेमुख़्तार मअ़ शामी जिल्द–2 सफ़्हा–305)

मक़रूज़ को ज़कात देकर अपना क़र्ज़ वसूल करना कैसा है?

मस्अला: ज़ैद का एक शख़्स पर कुछ रुपया क़र्ज़ है और वह मुफ़्लिस है, ज़ैद ये हीला करता है कि अपने रुपयों की ज़कात निकाल कर उस मक़रूज़ को देता है और फिर उससे क़र्ज़ वसूल कर लेता है तो इस तरीक़ा से ज़कात भी अदा हो जाएगी और क़र्ज़ भी वसूल हो जाएगा।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–335, बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–16)

मस्अला: मक़रूज़ को दूसरी रक़म ज़कात की नीयत से दे दे, जब वह उस रुपये का मालिक व क़ाबिज़ हो जाए तो उससे अपना क़र्ज़ा मांगे। अगर न दे तो जबरन छीन लेना भी जाइज़ है और इसमें कुछ हरज नहीं है।

(इमदाद मसाइलुज़्ज़कात सफ़्हा–43 व फ़िक़्हुज़्ज़कात जिल्द–2 सफ़्हा–397 व आप के मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–399)

मस्अला: लेकिन अगर ऐसी सूरत में क़र्ज़ दिहिन्दा, मालिक को ये ख़तरा हो कि मक़रूज़ के हाथ में ज़कात की रक़म पहुंचने के बाद क़र्ज़ के नाम से वापस नहीं देगा या फ़िरार हो जाएगा तो उसके हल के लिए दो तरीक़े हैं।

(1) क़र्ज़ दिहिन्दा मक़रूज़ को ज़कात की रक़म देकर फ़ौरन अपना हाथ बढ़ा कर अज़ ख़ुद अपने क़र्ज़ के नाम से क़ब्ज़ा कर ले, क्योंकि मक़रूज़ शरअ़न टाल मटोल करने वाला बन गया है और ऐसे मक़रूज़ से अपना क़र्ज़ ज़बरदस्ती वसूल कर लेना जाइज़ है।

(2) क़र्ज़ दिहिन्दा के किसी ख़ादिम या नौकर वग़ैरा को मक़रूज़ ज़कात वसूल करने के लिए वकील बनाए वह वकील मक़रूज़ की तरफ़ से क़ब्ज़ा कर ले और फिर मक़रूज़ की तरफ़ से क़र्ज़ अदा करने का वकील बन कर बनामे क़र्ज़, क़र्ज़ दिहिन्दा को दे दे तो इस तरह ज़कात व क़र्ज़ दोनों अदा हो जाऐंगे।

(दुर्रेमुख़्तार मअ़ शामी जिल्द–2 सफ़्हा–271)

माले हिबा की ज़कात का हुक्म

मस्अला: हिबा (किसी ने तोहफ़तन गिफ़्ट दिया) के लिए क़बूल लाज़िम है। क़बूल के बाद से मौहूब (जो चीज़ दी गई है उस) पर मिल्क हासिल होती है, पस जब तक आप ने हिबा कबूल नहीं किया आपकी मिल्क उस पर हासिल नहीं हुई, जिस वक़्त क़बूल कर लिया, उस वक़्त से आप मालिक हैं, उसी वक़्त से उस पर ज़कात का हिसाब होगा। (अगर ज़कात वाली चीज़ है)

माले हराम की तफ़्सील और ज़कात का हुक्म

मस्अला: हराम माल में तफ़्सील ये है कि अगर वह माले हराम ख़ालिस हो तब तो उसमें ज़कात वाजिब न होगी। क्योंकि उसके मालिक मालूम हैं तब तो वह माल लौटाना वाजिब है और मालिक मालूम नहीं हैं तो सब माल का सदक़ा करना वाजिब है। और अगर मख़लूत (मिला हुआ) है तब देखा जाएगा कि हराम माल की मिक़्दार उसमें से निकाल ली जाए तो बक़द्रे निसाब बचता है या नहीं, अगर बचता है तो उस मिक़्दार बाक़ी में ज़कात वाजिब होगी और अगर नहीं बचता तो ज़कात वाजिब न होगी। (इमदादुलफ़तावा जिल्द–2 सफ़्हा–14 व अहसनुलफ़तावा

जिल्द–4 सफ़हा–283 व फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़हा–49 बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़हा–23)

मस्अला: हराम माल में ज़कात वाजिब होने या न होने में ये तफ़सील है कि अगर उसके पास दूसरा माले हलाल भी है और उसमें हराम को मिला दिया तो इमाम अबूहनीफ़ा (रह.) के नज़दीक ज़कात उस पर लाज़िम है और अगर दूसरा माले हलाल बक़द्रे निसाबे न हो तो ज़कात उस पर लाज़िम नहीं, बल्कि वह कुल माल सदक़ा करना वाजिब है। यानी जबकि लौटाना मालिकों या उनके वारिसों पर मुतअ़ज़्ज़र हो (सदक़ा जब है कि मालिक या वारिस न मिल सकें) और मस्जिद बनाना हराम माल से दुरुस्त नहीं है, और मदरसा के तलबा पर सदक़ा करना बसूरत न मिलने मालिकों के या उनके वुरसा के दुरुस्त है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़हा–87 बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़हा–33 व फ़तावा महमूदिया जिल्द–3 सफ़हा–84)

क्या हराम माल की ज़कात नहीं देनी चाहिए?

मस्अला: ये उज़्र कि साहब हमारा माल तो हलाल नहीं है, हराम माल में ज़कात ही नहीं। ये समझ लेना चाहिए कि ये मस्अला ग़लत है, हराम माल जब अपने हलाल माल में मिल गया वह मिल्क में दाख़िल हो गया गो मिल्क ख़बीस ही हो, और वजूबे ज़कात के लिए मिल्क होना शर्त है, तैयब (पाक) होना शर्त नहीं, तैयब होना तो मक़बूलियत की शर्त है। पस इसलिए ज़कात वाजिब होगी। गो मक़बूल न होगी। एक सवाल यहां ये पैदा होता है कि फिर देने से क्या फ़ाएदा? जवाब ये है कि न देने से जो

अज़ाब होता है उससे महफ़ूज़ रहे और क़बूल न होने से अज़ाब नहीं होता, बल्कि सवाब से महरूम रहता है तो क्या अज़ाब होना और सवाब न होना दोनों एक बात हैं? अलबत्ता ख़ुद हराम कमाई का जो अज़ाब है वह अलग है, उसकी नफ़ी नहीं की जाती लेकिन न देने से दो अज़बों का इस्तेहक़ाक़ होता। कस्बे हराम (हराम कमाई) का अलग और ज़कात न देने का अलग और अब एक ही होगा। तो क्या ये दोनों भी यकसाँ हैं? हरगिज़ नहीं।

(इस्लाहे इंक़लाब जिल्द–1 सफ़्हा–152)

तफ़सील के लिए देखिए फ़िक़्हुज़्ज़कात अज़ जिल्द–2 सफ़्हा–421 ता 428)

ग़सब व रिश्वत के माल पर ज़कात का हुक्म

मस्अला: ग़सब व रिश्वत के माल पर ज़कात नहीं है वह सब माल ख़ैरात करना चाहिए जबकि मालिकों और वारिसों को पता न लगे।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–88 बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–34 ज़कातुलग़नम)

बैंक के सूद पर ज़कात का हुक्म

सवाल: सेविंग बैंक से जो सूद वसूल किया जाए, उस रक़म पर ज़कात वाजिब है या नहीं?

जवाब: सूद की ख़ालिस रक़म पर ज़कात वाजिब नहीं। क्योंकि वह सारी रक़म वाजिबुत्तसद्दुक़ (जिसका सदक़ा करना वाजिब) है।

(किफ़ायतुलमुफ़्ती जिल्द–4 सफ़्हा–142)

क्या दलाली से जमा की हुई रक़म पर ज़कात है?

सवाल: ज़ैद दलाली करता है और ख़रीदार से

कहता है कि फ़लां शख़्स इतने रुपये देता था मगर मैंने उसको नहीं दिया, गाहक इस तरग़ीब से ख़रीद लेता है और ज़ैद को उजरत दलाली की देता है। ज़ैद के पास ऐसी उजरत से बक़द्रे निसाब रुपया जमा हो गया है तो ज़ैद पर ज़कात वाजिब है या नहीं?

जवाब: इस सूरत में ज़ैद झूट बोलने की वजह से गुनहगार हुआ और हदीस शरीफ़ में है कि ऐसी बैअ़ में बरकत नहीं होती, लेकिन ज़ैद उस रक़म का मालिक हो जाता है और ज़कात लाज़िम होगी। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–94 बहवाला हिदाया किताबुज़्ज़कात जिल्द–1 सफ़्हा–167)

ज़मानते मुलाज़मत की रक़म पर ज़कात का हुक्म

सवाल: एक शख़्स ने बग़रज़े मुलाज़मत एक हज़ार रुपया बतौरे ज़मानत सरकार में जमा किया। जब तक वह शख़्स मुलाज़िम रहेगा उस वक़्त तक उसको ज़मान वापस नहीं मिलेगा। जब पेंशन या किसी वजह से बरख़ास्त होगा तो रुपया उसको दिया जाएगा। तो उस रुपये पर ज़कात वाजिब है या नहीं। तो बाद वापसी के या हर साल ज़कात अदा करना वाजिब है?

जवाब: उस रुपये की ज़कात वापसी के बाद तमाम गुज़श्ता सालों की अदा करना लाज़िम है, अगर इस ख़्याल से कि बाद वापसी के गुज़श्ता सालों की ज़कात देनी पड़ेगी और ज़्यादा रक़म हो जाएगी, हर साल मौजूदा रुपये के साथ ज़कात दे दिया करे तो ये भी दुरुस्त है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–130 बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–12 किताबुज़्ज़कात)

"ज़रे ज़मानत की वजह से मुलाज़मत मिली है, तो गोया कि वह उन रुपयों के ज़रीआ माल हासिल करने वाला हुआ है तो अक़लन भी ज़रे ज़मानत पर गुज़श्ता सालों की ज़कात वाजिब होनी चाहिए, अगर वह निसाब के बराबर है।"

(मुहम्मद रफ़अत क़ासमी)

अमानत की रक़म पर ज़कात का हुक्म

सवाल: मेरे पास किसी की अमानत है तो उस पर ज़कात देना मेरा फ़र्ज़ है या जिसकी रक़म है वह ज़कात देगा?

जवाब: जिस शख़्स की अमानत आपके पास है आप के ज़िम्मा उसकी ज़कात नहीं, बल्कि उसकी ज़कात अमानत रखवाने वाले के ज़िम्मा लाज़िम है। अगर उसने आपको इख़्तियार दे दिया है तो आप भी उस रक़म में से अदा कर सकते हैं। (आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–352 व किफ़ायतुलमुफ़्ती जिल्द–4 सफ़्हा–247)

अगर अमानत की रक़म से हुकूमत ज़कात काट ले?

सवाल: दूसरे शहरों के लोग अपनी तिजारत और अमानत के तौर पर किसी के पास जो रक़म जमा कराते हैं तो हिफ़ाज़त के ख़्याल से वह शख़्स अपने नाम से बैंक में रख देता है और वक़्तन फ़वक़्तन उन लोगों की हिदायत के पेशे नज़र रक़म निकालता भी रहता है तो क्या हुकूमत उन रुकूम पर ज़कात मिन्हा करने की हक़दार है या नहीं?

जवाब: जिस शख़्स की अमानत है उसके ज़िम्मा ज़कात फ़र्ज़ होगी मगर चूंकि हुकूमत आपके अकाउंट में ज़बरदस्ती

काट लेती है। इसलिए अमानत रखवाने वाले को चाहिए कि आप को ज़कात अदा करने का इख़्तियार दे दे, इस इख़्तियार देने के बाद उनकी रक़म से जो ज़कात कटेगी वह उनकी तरफ़ से होगी और आप से ज़कात की रक़म जो काट ली गई उसको मिन्हा कर के बाक़ी रक़म उनको वापस कर देंगे। (आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–353)

"यह मस्अला इस्लामी हुकूमतों में इस्लामी बैंकों का है।" (मुहम्मद रफ़अ़त क़ासमी ग़ुफ़िरलहू)

रक़म पेशगी व पगड़ी की ज़कात किस पर है?

सवाल: किराये के मकान व दुकान पर जो रक़म बतौरे ज़मानत पेशगी किरायेदार से ली जाती है वह क़ाबिले वापसी है और कई साल मालिके मकान के पास अमानत रहती है उसकी ज़कात कौन अदा करेगा?

जवाब: जो शख़्स रक़म का मालिक हो उसके ज़िम्मा ज़कात है। पस अमानत की रक़म की ज़कात उस पर नहीं है, बल्कि अमानत रखवाने वाले मालिक के ज़िम्मा है, और जो रक़म पेशगी किरायेदार से वापसी की शर्त पर ली है ज़रे अमानत का मालिक किरायादार है। उसकी ज़कात भी उसके ज़िम्मे है।

(आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–353)

"और जो रक़म आज कल बतौर पगड़ी ली जाती है वह वापस किरायेदार को नहीं मिलती है, बल्कि मालिके मकान व दुकान उस रक़म का मालिक होता है वह जाइज़ है या नहीं? ये अलग बहस है अगर ये रक़म वापसी की शर्त पर न हो तो उसकी ज़कात मालिके मकान पर

है।" (मुहम्मद रफ़अत क़ासमी गुफ़िरलहू)

मतरूका माल की ज़कात अमीन पर है या वुरसा पर?

सवाल: मैयत का मतरूका माल अभी वारिसों पर तक़्सीम नहीं हुआ। अमीन की ज़ेरे तहवील है और सब वारिस बालिग़ हैं, बाज़ के हिस्से मुक़र्रर और बाज़ के अभी मुक़र्रर नहीं हुए। इस मुनाक़शा में साले कामिल गुज़र गया इस सूरत में ज़कात अमीन पर है या नहीं?

जवाब: ज़कात माल की बज़िम्मा मालिकों के लाज़िम हुई है। अमीन के ज़िम्मा ज़कात नहीं है, बल्कि अगर वह माल सोना चांदी हैं तो वारिसों पर बक़द्रे हिस्सा ज़कात लाज़िम है जिस वक़्त उनके पास उनका हिस्सा पहुंच जाएगा और माले ज़कात बक़द्रे निसाब उनके पास है तो ज़मानए गुज़श्ता की ज़कात भी उनके ज़िम्मा लाज़िम होगी। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–48 बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–2 सफ़्हा–18)

अमानत के रुपये से ज़कात अदा करना?

सवाल: ज़ैद के पास कुछ रुपया उमर का अमानत है। उमर बाहर चला गया है, ज़ैद को लिखता है कि मेरी अमानत से ज़कात का फ़रीज़ा अदा कर दिया जाए, ज़ैद ने वाजिबुलअदा क़ीमत से कुछ दीनी किताबें ले कर मस्रफ़े ज़कात में दे दीं?

जवाब: इस तरीक़े से ज़कात अदा करना दुरुस्त है और ज़कात उमर की सही होगी।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–47)

हिफ़ाज़त की रक़म पर ज़कात का हुक्म

सवाल: ज़ैद ने अपने भाई उमर को पांच सौ रुपये

बग़रज़े हिफ़ाज़त दिया और कहा कि चाहे तुम इनको कारोबार में लगा कर नफ़ा या नुक़्सान उठाओ या वैसे ही रखे रखो। चार साल बाद उस रक़्म की वापसी हुई तो क्या उन चार साल की ज़कात वाजिब होगी?

जवाबः उन चार साल की ज़कात लाज़िम होगी।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–48 बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–2 सफ़्हा–12 किताबुज़्ज़कात)

मुक़द्दमा कर के वसूल होने पर ज़कात का हुक्म

सवालः एक शख़्स के (असामी पर) नालिश (मुक़द्दमा) करने से सात सौ रुपये वसूल हुए और चार सौ रुपये अदालत में ख़र्च हुए और उन चार सौ रुपये की ज़कात अदा कर चुका था, अब कुल सात सौ की ज़कात अदा करना होगी या बाद मिन्हा करने ख़र्च के?

जवाबः कुल रुपये की ज़कात अदा होगी ख़र्च मिन्हा न होगा। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–157)

डिग्री के ज़रीआ जो माल मिले उस पर ज़कात कब से है?

मस्अलाः जिस वक़्त से डिग्री हुई ज़ैद के ज़िम्मा ज़कात रुपये वाजिब शुदा की उसी वक़्त से लाज़िम होगी और अदाए ज़कात बाद वसूले रुपया के लाज़िम होगी।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–99)

नेवता वाले रुपये की ज़कात का हुक्म

सवालः (1) ज़ैद का एक हज़ार रुपया नेवता (शादी वग़ैरा के मौक़ा पर जो भात या नक़्द रक़्म वग़ैरा दी जाती है) दस साल बाद वसूल हुआ तो क्या हुक्म है?

(2) ज़ैद के पास हज़ार रुपये हैं और पांच सौ रुपये बरिवाजे बिरादरी नेवता देना है तो इस सूरत में किस

क़द्र रुपये की ज़कात देना होगी?

जवाबः (1) ऐसे रुपये की ज़कात वसूल होने के बाद देना लाज़िम है, वसूल होने से क़ब्ल नहीं है।

(2) इस सूरत में ज़ैद को एक हज़ार रुपये की ज़कात देना लाज़िम है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–54 बहवाला रद्दुलमुह्तार किताबुलहिबा जिल्द–4 सफ़्हा–707)

नेवता यानी जो ख़ुशी के मौक़ा पर दिया जाता है, इसमें बहस ये है कि ये क़र्ज़ के हुक्म में है या हिबा के हुक्म में। अगर क़र्ज़ के हुक्म में है तो वसूल होने के बाद गुज़श्ता सालों की ज़कात देना लाज़िम है और जो रक़मे नेवता लोगों के ज़िम्मा है ज़कात के हिसाब के वक़्त ये रक़म वज़ा कर ली जाएगी और बक़िया की ज़कात लाज़िम होगी। और अगर उस नेवता को क़र्ज़ या हिबा क़रार देने का मदार रस्म व रिवाज पर है कि बाज़ बिरादरियों में बतौरे क़र्ज़ ये रक़म दी जाती है और हिसाब लिखा जाता है और बाद में शादी के मौक़ा पर ज़रूरी तौर पर वसूल किया जाता है, और बाज़ बिरादरियों में हिसाब किताब नहीं लिखा जाता कि अगर मिल गया तो ले लिया, वरना उसका तज़किरा भी नहीं किया जाता, तो गोया ये बतौरे हिबा होता है

इसीलिए मुफ़्ती साहब (रह.) के जवाब से मालूम होता है कि आप ने हिबा क़रार दिया है, अगर हिबा का बदला आ गया तो अब आइंदा की ज़कात बशर्ते निसाब दे वरना नहीं। और नेवता की रक़म जो ज़िम्मा है चूंकि हिबा के हुक्म में है लिहाज़ा उसे हिसाब में वज़ा क़रार नहीं दिया।

बक़लम मौलाना मुफ़्ती मुहम्मद ज़फ़ीरुद्दीन साहब

दामत बरकातुहू बरहाशिया फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–9 सफ़्हा–54)

हज के लिए जो रक़म रखी है क्या उस पर ज़कात है?

सवाल: एक साहब ने छः साल से हज के लिए रुपया अलाहिदा निकाल कर रख दिया है। इमसाल हज को जाना चाहते हैं तो क्या उस रुपया पर तमाम गुज़श्ता सालों की ज़कात वाजिब है या नहीं?

जवाब: उस रुपये की ज़कात देना वाजिब है जब तक वह रुपया ख़र्च न हो जाए उस वक़्त तक तमाम सालहाए गुज़श्ता की ज़कात देना लाज़िम है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–116 बहवाला हिदाया किताबुज़्ज़कात जिल्द–1 सफ़्हा–167 व फ़तावा महमूदिया जिल्द–13 सफ़्हा–94)

हज के लिए जमा कराई हुई रक़म पर ज़कात का हुक्म

सवाल: एक शख़्स रमज़ान में ज़कात निकालता है इस साल हज को जाने का ख़्याल है, लिहाज़ा हज को जाने के लिए पेशगी रक़म जमा कराई है अब उसकी रवानगी शाबान में मुतवक़्क़े है, लिहाज़ा जो रक़म जमा की गई है उसकी ज़कात निकालनी होगी या नहीं?

जवाब: आमदोरफ़्त के किराया और मुअल्लिम वग़ैरा की फ़ीस के लिए जो रक़म दी गई है उस पर ज़कात नहीं है, उससे ज़ायद रक़म जो करंसी की सूरत में उसको वापस मिलेगी, उसमें से यकुम रमज़ानुलमुबारक तक जितनी रक़म बचेगी उस पर ज़कात फ़र्ज़ है, जो ख़र्च हो गई उस पर नहीं। (अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–264 बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–1 सफ़्हा–7)

हज के लिए ज़कात लेना कैसा है?

सवालः अगर कोई हज को जा रहा है और उसके पास पैसे कम पड़ जाएं तो उसको ज़काल का पैसा देना जाइज़ है या नहीं?

जवाबः जिसके पास ख़र्च कम हो, उसको हज के लिए ज़कात का पैसा लेना जाइज़ नहीं। लेकिन अगर पैसा पूरा था और चला गया मगर रास्ता में कोई हादसा पेश आ गया कि रुपया ज़ाए हो गया और घर से मंगाने की कोई सूरत नहीं तो उस को वहां ज़कात का पैसा बक़द्रे ज़रूरत ले लेना दुरुस्त है।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–13 सफ़्हा–94)

किसी को इतनी ज़कात देना कि उस पर हज फ़र्ज़ हो जाए?

सवालः आलिम को अगर लोग इतनी ज़कात दें कि उस पर हज फ़र्ज़ हो जाए कैसा है? शामी की इबारत से जाइज़ मालूम होता है?

जवाबः इतनी रक़म मद्देज़कात में देना मकरूह है कि जिससे फ़क़ीर साहबे निसाब हो जाए, हमारे दियार में वजूबे हज से क़ब्ल ही साहबे निसाब हो जाना ज़ाहिर है, लिहाज़ा इतनी रक़म देना कि हज फ़र्ज़ हो जाए बतरीक़े औला मकरूह है। शामी की इबारत में मुन्क़तेउल हाज से मुराद वह शख़्स है जो हज के लिए निकला हो मगर सफ़र में उसका माल जाता रहा, उसको ज़कात देना बिला कराहत जाइज़ है। आलिम बल्कि आमी को भी इतनी ज़कात नहीं लेना चाहिए।

(अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–294 बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–74)

ज़कात की रक़म से हज कराना कैसा है?

मस्अला: अगर ज़कात का रुपया हज करने वाले की (अगर साहबे निसाब नहीं है) मिल्क कर दिया जाए कि वह अपना हज करे या जिस ख़र्च में चाहे सर्फ़ करे, तो ये दुरुस्त है और ज़कात अदा हो जाएगी।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–273)

मस्अला: अपनी ज़कात के रुपये से अपना हज करना दुरुस्त नहीं है। अलबत्ता ये जाइज़ है कि फ़क़ीर को ज़कात के रुपये का मालिक बना दिया जाए, फिर ख़्वाह वह अपना हज करे या दीगर मसारिफ़ में सर्फ़ (ख़र्च) करे उसको इख़्तियार है। ग़रज़ ये है कि ज़कात के रुपये में मालिक बना देना मुहताज को शर्त है, बग़ैर इसके ज़कात अदा न होगी। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–278 बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–1 सफ़्हा–85)

"अलबत्ता एक शख़्स को इतनी रक़म ज़कात की देना कि वह साहबे निसाब हो जाए मकरूह है, लेकिन ज़कात अदा हो जाती है और ये भी जब है कि वह ग़रीब अयालदार न हो।"

(मुहम्मद रफ़अ़त क़ासमी ग़ुफ़िरलहू)

किसी को इतनी ज़कात देना कि वह साहबे निसाब हो जाए?

सवाल: किसी फ़क़ीर को इतनी ज़कात की रक़म देना कि वह साहबे निसाब हो जाए मकरूह है, मगर सवाल ये है कि उस निसाब से क्या मुराद है? मूजिबे ज़कात निसाब मुराद है, या वह निसाब जो ज़कात लेने से मानेअ़ हो?

जवाब: ज़कात लेने से मानेअ़ निसाब मुराद है, ये

कराहत जब है कि फ़क़ीर अयालदार न हो, अगर अयालदार है तो उसको एक मुश्त इतनी रक़म मद्दे ज़कात से दी जा सकती है कि उसके अयाल (बाल बच्चों) पर तक़सीम करें तो उनमें से कोई भी साहबे निसाब न बने।

(अहसनुलफ़्तावा जिल्द–4 सफ़्हा–293 बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–74)

शेयर (हिसस) पर ज़कात का हुक्म

मस्अला: हिसस अगर बनीयते तिजारत ख़रीदे हों यानी ख़ुद हिसस की ख़रीद व फ़रोख़्त मक़्सूद हो तो हिसस की कुल क़ीमत पर ज़कात वाजिब है, वरना हिसस की सिर्फ़ उस मिक़्दार पर ज़काल होगी जो तिजारत में लगी हुई है। कारख़ाना की मशीनरी और मकान पर सर्फ़ शुदा मिक़्दार पर ज़कात नहीं। (अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–287 व फ़िक़्हुज़्ज़कात जिल्द–1 सफ़्हा–369)

हिसस पर ज़कात कौन सी क़ीमत पर है?

सवाल: एक शख़्स ने तिजारती कम्पनी के हिसस ख़रीदे। जब कंपनी शुरू हुई थी उस वक़्त एक हिस्सा पांच सौ रुपये का था और जिस वक़्त उसने हिस्से ख़रीदे उस वक़्त एक हिस्सा की क़ीमत एक हज़ार थी और इस वक़्त एक हिस्सा की क़ीमत पांच सौ रुपये है तो ये शख़्स किस क़दर ज़कात दे?

जवाब: जो क़ीमत इस वक़्त है यानी पांच सौ रुपये की अदा करे। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–146 रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–30 बाब ज़कातुलग़नम)

क्या हिसस पर ज़कात इंफ़िरादी तौर पर है?

सवाल: तमाम कंपनियां ज़कात व उश्र असासाजात

पर ज़कात मिन्हा करती हैं और ये रक़म ज़कात फ़ंड को मुन्तक़िल कर दी जाती है, क्या एक मरतबा इजतिमाई कारोबार में से ज़कात मिन्हा हो जाने के बाद भी दोबारा हर हिस्सादार को अपने हिसस पर इंफ़िरादी तौर पर ज़कात अदा करनी होगी?

जवाबः अगर हिस्सादारों के हिसस (शेयर) से ज़कात वसूल कर ली गई तो उनको इंफ़िरादी तौर पर अपने अपने हिस्सों की ज़कात देने की ज़रूरत नहीं, अलबत्ता उसमें गुफ़्तगू हो सकती है कि हुकूमत जिस अंदाज़ से ज़कात काट लेती है वह सही है या नहीं? बहुत से उलमाए किराम इस तरीक़ेकार की तसवीब (दुरुस्त) करते हैं और उससे ज़कात अदा हो जाने का फ़तवा देते हैं। जबकि बहुत से उलमा की राए इसके ख़िलाफ़ है। और वह हुकूमत की काटी हुई ज़कात को अदा शुदा नहीं समझते, उन हज़रात के नज़दीक इन तमाम रुक़ूम की ज़कात मालिकान को ख़ुद अदा करनी चाहिए, जो हुकूमत ने काट ली हो। (आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–374)

क्या शेयर की ख़रीदारी पर ज़कात है?

सवालः ज़ैद ने एक कंपनी के पंद्रह हिस्से पांच हज़ार के ख़रीदे, उस में जो कुछ नफ़ा होता है वह सालाना तक़सीम हो कर हिस्सादारों को मिलता है तो क्या ज़ैद के ज़िम्मा पांच हज़ार की ज़कात देना लाज़िम है या मुनाफ़ा सालाना की रक़म पर ज़कात लाज़िम हो गई?

जवाबः ज़ैद को उस रक़म पांच हज़ार की ज़कात भी देनी लाज़िम और फ़र्ज़ है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–140 बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–2 सफ़्हा–13)

मस्अला: अगर कंपनी तिजारत करती है तो ज़कात जमा शुदा रक़म पर होगी, और अगर किराया वसूल करने की कंपनी है तो जमा शुदा माल पर ज़कात नहीं बल्कि हासिल शुदा नफ़ा पर होगी।

(किफ़ायतुलमुफ़्ती जिल्द–4 सफ़्हा–143)

मस्अला: शेयर पर ज़कात है, अगर कंपनी तिजारत करती है मसलन कपड़ा, लोहा, सामाने मशीनरी वग़ैरा फ़रोख़्त करती है, सीमेंट बेचती है, बिजली सपलाई करती है (जैसे इलेकट्रिक कंपनी) तो शेयर की अस्ल रक़म (शेयर की क़ीमत) और शेयर के मुनाफ़े दोनों पर ज़कात है और अगर कंपनी तिजारत नहीं करती, सिर्फ़ किराया वसूल किया जाता है जैसे ट्राम कंपनी, बस कंपनी तो उसके शेयर पर ज़कात है यानी मुनाफ़ा पर ज़कात है अस्ल रक़म पर ज़कात नहीं। (फ़तावा रहीमिया जिल्द–2 सफ़्हा–4 व आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–373)

शेयर की मुख़्तलिफ़ क़िस्में और उसका हुक्म

मस्अला: सनअ़ती औज़ारों के सिलसिला में जो उसूल मज़कूर हुआ है उससे ये बात वाज़ेह हो गई कि कारख़ानों में हिस्सादार बनने की दो सूरतें हैं। (1) या तो उसने ऐसे कारख़ाना में शिरकत की है जिसका काम तिजारत और ख़रीदो फ़रोख़्त नहीं है, मसलन धान कूटना, आटा पीसना वग़ैरा। उसमें महज़ उजरत ले कर एक काम कर दिया जाता है। इस सूरत में सिर्फ़ आमदनी पर ज़कात वाजिब होगी। और अगर ऐसा कारख़ाना हो कि उसमें तिजारत भी की जाती हो, चीज़ें ख़रीद कर तैयार की जाती और फ़रोख़्त की जाती हों, तो अब इख़राजात निकालने के

बाद साल भर की आमदनी के अलावा ख़ाम और तैयार शुदा माल पर भी ज़कात वाजिब होगी, जैसे रूई ख़रीद कर कपड़ा बुनने और गन्ना ख़रीद कर शक्कर यानी चीनी बनाने वाले कारख़ाने, जो फिर उसे फ़रोख़्त कर देते हैं, इसलिए कि अब उस माल की हैसियत "माले तिजारत" की होगी। हां अलबत्ता कारख़ाना की इमारत, फ़रनीचर, औज़ार और मशीनों पर ज़कात नहीं होगी।

यहां ज़कात के सिलसिले के जो मसाइल व अहकाम मज़कूर हुए, ऐसा भी हो सकता है कि तमाम हिस्सादारों की नीयत और इरादा से यकजा वह रक़म ज़कात की निकाल दी जाए, और ये भी दुरुस्त है कि हर हिस्सादार अपने तौर पर हिसाब करे और अपने हिस्सा के तनासुब से ज़कात निकाल दे। (जदीद फ़िक़्ही मसाइल सफ़्हा-123)

मस्अला: कारख़ानों और मिलों के हिसस पर भी ज़कात वाजिब है जबकि उन हिसस की मिक़्दार मिक़्दारे निसाब हो, या दूसरी क़ाबिले ज़कात चीज़ों को मिला कर निसाब बन जाता हो, अलबत्ता मशीनरी और फ़रनीचर वग़ैरा को मुस्तस्ना कर के बाक़ी ज़कात अदा करना होगी।

(आपके मसाइल जिल्द-3 सफ़्हा-340)

मस्अला: सोना, चांदी माले तिजारत और कंपनी के हिसस (शेयर) की जो क़ीमत ज़कात का साल पूरा होने के दिन होगी उसी के मुताबिक़ ज़कात आदा की जाएगी।

(आप के मसाइल जिल्द-3 सफ़्हा-341)

कंपनी में निसाब के बराबर जमा शुदा रक़म पर ज़कात

सवाल: मैंने पैसे किसी कंपनी को दिए हैं जो कि मुनाफ़ा व नुक़्सान की बुनियाद पर हर माह मुनाफ़ा अदा

करती है, जिससे हमारे घर के इख़राजात बमुश्किल पूरे होते हैं, अगर ज़कात माहाना आमदनी से हो तो फ़ाक़ा की सूरत पेश आती है और अगर अस्ल माल से निकलवाते हैं तो मज़ीद आमदनी कम हो जाती है?

जवाब: जो रक़म आप ने कंपनी में जमा कर रखी है अगर वह मालियत निसाब यानी साढ़े बावन तोले चांदी के बराबर है तो उसकी ज़कात आप के ज़िम्मा है। ज़कात अदा करने की जो सूरत भी हो आप इख़्तियार करें।

(आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–375)

सरकारी व ग़ैर सरकारी कंपनियों की ज़कात का हुक्म

मस्आलः कम्पनियों की ज़कात में इख़्तियार है, इजतिमाअन और इन्फ़िरादन दोनों सूरतें जाइज़ हैं। जो कंपनियां और इदारे मुकम्मल तौर पर सरकारी हैं उनके किसी हिस्सा पर भी ज़कात नहीं, और जो जुज़अन सरकारी हैं उनके सरकारी हिस्सा पर ज़कात नहीं, सिर्फ़ ग़ेर सरकारी हिस्सों पर ज़कात है। सरकारी अमवाल पर इसलिए ज़कात नहीं कि ये शख़्सी मिलकियत नहीं।

(अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–288)

क्या प्लॉट की ज़कात मार्किट की हैसियत पर है?

मस्अलाः जो ज़मीन या प्लॉट ख़रीदा जाए, ख़रीदते वक़्त उसमें तीन क़िस्म की नीयतें होती हैं, कभी तो ये नीयत होती है कि बाद में उनको फ़रोख़्त कर देंगे। इस सूरत में उनकी क़ीमत पर हर साल ज़कात फ़र्ज़ होगी। और हर साल मार्किट में जो उनकी क़ीमत हो, उसका एतेबार होगा। मसलन एक प्लॉट आप ने पचास हज़ार का ख़रीदा था, एक साल के बाद उसकी क़ीमत सत्तर

हज़ार हो गई, तो ज़कात सत्तर हज़ार की देनी होगी। और दस साल बाद उसकी क़ीमत पांच लाख हो गई तो अब ज़कात भी पांच लाख की देनी होगी। अलग़रज़ हर साल जितनी क़ीमत मार्किट में हो उसके हिसाब से ज़कात देनी होगी। और कभी ये नीयत होती है कि यहां मकान बना कर खुद रहेंगे, अगर इस नीयत से प्लॉट ख़रीदा हो तो उस पर ज़काल नहीं। इसी तरह अगर ख़रीदते वक़्त न तो फ़रोख़्त करने की नीयत थी और न खुद रहने की इस सूरत में भी उस पर ज़कात नहीं।

(आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–371)

मस्अला: तिजारत की नीयत से ख़रीद कर वह ज़मीन और मकान और बराए फ़रोख़्त तामीर करदा मकानात की मौजूदा मालियत पर ज़कात फ़र्ज़ है। (अस्ल सरमाया पर न होगी।) (अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–299)

मकान की ख़रीद पर ख़र्च होने वाली रक़म पर ज़कात का हुक्म

सवाल: एक माह क़ब्ल मकान का सौदा कर चुके हैं हम ने दो माह का वक़्त लिया है जो कि ख़त्म हो रहा है। ब्याना एडवांस (पेशगी) अदा कर चुके हैं, अब अदाएगीए ज़कात किस तरह होगी, क्योंकि रक़म तो अब हमारी नहीं है, मालिके मकान की हो गई। अब हमारा तो मकान हो गया। क्या उस रक़म से ज़कात अदा करें जो कि मालिक को देनी होगी?

जवाब: अगर ज़कात अदा करने से क़ब्ल मकान की क़ीमत अदा कर दी तो उस पर ज़कात वाजिब नहीं है और अगर साल ख़त्म हो गया (निसाब का) अब तक

मकान के पैसे अदा नहीं किए बल्कि बाद में वक़्ते मुक़र्ररा पर अदा करेंगे तो उससे ज़कात साक़ित न होगी। उस पर ज़कात वाजिब होगी।

(आपके मसाइल जिल्द—3 सफ़्हा—372)

प्लॉट पर ज़कात का हुक्म

मस्अलाः प्लॉट (ज़मीन) इस नीयत से लिया गया था कि उसको फ़रोख़्त करेंगे, तब तो वह माले तिजारत है और उस पर ज़कात वाजिब होगी। और अगर ज़ाती ज़रूरत के लिए लिया गया था तो उस पर ज़कात नहीं। और अगर ख़रीदते वक़्त तो फ़रोख़्त करने की नीयत नहीं थी, लेकिन बाद में फ़रोख़्त करने का इरादा हो गया तो जब तक उसको फ़रोख़्त न कर दिया जाए उस पर ज़कात वाजिब नहीं। (आपके मसाइल जिल्द—3 सफ़्हा—370)

जो प्लॉट रिहाइशी मकान के लिए हो?

सवालः मेरे पास ज़मीन का एक प्लॉट है, मकान की तामीर का ख़्याल है, क्या उस पर ज़कात है?

जवाबः जो प्लॉट रिहाइशी मकान के लिए ख़रीदा गया हो, उस पर ज़कात नहीं।

(आपके मसाइल जिल्द—3 सफ़्हा—370)

क्या तिजारती प्लॉट पर ज़कात है?

सवालः अगर मकानात के प्लॉटों की ख़रीदोफ़रोख़्त की जाए तो क्या ये माले तिजारत हैं और उनकी कुल मालियत पर ज़कात है या नफ़ा पर?

जवाबः अगर प्लॉटों (ज़मीन या मकान वग़ैरा) की ख़रीदोफ़रोख़्त का कारोबार किया जाए और फ़रोख़्त करने की नीयत से प्लॉट ख़रीदा जाए तो प्लॉटों की हैसियत

तिजारती माल की होगी और उनकी कुल मालियत पर ज़कात हर साल वाजिब होगी।

मस्अला: जो ज़मीन मकान या प्लॉट फ़रोख़्त करने की नीयत से ख़रीदा हो, उस पर हर साल ज़कात वाजिब है, हर साल जितनी उसकी क़ीमत हो, उसका चालीसवां हिस्सा निकाल दिया करें।

(आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–371)

मस्अला: अगर प्लॉट या मकान तिजारत की नीयत से ख़रीदा (जिसकी क़ीमत मिक़्दारे निसाब को पहुंच जाती हो) तो ये माले तिजारत है लिहाज़ा उस पर ज़कात फ़र्ज़ है। जो चीज़ भी बेचने की नीयत से ख़रीदी जाए वह माले तिजारत में दाख़िल है।

(अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–295)

जो मकान किराया पर चलाने के लिए ख़रीदा गया?

सवाल: एक शख़्स ने अपने रहने के मकान के अलावा एक और मकान किराया पर चलाने के लिए ख़रीदा और रुपये भी महफ़ूज़ रहे तो क्या उस मकान की ज़कात है?

जवाब: इस सूरत में मकान की क़ीमत पर ज़कात वाजिब न होगी, बल्कि किराया का रुपया निसाब के बक़द्र या ज़्यादा जमा होगा और उस पर साल भी गुज़र जाए तो उसकी ज़कात देना लाज़िम होगी।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–154 बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–10)

ज़रूरत से ज़ाएद मकान पर ज़कात

सवाल: जब कि जाएदाद या मकान ज़ाती ज़रूरत से ज़्यादा हों उनसे किराया की आमदनी हो तो ज़कात जाएदाद

की क़ीमत पर होगी या आमदनी पर?

जवाबः जायदाद (ज़मीन व मकान) की क़ीमत पर ज़कात लाज़िम न होगी, बल्कि किराया की आमदनी पर जो निसाब की मिक्दार को पहुंच जाए और उस पर तन्हा या दीगर रुकूमे मौजूदा के साथ साल पूरा हो जाए तो ज़कात लाज़िम होगी, जो किराया की आमदनी जमा हो उस पर ज़कात लाज़िम होगी। हसबे शर्ते मज़कूरा बाला।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–133 बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–10 व आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–311 व किफ़ायतुलमुफ़्ती जिल्द–4 सफ़्हा–143)

जिस रुपये से मकान ख़रीदा क्या उस पर ज़कात है?

सवालः एक शख़्स ने पांच हज़ार का मकान ख़रीदा। घर वालों ने पसंद नहीं किया। इसलिए फ़रोख़्त करने का इरादा कर लिया, इस सूरत में उन पांच हज़ार रुपये की ज़कात वाजिब है या नहीं?

जवाबः उन पांच हज़ार रुपये की ज़कात वाजिब नहीं है जिनसे मकान ख़रीदा गया, जिस वक़्त तक वह रुपया मौजूद था और मकान न ख़रीदा था उस वक़्त तक की ज़कात लाज़िम थी (अगर साल पूरा हो गया था, और अगर साल के ख़त्म से पहले पहले) जब मकान ख़रीद लिया, उस वक़्त से ज़कात उसकी साकित हो गई, और जिस वक़्त मकान फ़रोख़्त हो कर नक़द रुपया हासिल होगा तो उस पर मुकम्मल एक साल गुज़रने पर ज़कात लाज़िम हो जाएगी।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–129, बहवाला रद्दुलमुह्तार किताबुज़्ज़कात जिल्द–2 सफ़्हा–10 व सफ़्हा–13)

इजारा की ज़मीन पर ज़कात का हुक्म

मस्अला: जो ज़मीन ठीका पर यानी इजारा पर ली जाए और हर साल की उजरत मुऐयन कर के चंद साल की उजरत पेशगी दे दी जाए तो ये दुरुस्त है और उस रुपये की ज़कात लाज़िम नहीं है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–333)

ज़मीन व मकान की मालियत पर ज़कात है या आमदनी पर?

मस्अला: मालियते ज़मीन व जाएदाद पर ज़कात नहीं है, बल्कि किराया वग़ैरा की आमदनी जो जमा हो और ख़र्च वग़ैरा के बाद साल पूरा होने पर बाक़ी रहे, उस पर ज़कात वाजिब होगी, और ज़ेवर व नक़्दी पर भी ज़कात वाजिब है। ज़कात की शरह ये है कि चालीसवां हिस्सा रुपया व ज़ेवर वग़ैरा का देना वाजिब है यानी अढ़ाई रुपये सैकड़ा।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–50 बहवाला रद्दुलमुह्तार बाब ज़कातुलमाल जिल्द–2 सफ़्हा–38)

क्या रिहाइशी मकान व सामाने ख़ानादारी पर ज़कात है?

मस्अला: रिहाइशी मकान, पहनने के कपड़ों, घर का सामान, सवारी के जानवरों और इस्तेमाल के हथियारों और ऐसे ज़ुरूफ़ (बरतन) और आराइश की चीज़ों पर जो सजावट के लिए इस्तेमाल किए जाऐं और सोने व चांदी के न हों, ज़कात वाजिब नहीं। (किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–968 व दुर्रेमुख़्तार जिल्द–2 सफ़्हा–14)

ज़ेरे इस्तेमाल चीज़ों पर ज़कात का हुक्म

सवाल: क्या आराम व आसाइश की चीज़ों मसलन

रेडियो, टीवी, फ़्रीज़, वाशिंग मशीन, मोटर साइकल वग़ैरा पर भी ज़कात है?

जवाबः ये चीज़ें इस्तेमाल की हैं इन पर ज़कात नहीं। अलबत्ता ज़ेवरात पर ज़कात है ख़्वाह वह पहने हुए रहते हों या न। जबकि निसाब को पहुंच जाए।

(आप के मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–373 व कुदूरी सफ़्हा–37)

मस्अलाः ऐसे बरतन (देग, बड़े देगचे वग़ैरा) जो इस्तेमाल के लिए रखे हों ख़्वाह उनके इस्तेमाल की नौबत कम ही आती हो, उन पर ज़कात वाजिब नहीं।

(आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–373)

क्या मुर्ग़ी फ़ॉर्म और मछली पालन पर ज़कात है?

मस्अलाः मुर्ग़ी फ़ॉर्म और मछली के तालाब की ज़मीन, मकान और मुतअल्लिक़ा सामान पर ज़कात नहीं, मुर्ग़ियां और चूज़े ख़रीदते वक़्त अगर ख़ुद उन्ही को बेचने की नीयत हो तो उनकी मालियत पर ज़कात फ़र्ज़ है। और उनके बजाए उनके अंडे और बच्चे बेचने की नीयत है तो ज़कात नहीं। तालाब में मछलियां या उनके बच्चे ख़रीद कर डाले हों तो उनकी मालियत पर ज़कात फ़र्ज़ है वरना नहीं। मुर्ग़ी ख़ाना और तालाब की आमदनी पर बहर सूरत ज़कात है।

(अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–300)

मन्दरजा ज़ैल अश्या पर ज़कात नहीं है

मस्अलाः वह अश्या जो समुंद्र से निकाली जाएें जैसे अंबर, मोती, मूंगा, मछली वग़ैरा उस पर कोई मुतालबा नहीं (यानी ज़कात नहीं) हां अगर उकनी तिजारत की

जाए तो ज़कात वाजिब होगी।

(किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–998)

"यानी जिस तरह माले तिजारत पर ज़कात के अहकामात हैं, अगर मुन्दरजा बाला चीज़ों की तिजारत की जाएगी तो ज़कात वाजिब होगी।"

(मुहम्मद रफ़अत क़ासमी गुफ़िरलहू)

मस्अलाः जवाहरात पर मसलन मोती, याकूत, ज़बरजद वग़ैरा पर ज़कात नहीं है, बशर्तेकि वह तिजारत के लिए न हों। (किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–968)

मुश्क पर ज़कात है या नहीं?

मस्अलाः अगर किसी को मुश्क या ज़बाद (एक खुशबूदार चीज़ जो मुश्क बिलाव से निकलती है) दस्तयाब हो, या मोती, मूंगा वग़ैरा हासिल हो तो उस पर कोई ज़कात नहीं है, ख़्वाह उसकी मिक़्दार ज़कात के निसाब को पहुंच जाए। (किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–1001)

"अगर तिजारत की जाएगी तो तिजारती लिहाज़ से ज़कात हो जाएगी।" (मुहम्मद रफ़अत क़ासमी)

क्या सोने चांदी के मसनूई आज़ा पर ज़कात है?

बाज़ हालात में और बाज़ ख़ास मसलिहतों के पेशे नज़र सोने चांदी के मसनूई आज़ा का इस्तेमाल किया जाता है जैसे नाक, दांत, खोखले दांतों को सोने चांदी से भरना, सोने के तारों से दांत को बांधना वग़ैरा। उनमें से बाज़ की नौइयत ऐसी होती है कि उनको आसानी से निकाला जा सकता है और उनको रखा ही इस तरह जाता है कि उनको लगाया और निकाला जाता रहे। ज़बकि बाज़ आज़ा में ये धातें यानी सोना चांदी इस तरह

फ़िट की जाती हैं कि उनको आसानी से निकाला नहीं जा सकता, बल्कि वह मुस्तक़िल तौर पर लगा दी जाती हैं। जो आज़ा निकाले जा सकते हैं जैसे कि नाक वग़ैरा उनमें तो ज़कात वाजिब होगी और उसकी नज़ीर ज़ेवरात वग़ैरा हैं। और जो इस तरह न हों उनमें ज़कात वाजिब नहीं होगी। इसलिए कि ज़कात वाजिब होने के लिए ज़रूरी है कि माल नामी यानी उनमें नश्वो नुमा और बढ़ोतरी की गुंजाइश हो और मौजूदा सूरत में ज़ाहिर है कि उसका कोई इमकान नहीं। दूसरे जब वह इंसान के जिस्म का एक ऐसा उज़्व बन जाए जिसको अलग किया जाना मुमकिन न हो तो अब वह इंसान की बुनियादी ज़रूरीयात (हाजते अस्लीया) में दाख़िल हो गया और ऐसी चीज़ों में भी ज़कात वाजिब नहीं होती। (जदीद फ़िक़्ही मसाइल सफ़्हा–121)

क्या महाना तन्ख़्वाह पर ज़कात है?

सवालः अपनी तन्ख़्वाह की कितनी फ़ीसद रक़म ज़कात में देनी चाहिए?

जवाबः अगर बचत निसाब के बराबर हो जाए और उस पर साल भी गुज़र जाए तो ढाई फ़ीसद ज़कात वाजिब है वरना नहीं।

मस्अलाः ज़कात बचत की रक़म पर होती है। जबकि बचत की रक़म साढ़े बावन तोले यानी 612.35 ग्राम चांदी की मालियत को पहुंच जाए, जब कुछ बचता ही नहीं तो उस पर ज़कात नहीं।

(आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–359)

मस्अलाः तन्ख़्वाह की रक़म जब तक वसूल न हो, उस पर ज़कात नहीं। तन्ख़्वाह की रक़म मिलने के बाद

उस पर पूरा एक साल होगा, तब उस पर ज़कात वाजिब होगी और अगर आप पहले से साहबे निसाब हैं तो जब निसाब पर साल पूरा होगा उसके साथ उस तन्ख़्वाह की वसूल शुदा रक़म पर भी ज़कात वाजिब हो जाएगी।

(आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–360)

प्रोवीडेन्ट फ़ंड पर ज़कात का हुक्म

मस्अलाः मुलाज़िमीन की तन्ख़्वाह में जो कुछ रुपया वज़ा (कटता) होता है और फिर उसमें कुछ रक़म मिला कर बवक़्ते ख़त्मे मुलाज़मत मुलाज़िमों को मिलता है वह एक इनआम सरकारी समझा जाता है। उसकी ज़कात गुज़श्ता सालों की वाजिब नहीं होती। आइंदा को वसूल होने के बाद जब साल भर निसाब पर गुज़र जाए, उस वक़्त ज़कात देना लाज़िम होगी। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–331 बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–2 सफ़्हा–49 बाबुज़्ज़कात व निज़ामुलफ़तावा जिल्द–1 सफ़्हा–212 व फ़िक़्हुज़्ज़कात जिल्द–1 सफ़्हा–187 व फ़तावा महमूदिया जिल्द–3 सफ़्हा–51)

फ़ंड की क़िस्में और ज़कात

मस्अलाः गवर्नमेन्ट प्रोवीडेन्ट फ़ंड और प्राइवेट कंपनियों के प्रोवीडेन्ट फ़ंड की नौइयत में कुछ फ़र्क़ है जिसकी वजह से अहकाम में भी फ़र्क़ होगा। गवर्नमेन्ट प्रोवीडेन्ट फ़ंड में हुकूमत मुस्ताजिर है और मुलाज़िम अजीर है। फ़ंड की रक़म मुस्ताजिर (हुकूमत) के क़ब्ज़े में रहती है। उस पर अजीर का क़ब्ज़ा नहीं होता। क़ब्ज़ा न होने की वजह से उसकी मिल्क में नहीं आई, लिहाज़ा उस पर ज़कात फ़र्ज़ नहीं। वसूल होने के बाद भी उस पर गुज़श्ता

ज़माना की ज़कात नहीं बल्कि आइंदा के लिए (जबकि रुपया बाक़ी साल भर तक बचे) ज़कात फ़र्ज़ होगी। अलबत्ता अगर उस फ़ंड में से मुलाज़िम ने किसी इंशोरेंस कंपनी में हिस्सा लिया तो अब बीमा कंपनी का क़ब्ज़ा अजीर की तरफ़ मनसूब होगा और कंपनी बमंज़िलए वकील होगी और वकील का क़ब्ज़ा मुअक्किल का क़ब्ज़ा शुमार होता है। लिहाज़ा अजीर की मिल्क में आ जाने की वजह से हर साल उसकी ज़कात अदा करना फ़र्ज़ है।

प्रोवीडेन्ट फ़ंड कम्पनियों को प्रोवीडेन्ट फ़ंड एक मुस्तक़िल कंपनी की तहवील में दे दिया जाता है जिसमें मुलाज़िम का एक नुमाइंदा होता है। ये कंपनी चूंकि मुलाज़िम की वकील है लिहाज़ा कंपनी का क़ब्ज़ा मुलाज़िम का क़ब्ज़ा शुमार होगा और ये रक़म मुलाज़िम की मिल्क होगी। इसलिए उस पर ज़कात फ़र्ज़ है।

(अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–260)

मस्अला: फ़ंड की ज़कात के सिलसिले में अगर कोई शख़्स तक़्वा और एहतियात पर अमल करते हुए सालहाए गुज़श्ता की भी ज़कात दे दे तो अफ़ज़ल और बेहतर है न दे तो कोई गुनाह नहीं है। क्योंकि फ़तवा इमाम आज़म (रह.) के क़ौल पर है कि फ़ंड ख़्वाह जब्री हो या इख़्तियारी, ज़कात के मसाइल में दोनों के अहकाम यकसां हैं, यानी वसूल होने के बाद साल गुज़रने पर ज़कात है, गुज़श्ता की नहीं। (इमदाद मसाइले ज़कात सफ़्हा–62)

मस्अला: जब फ़ंड की ये रक़म मुलाज़िम या उसके वकील को वसूल हो गई तो ज़कात के मसाइल में इमाम अबूहनीफ़ा (रह.) के मज़हब पर उसका हुक्म और ज़ाबता

वही होगा जो किसी और नई आमदनी और माले मुस्तफ़ाद का होता है और तफ़सील उस ज़ाबता की ये है–

(1) मुलाज़िम अगर वसूलयाबी से पहले भी साहबे निसाब नहीं था और फ़ंड की रक़म भी इतनी कम मिली कि उसे मिला कर भी उसका कुल माल निसाब की मिक़्दार को नहीं पहुंचता तो ज़कात के वाजिब होने का सवाल ही पैदा नहीं होता।

(2) अगर साहबे निसाब नहीं था, मगर उस रक़म के मिलने से साहबे निसाब हो गया तो वसूलयाबी के वक़्त से जब तक पूरा एक क़मरी साल न गुज़र जाए, उस पर ज़कात की अदाएगी वाजिब न होगी और साल पूरा होने पर भी इस शर्त पर वाजिब होगी कि उस वक़्त तक ये शख़्स साहबे निसाब रहे, लिहाज़ा अगर साल पूरा होने से पहले माल ख़र्च किया या चोरी वग़ैरा हो कर इतना कम रह गया कि ये शख़्स साहबे निसाब न रहा तो ज़कात वाजिब न होगी। और अगर ख़र्च होने के बावजूद साल के आख़िर तक माल बक़द्रे निसाब बचा रहा तो जितना बचा सिर्फ़ उसकी ज़कात वाजिब होगी और जो ख़र्च हो गया उसकी ज़कात वाजिब न होगी।

(3) अगर ये मुलाज़िम पहले से साहबे निसाब था तो फ़ंड की रक़म मिक़्दारे निसाब से ख़्वाह कम मिले या ज़्यादा उसका अलाहिदा शुमार न होगा बल्कि जो माल पहले से उसके पास था जब उसका साल पूरा होगा, फ़ंड की वसूल शुदा रक़म की ज़कात भी उसी वक़्त वाजिब हो जाएगी ख़्वाह उस नई रक़म पर एक ही दिन गुज़रा हो, मसलन एक शख़्स की मिलकियत साढ़े बावन

तोला चांदी की क़ीमत के बराबर नक़दी साल भर से रक़म मौजूद थी, साल पूरा होने से एक दिन पहले उसे प्रोवीडेन्ट फ़ंड के एक हज़ार रुपये और मिल गए तो अब अगले रोज़ उसे पूरे तीन हज़ार रुपये की ज़कात अदा करनी होगी।

मस्अलाः जो शख़्स पहले से साहबे निसाब था और साल पूरा होने से मसलन चार माह पहले उसे फ़ंड की रक़म मिल गई मगर वसूलयाबी के बाद चार माह गुज़रने न पाए थे कि कुछ रुपये ख़र्च हो गए, तो अब बाक़ी मांदा माल अगर बक़द्रे निसाब है तो जितना बाक़ी है उसकी ज़कात वाजिब होगी और जो ख़र्च हो गया, उसकी वजिब न होगी। अगर बाक़ी मांदा माल निसाब से कम है तो बिल्कुल वाजिब न होगी।

मस्अलाः मुलाज़िम को जो रक़म उसके फ़ंड में से बनामे क़र्ज़ दी जाती है शरअ़न ये क़र्ज़ नहीं बल्कि उसका जो क़र्ज़ मुहकमा के जिम्मा था उसके एक जुज़्व की वसूलयाबी है। (इमदाद मसाइले ज़कात सफ़्हा–66 बहवाला जदीद मसाइल के शरई अहकाम सफ़्हा–23 ता 66)

नोटः तफ़सील मुलाहज़ा हो प्रोवीडेन्ट फ़ंड पर ज़कात।

(मौलाना मुहम्मद रफ़ीअ़ उस्मानी)

क्या बैंक में जमा शुदा माल पर ज़कात है?

मस्अलाः बैंक में जो रक़म जमा की जाती है उसकी हैसियत "अमानत" की होती है। साहबे माल कभी भी अपना रुपया वसूल कर सकता है और उसमें तसर्रुफ़ कर सकता है। ज़कात वाजिब होने के लिए अमली तौर पर क़ब्ज़ा ज़रूरी नहीं है। बल्कि अगर वह बरवक़्त तसर्रुफ़

करने के मौक़फ़ में हो तो हुकमन क़ाबिज़ समझा जाएगा। उसकी नज़ीर ये है कि ख़रीद किए हुए माल (सामान) पर क़ब्ज़ा से पहले ही ज़कात वाजिब हो जाती है।

"اما المبيع قبل القبض الصحيح انه يكون نصابا"

(अलमबसूत जिल्द–2 सफ़्हा–190, इमाम सुरख़्सी)

लिहाज़ा बैंक में जमा शुदा रक़म पर मुकम्मल और हर साल ज़कात वाजिब है।

(जदीद फ़िक़्ही मसाइल सफ़्हा–119)

मस्अला: बैंक में रक़म रखी हुई है, एक साल उस पर गुज़र गया अगर साहबे निसाब है तो ज़कात वाजिब है। (फ़तावा रहीमिया जिल्द–2 सफ़्हा–14 व फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–134)

क्या फ़िक्सड डिपॉज़िट पर ज़कात है?

मस्अला: आज कल बैंक में रक़म जमा करने की एक सूरत वह है जिसको "फ़िक्सड डिपॉज़िट" कहा जाता है। इस तरह ये रक़म एक मख़सूस मुद्दत तीन या पांच या सात साल वग़ैरा के लिए नाक़ाबिले वापसी हो जाती है और इस मुद्दत की तकमील के बाद एक क़ाबिले लिहाज़ शरह सूद के साथ ये रक़म वापस मिलती है।

इमाम अबूहनीफ़ा (रह.) के यहां वजूबे ज़कात के लिए "मिल्के ताम" ज़रूरी है और मिल्के ताम ये है कि वह शय (चीज़) उसकी मिल्क में भी हो और उसको उस पर क़ब्ज़ा भी हासिल हो। इन दोनों बातों में से कोई एक बात भी न पाई जाए तो ज़कात वाजिब न होगी, लेकिन फ़िक़्ही नज़ाइर से मालूम होता है कि आदमी जो सामान ख़ुद अपने इख़्तियार से किसी दूसरे के क़ब्ज़ा में दे दे

मगर उस चीज़ पर उसकी मिलकियत बाक़ी हो तो सरेदस्त क़ब्ज़ा न होने के बावजूद ज़कात वाजिब रहती है। चुनांचे इससे पहले गुज़र चुका है कि क़र्ज़ पर लगी हुई रक़म पर ज़कात वाजिब होती है, इसलिए फ़िक्सड डिपॉज़िट की रुकूम पर भी ज़कात वाजिब होगी।

अलबत्ता एक ही साथ तमाम सालों की ज़कात उस वक़्त अदा की जाएगी जब ये रक़म साहबे माल को वसूल हो जाए। (जदीद फ़िक़्ही मसाइल सफ़्हा–120 बहवाला किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–591)

मस्अला: बैंक फ़िक्सड डिपॉज़िट, सेविंग सर्टीफ़ीकेट, प्राइज़ बौंड और इंशोरेंस ये सूदी क़र्ज़ हैं। इनआमी बौंड में सूद के अलावा क़िमार (जुवा) भी है। इसलिए अस्ल रक़म पर ज़कात फ़र्ज़ है और कुल मुनाफ़ा हराम होने की वजह से वाजिबुत्तसद्दुक़ हैं।

(अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–487)

क्या बैंक और इंशोरेंस के इन्ट्रेस्ट पर ज़कात है?

मस्अला: बैंक और इंशोरेंस पर जो इन्ट्रेस्ट मिलता है वह सूद तो है ही, बसा औक़ात जुवा (क़िमार) भी हो जाता है और इसलिए माले हराम है। माले हराम को सदक़ा की नीयत से नहीं दिया जा सकता। ये कारे सवाब नहीं है बल्कि एक कारे ख़ैर की तौहीन है। हुज़ूर (स.अ.व.) ने फ़रमाया– "لاصدقة فی غلول" (ترمذی)

चुनांचे फ़िक़्ह की मशहूर किताब "क़नीया" में है कि अगर पूरा निसाब माले हराम ही है तो उसके ज़िम्मा ज़कात नहीं होगी, क्योंकि उस तमाम के तमाम माल को दे देना ज़रूरी है (जबकि साहबे माल को वापस करने में

कोई परेशानी न हो, वरना सदक़ा कर दे जबकि मालिक न मिलें) फिर उसके एक हिस्सा में ज़कात वाजिब करने का क्या हासिल? इसलिए अगर तमाम माल हराम ही हो और उसी क़िस्म की रक़म पर मुश्तमल हो, तब तो ज़कात वाजिब ही न होगी, और अगर माल का ग़ालिब हिस्सा हलाल हो और कुछ हराम तो दोनों के मजमूआ पर ज़कात वाजिब होगी, और उसकी नज़ीर ये है कि फुक़हा ने ऐसे ग़सब करदा माल पर ज़कात वाजिब क़रार दी जिसको आदमी अपने माल के साथ मख़लूत कर दे।

"ولو خلط السلطان المال المغصوب بماله ملكه فتجب الزكوة فيه"

(दुर्रेमुख़्तार जिल्द–2 सफ़्हा–39 व जदीद फ़िक़्ही मसाइल सफ़्हा–121)

बॉंड वग़ैरा पर ज़कात का हुक्म

सवाल: ज़ैद के पास अपनी हवाइजे ज़रूरीया के अलावा ऐसा रुपया है जिससे उसने बॉंड (जो एक क़िस्म का सरकारी काग़ज़ है, फ़िक्स डिपॉज़िट वग़ैरा) ख़रीदे हैं या ज़ैद ने वह रुपया किसी को क़र्ज़ बिला सूद दे दिया तो उसका क्या हुक्म है?

जवाब: इन सब सूरतों में ज़कात वाजिबुलअदा है लेकिन क़र्ज़ देने की सूरत में वसूल होने के बाद गुज़श्ता ज़माना की ज़कात वाजिबुलअदा है यानी लाज़िम है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–137 बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–12)

मौत के मुआवज़ा पर जो रक़म मिली उसका हुक्म

सवाल: तसादुमे रेल (जहाज़, बस, मोटर वग़ैरा) से ज़ैद का इंतिक़ाल हो गया। कंपनी ने उसकी जान के

मुआवज़ा में उसके वालिदैन व बेवा और नाबालिग़ बच्चों को मबलिग़ तीस हज़ार रुपये दिए, तो उन बच्चों और बेवा की रुकूम पर ज़कात फ़र्ज़ होगी या नहीं?

जवाब: बच्चे जब तक नाबालिग़ हैं उनके हिस्सा के रुपये पर ज़कात वाजिब नहीं है। और बेवा और वालिदैन के हिस्सा में जो रुपया आया है उस पर ज़कात (जबकि साल भर तक वह रक़म मौजूद रहे) वाजिब है और बच्चे जिस वक़्त बालिग़ हो जाएंगे तो उनके हिस्से के रुपये पर भी ज़कात बालिग़ होने के वक़्त से वाजिब हो जाएगी।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–132 बहवाला रद्दुलमुह्तार किताबुज़्ज़कात जिल्द–6 सफ़्हा–4)

दफ़ीना का क्या हुक्म है?

सवाल: जो रुपया ज़मीन में मदफ़ून है और उससे किसी क़िस्म का नफ़ा नहीं है तो उसमें ज़कात है या नहीं?

जवाब: उस रुपये की ज़कात हर साल देनी चाहिए।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–338 बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–12)

"यानी अगर वह निसाब के बराबर है तो ज़कात ज़रूरी है।" (मुहम्मद रफ़अत क़ासमी ग़ुफ़िरलहू)

कानों और दफ़ीनों की ज़कात का हुक्म

मस्अला: ज़मीन के अन्दर कानों के जो क़ुदरती ख़ज़ाने हैं, उनमें तीन तरह की अश्या बरआमद हुई हैं। (1) हरारत से पिघलने वाली धातें। (2) रक़ीक़ और बहने वाली चीज़ें। (3) या पत्थर, वह चीज़ें जो न आग पर पिघलती हों और न बज़ाते ख़ुद पतली और रक़ीक़ हों।

आग पर पिघलने वाली चीज़ धात की किस्में हैं: सोना, चांदी, लोहा, रांग, तांबा, कांसी वग़ैरा, इनमें ज़कात का वजूब पांचवें हिस्से के बक़द्र होता है। कान से ये धातें बरआमद करने वाला आज़ाद आदमी हो, या गुलाम हो, ज़िम्मी हो या लड़का हो या औरत हो, बहरहाल पांचवां हिस्सा ज़कात का अदा करने के बाद बाक़ी शय का बरआमद करने वाला मालिक होगा।

मस्अलाः अगर किसी दफ़ीने को बरआमद करने में दो शख़्स (एक साथ) जद्दोजेहद करें और उनमें से एक के हाथ आ जाए तो दफ़ीना का वही एक शख़्स तन्हा मालिक क़रार दिया जाएगा, और अगर कोई शख़्स कान कनी का ठीका ले तो कान से जो मिक़्दार बरआमद करेगा उसका वही मालिक क़रार दिया जाएगा।

(बह्रुर्राइक़)

मस्अलाः दूसरी क़िस्म वह है जो रक़ीक़ और पतली हो, जैसे गंधक, नमक, तेल, पेट्रौल। और तीसरी क़िस्म वह है जो न रक़ीक़ हो और न पिघलने वाली हो, जैसे चूना, गच, कोएला, जवाहर याकूत इन दो क़िस्मों पर "तहज़ीब" के मुताबिक़ ज़कात वाजिब न होगी। सीमाब (पारा) में ज़कात का पांचवां हिस्सा निकालना वाजिब है।

मस्अलाः अगर किसी शख़्स को दारुलइस्लाम में किसी एसी जगह दफ़ीना हाथ आए, जो जगह किसी की मिलकियत न हो जैसे सहराई इलाक़ा तो अगर मदफ़ून सिक्कों पर इस्लामी सलतनत की कोई अलामत कंदा हो तो उस दफ़ीना का वही हुक्म है जो पड़ी हुई चीज़ के पा लेने का है और अगर दौरे जाहिलीयत की अलामत हो

तो पांचवां हिस्सा ज़कात का निकाल कर बाक़ी चार हिस्से पाने वाले की मिलकियत होंगे।

मस्अला: कोई दफ़ीना किसी शख़्स की ज़ाती ज़मीन में बरामद हो तो फ़ुक़हा के नज़दीक बाइत्तिफ़ाक़ उसमें ज़कात का पांचवां हिस्सा वाजिब है।

मस्अला: अगर किसी जगह सामान मसलन घरेलू असबाब कपड़े और नगीने बरामद हों तो वह भी ख़ज़ाने के हुक्म में है और उस पर ज़कात का पांचवां हिस्सा वाजिब होगा।

(तफ़सील देखिए फ़तावा आलमगीरी उर्दू जिल्द–4 सफ़्हा–24 व किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–996)

मस्अला: आज कल ख़ुसूसन हमारे मुल्क हिन्दुस्तान में चूंकि बैतुलमाल का कुछ इंतिज़ाम नहीं है। इसलिए बैतुलमाल का हिस्सा बतौर ख़ुद उन लोगों को जिनका ज़िक्र मुस्तहक़्क़ीने ज़कात के ब्यान में आएगा, तक़्सीम कर दिया जाए। (इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–4 सफ़्हा–49)

मअ़दन व पेट्रौल वग़ैरा पर ज़कात का हुक्म

मस्अला: कान और मअ़दने माए जैसे पेट्रौल और ग़ैर मुन्तबअ़ (जो ढाले न जाते हों) जैसे जवाहर में ख़ुम्स (पांचवां हिस्सा) नहीं है, और मुन्तबअ़ ग़ैर माए (जो ढाले जाते हों, मगर बहने वाले न हों) पर ख़ुम्स वाजिब है, अलबत्ता ज़ीबक़ के मअ़दन पर माए होने के बावजूद ख़ुम्स है। इसलिए कि ये दूसरी अश्या के साथ मिल कर इंतिबाअ़ (ढाले जाने) की सलाहियत रखता है। साहिबैन रहिमहुमल्लाह के यहां ऐसा मअ़दन ख़्वाह सरकारी ज़मीन में पाया जाए या अपनी ममलूका ज़मीन में या किसी घर व मकान व

दुकान में बहरहाल उस पर खुम्स है।

इमाम साहब रहिमहुल्लाह तआला के यहां किसी घर व दुकान में पाये जाने वाले मअ्दन पर खुम्स नहीं, ज़ाती ज़मीन से मुतअ़ल्लिक़ इमाम साहब रहिमहुल्लाह से दो रिवायतें हैं, तरजीह रिवायते वजूब को दी गई है। सरकारी ज़मीन में मअ्दन पाया गया तो पाने वाले की मिल्क है और अगर अपनी ज़ाती ज़मीन हो तो मालिके ज़मीन की मिल्क है। (अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–288)

मस्अला: माए अश्या जैसे तारकोल और मिट्टी का तेल, पेट्रौल या गैस, नमक वग़ैरा के बरआमद होने पर कोई मुतालबा नहीं है (ज़कात नहीं है) इसी तरह ऐसी अश्या पर भी जो न आग पर पिघलाई जाती हों और ना माए हों जैसे चूना पत्थर और जवाहरात वग़ैरा पर कुछ आएद नहीं होता, अलबत्ता माए अश्या में से पारा इस हुक्म से मुस्तस्ना है। पारा बरआमद हो तो उस पर खुम्स (पांचवां हिस्सा) वाजिब है। वाज़ेह हो कि दफ़ीना में वह तमाम अश्या शामिल हैं जो ज़मीन के अन्दर दस्तयाब हों। मसलन हथियार, आलात और सामाने ख़ानादारी वग़ैरा यानी इन तमाम अश्या पर खुम्स वाजिब होगा।

(किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–997)

क्या मन्नत की रक़म पर ज़कात है?

सवाल: एक शख़्स ने किसी आमदनी का तीसरा हिस्सा अल्लाह के नाम मान लिया, जब कोई शख़्स क़ाबिले रहम नज़र आया तो उसकी इमदाद की, क्या उस रक़म पर ज़कात होगी, जो उसने ग़रीबों के लिए या अल्लाह के नाम रखी है?

जवाबः अगर ज़बान से नज़्र या मन्नत का लफ़्ज़ कहा हो तो ये नज़्र हो गई, इसका हुक्म ये है कि उस पर ज़कात फ़र्ज़ है, मगर अलग से अदा करना ज़रूरी नहीं, बल्कि उसी रक़म का चालीसवां हिस्सा बनीयते ज़कात दे सकता है। बाक़ी बमद्दे नज़्र सदक़ा करे, बक़द्रे ज़कात की नज़्र साक़ित हो जाएगी। अगर ये कुल रक़म बग़ैर नीयते ज़कात मसाकीन को दे दी तो भी उसमें से चालीसवां हिस्सा ज़कात में गया और बाक़ी नज़्र में, ये हुक्म उस सूरत में है कि नज़्र की रक़म अलग मुतऐयन हो, वरना मुतलक़ रक़म की नज़्र में ये सारी रक़म बमद्दे नज़्र वाजिबुत्तसद्दुक़ होगी, और उसकी ज़कात अलग फ़र्ज़ होगी। अगर बग़ैर नीतये ज़कात कुल रक़म सदक़ा कर दी तो भी ज़कात अदा हो गई, मगर बक़द्रे ज़कात मज़ीद बमद्दे नज़्र सदक़ा वाजिब होगा।

(अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–266)

क्या वक़्फ़ माल पर ज़कात है?

मस्अलाः वक़्फ़ शुदा माल पर भी ज़कात वाजिब नहीं है, क्योंकि उसका कोई मालिक नहीं होता, इसी तरह उस खेती पर भी ज़कात (उश्र) नहीं है जो मुबाह (ग़ैर ममलूका आराज़ी) ज़मीन की पैदावार हो, क्योंकि उसका भी कोई मालिक नहीं है। (किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–961 व फ़िक़्हुज़्ज़कात जिल्द–1 सफ़्हा–177)

मस्अलाः इसी तरह इस हुक्म से वह माल भी ख़ारिज है जो किसी के लिए मुऐयन किए बग़ैर वक़्फ़ किया गया हो, मसलन कोई बाग़ मस्जिद या सराए के लिए या बिलउमूम फ़ुक़रा व मसाकीन के लिए बिलातऐयुन वक़्फ़

हो तो उसके फलों और पैदावार पर ज़कात (उश्र) नहीं है। अलबत्ता अगर वह ज़मीन (वक़्फ़ शुदा) ठीका पर दी गई और उस पर खेती की गई तो ठीकादार को उसके लगान के अलावा ज़कात (उश्र) भी देनी पड़ेगी।

(किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–963)

"यानी वक़्फ़ पर तो नहीं है, लेकिन ठीकादार ने ज़मीन ले कर ज़राअ़त वग़ैरा की तो जो उसके हिस्सा में आएगा उसमें उश्र होगा।"

(मुहम्मद रफ़अ़त क़ासमी)

क्या ज़कात की रक़म पर ज़कात है?

सवालः किसी ने अपने माल की ज़कात निकाली लेकिन उसे किसी मुस्तहिक़ के हवाले नहीं किया और एक साल तक रखी रही तो क्या उस रक़म पर भी ज़कात है?

जवाबः ज़कात पर ज़कात नहीं, उस रक़म को तो ज़कात में अदा करे। (आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–370 व फ़िक़्हुज़्ज़कात जिल्द–1 सफ़्हा–176 व किफ़ायतुलमुफ़्ती जिल्द–4 सफ़्हा–143)

क्या चंदा की रक़म पर ज़कात है?

मस्अलाः मदरसा का चंदा जो बक़द्रे निसाब जमा हो जाता है और साल भर उस पर गुज़र जाता है उसमें ज़कात नहीं है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–49, बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–9)

मस्अलाः मुहल्ला का वह रुपया जो जमाअ़त या कमेटि का मुश्तरका रुपया हो और लोगों के काम आने के लिए जमा किया या मस्जिद का रुपया हो, उस पर ज़कात नहीं है। (किफ़ायतुलमुफ़्ती जिल्द–4 सफ़्हा–250)

मस्अला: मुहतमिमे मदरसा के पास जो रक़म मदरसा की जमा रहती है उसमें ज़कात फ़र्ज़ नहीं होगी।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़हा–51 बहवाला रद्दुलमुहतार किताबुज़्ज़कात जिल्द–2 सफ़हा–9)

मस्अला: जो रक़म किसी कारे ख़ैर के चंदा में दी जाए उसकी हैसियत माले वक़्फ़ की हो जाती है और वह चंदा देने वालों की मिलकियत से ख़ारिज हो जाती है। इसलिए उस पर ज़कात नहीं।

(आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़हा–372)

जिन मदारिस में ज़कात की रक़म जमा हो वहां ज़कात देना कैसा है?

सवाल: बाज़ मदारिस में ज़कात के रुपये तक़रीबन चालीस हज़ार जमा हो जाते हैं तो ऐसे मदरसा में ज़कात देने से ज़कात अदा होगी या नहीं?

जवाब: मदरसा वालों को ज़कात की रक़म उसी साल में काम में ले लेनी चाहिए। मदरसा में चाहे कितनी ही ज़कात हो, देना मना नहीं है। अलबत्ता सालहा साल जो जमा रखते हों, ऐसे मदारिस में नहीं देना चाहिए, जहां काम में सर्फ़ की जाती हो और ज़रूरत हो वहीं देनी चाहिए। (फ़तावा रहीमिया जिल्द–5 सफ़हा–163 व फ़तावा महमूदिया जिल्द–3 सफ़हा–65)

बिला ज़रूरत ज़कात वसूल करना?

सवाल: (1) ज़कात के पैसों की फ़िलहाल ज़रूरत नहीं है मगर मदरसा की बक़ा और इरतिक़ा और इस्तेहकाम के पेशे नज़र बतौर पेश बीनी ज़कात की रक़म ले ली जाती है तो क्या ऐसा करना जाइज़ है?

(2) अगर मुहतमिमे मदरसा ज़कात वसूल कर के हीलए तमलीक कर ले और फिर इससे मसालेह सर्फ़ करता रहे तो हीलए तमलीक से ज़कात अदा हो जाएगी?

जवाबः हामिदन व मुसल्लियन। मदरसा की बक़ा व इरतिक़ा और इस्तेहकाम के लिए सूरते मस्ऊला इख़्तियार करना दुरुस्त है।

(2) तमलीक से ज़कात फ़ौरन अदा हो जाएगी।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–3 सफ़्हा–39 बहवाला हिदाया जिल्द–1 सफ़्हा–179)

कमीशन पर ज़कात का चंदा वसूल करना

सवालः मदारिस में अक्सर चंदा की रक़्म में से हिस्सए मुक़र्ररा पर चंदा मांगते हैं, बाज़ की तन्ख़्वाह मुक़र्रर होती है। अगर ज़कात की रक़्म उनको दी जाए तो क्या ज़कात अदा हो जाएगी?

जवाबः चंदा के हिस्से पर सफ़ीर मुक़र्रर करना जाइज़ नहीं। मदारिस को जो ज़कात दी जाती है अगर वह सही मसरफ़ पर ख़र्च करेंगे तो ज़कात अदा होगी वरना नहीं। इसलिए ज़कात सिर्फ़ उन्ही मदारिस को दी जाए जिनके बारे में इत्मीनान हो कि वह ठीक मसरफ़ पर ख़र्च करते हैं। (आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–307)

मस्अलाः कमीशन पर चंदा करने के बारे में तफ़सील ये है कि अगर तन्ख़्वाहदार मुलाज़िम है तो उसकी अच्छी कारकरदगी की वजह से तन्ख़्वाह के अलावा फ़ीसद कमीशन बतौरे इनआम देना जाइज़ है, लेकिन ज़कात के पैसे से देना जाइज़ नहीं है, बल्कि ज़कात का पैसा मदरसा में जमा मरना लाज़िम है और ये इनआम मदरसा अपने इमदादी

फ़ंड में से दे सकता है। और अगर तन्ख़्वाहदार मुलाज़िम नहीं है तो कमीशन पर चंदा इजारए फ़ासिदा होने की वजह से जाइज़ नहीं है। (हिदाया जिल्द–3 सफ़्हा–292 व फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा– व फ़तावा महमूदिया जिल्द–13 सफ़्हा–102 व जिल्द–10 सफ़्हा–332)

ज़कात वग़ैरा ज़बरन वसूल करना कैसा है?

सवाल: जबरन उश्र व चंदा वसूल कर के मदरसा व मकतब में सर्फ़ करना कैसा है?

जवाब: जब्र करना सदक़ए नफ़्ली में दुरुस्त नहीं है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–338)

ज़कात की रक़म बिला इजाज़त ख़र्च करना कैसा है?

मस्अला: एक शख़्स के पास मोहतमिमे मदरसा ने कुछ रुपया ज़कात का तलबा के वास्ते रख दिया था, उसको कुछ ज़रूरत पड़ी उसने बिला इजाज़त मोहतमिमे मदरसा के अपने ख़र्च में सर्फ़ कर लिया और फिर अदा कर दिया तो उसके लिए हुक्म ये है कि उसको ऐसा करना जाइज़ न था, लेकिन अदा करने के बाद बरी हो गया।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–338)

ज़कात की रक़म में से कमीशन देना?

सवाल: एक शख़्स अपने रिश्तादारों को हिन्दुस्तान में ज़कात के पैसे भेजता है। आज कल रुपयों के भेजने में कमीशान देना पड़ता है तो क्या ज़कात में से दे सकते हैं? मसलन ज़कात के हज़ार रुपये भेजें तो मुरसल इलैहि को आठ सौ रुपये पहुंचते हैं तो ये दो सौ रुपये ज़कात के होंगे या जिस को भेजे हैं उसको रक़म क़रार देंगे?

जवाब: मज़कूरा दो सौ रुपये ज़कात के शुमार न

होंगे, लिहाज़ा दो सौ रुपये और अदा करने होंगे।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–2 सफ़्हा–10)

तिजारती माल पर ज़कात क्यों है?

अल्लाह तआला ने मुसलमानों के लिए तिजारत करना और उससे नफ़ा हासिल करना जाइज़ क़रार दिया है, बशर्तेकि ये तिजारत किसी हराम शैय (चीज़) की न हो, और मुआमलात में सच्चाई, अमानतदारी वग़ैरा के अख़्लाक़ी उसूलों को तर्क न किया जाए और तिजारत की मशगूलियत ज़िक्रुल्लाह से और हुकूकुल्लाह की अदाएगी से ग़ाफ़िल न करे। ये बात भी क़ाबिले तअज्जुब न होनी चाहिए कि इस्लाम ने तिजारत से हासिल होने वाली उस दौलतपर ज़रे नक़द की तरह सालाना ज़कात मुक़र्रर कर दी, ताकि नेमते इलाही का शुक्र अदा हो जाए और उसके बंदों में से ज़रूरत मंद बंदों का हक़ अदा हो जाए और दीन और रियासत की आम मसालेह (मफ़ादाते आम्मा) में शिरकत हो जाए जो कि हर ज़कात के मक़ासिद हैं।

फ़िक़्हे इस्लामी में तिजारत पर ज़कात के अहकाम भी ब्यान किए गए ताकि मुसलमान ताजिर को मालूम हो जाए कि उसे किस माल पर ज़कात देनी है और किस माल पर उसे ज़कात से छूट हासिल है।

फ़ुक़हा तिजारती दौलत को "उरूज़े तिजारत" कहते हैं और उससे उनकी मुराद ज़रे नक़द के अलावा हर सामान होता है जो तिजारत के लिए मुहैया किया गया, ख़्वाह वह किसी भी क़िस्म का हो, मसलन आलात और मशीनें हों, इस्तेमाली सामान हों, कपड़े हों, खाने पीने की अश्या हों, ज़ेवरात व जवाहरात हों, हैवानात व नबातात

हों, घर हों या ज़मीन या मन्कूला और ग़ैर मन्कूला जाएदादें हों, (ग़रज़) जो अश्या फ़ाएदा हासिल करने की ग़रज़ से ख़रीदोफ़रोख़्त के लिए मुहैया की गई हैं, वह सामाने तिजारत हैं। ग़रज़ ये है कि जिस किसी के पास सामाने तिजारत हो और उस पर साल गुज़र जाए और उसकी क़ीमत बक़द्रे निसाब हो तो उस पर ज़कात की अदाएगी लाज़िम आ जाएगी। यानी सामान की क़ीमत का चालीसवां हिस्सा या ढाई फ़ीसद, जिस तरह ज़रे नक़द की ज़कात का हिसाब होता है।

(फ़िक़्हुज़्ज़कात अज़ जिल्द–1 सफ़्हा–414 ता 416)

"इस्लाम ने न सिर्फ़ तिजारत और मेहनत की तरग़ीब दी, बल्कि ताजिरों को इस बात की भी तरग़ीब दी है कि तिजारत के मसाइल और उसका इल्म हासिल करें आज दुनिया में हर जगह कॉमर्स (Comerc) कॉलेज क़ाइम हैं, लेकिन उसकी इब्तिदा सब से पहले हज़रत उमर (रज़ि.) ने की थी।

जामेअ़ तिर्मिज़ी की रिवायत है कि हज़रत उमर (रज़ि.) ने अपने दौरे ख़िलाफ़त में ये ऐलान किया था कि हमारे बाज़ारों में सिर्फ़ वही लोग तिजारती लेन देन करें जिन को दीन की समझ और तिजारत के मसाइल से वाक़िफ़ीयत हो, फिर हज़रत उमर (रज़ि.) ने बाक़ाएदा उसके लिए इदाराजात (Institute) क़ाइम किए, जिसमें उस वक़्त के उलमाए किराम तशरीफ़ ले जाते थे और ताजिर भी वहां जमा होते थे, ताजिर

हज़रात अपने अपने दरपेश मसाइल उलमाए किराम (रज़ि.) से हल कराते थे। और हज़रत इमाम मालिक (रह.) का ये आलम था कि इशा की नमाज़ के बाद से रात के बारह बजे तक मदीना तैयबा के ताजिरों को लेकर बैठे रहते थे और तिजारती लेन देन और ज़कात वग़ैरा के मसाइल सिखाया करते थे।"

(मुहम्मद रफ़अत क़ासमी गुफ़िरलहू)

तिजारती माल की ज़कात की शराइत

मस्अला: हनफ़ीया के नज़दीक माले तिजारत में ज़कात वाजिब होने की चंद शर्तें हैं।

❑ एक शर्त ये है कि उसकी (तिजारत की) क़ीमत सोने या चांदी के हिसाब से निसाब पूरा करती हो, और ये इख़्तियार है कि सोने या चांदी के सिक्कों में से जिस सिक्का में चाहे क़ीमत लगाई जाए (यानी दोनों निसाबों में से चांदी व सोने का जो निसाब है साढ़े बावन तोला चांदी की क़ीमत के बराबर अगर तिजारत का माल है तो ज़कात वाजिब है और माल की वह क़ीमत लगाई जाएगी जो उस शहर में हो, अगर वह माल किसी ग़ैर आबाद जगह भेजा जाए (जहां क़ीमत का सवाल ही नहीं पैदा होता) तो उस एलाक़ा के क़रीब जो शहर हो वहां की क़ीमत के लिहाज़ से उसकी मालियत लगाई जाए।

❑ दूसरी शर्त ये है कि उस माल पर एक साल गुज़र जाए और इस बारे में साल के दोनों सिरों को देखा जाएगा, दरमियानी हिस्सा को न देखा जाएगा, लिहाज़ा अगर कोई शख़्स (ताजिर) साल के आग़ाज़ में निसाब का

मालिक हो और दरमियाने साल में वह माल निसाब से कम रह जाए लेकिन साल के ख़त्म पर फिर निसाब पूरा हो जाए तो ज़कात वाजिब होगी। अलबत्ता अगर साल के आग़ाज़ व अंजाम में निसाब कम रहा तो ज़कात वाजिब न होगी।

❑ एक शर्त ये भी है कि उस माल से तिजारत की नीयत हो, और नीयत के साथ अमली तौर पर तिजारती कारोबार शुरू भी कर दिया हो, लिहाज़ा अगर कोई जानवर ख़िदमत (सवारी) के लिए ख़रीदा गया हो फिर इरादा किया कि उसकी तिजारत की जाए तो वह माले तिजारत मुतसव्वुर न होगा, जब तक कि फ़िलवाक़े उसे बेचना या किराये पर देना शुरू न कर दे।

अगर किसी शख़्स को नक़दी के अलावा कुछ माले तिजारत अतीया के तौर पर मिला या किसी ने उसके हक़ में वसीयत की और अतीया या वसीयत के वक़्त उस माल से तिजारत की नीयत की तो ये नीयत तस्लीम न की जाएगी जब तक कि उस माल से कारोबार न शुरू किया जाए।

अगर किसी ने तिजारती माल को इस तरह किसी और माल से तबादला किया तो नीयत का इन्हिसार अस्ल माले तिजारत पर होगा। मुबादला पर नीयत मुनहसिर न होगी। लिहाज़ा तबादला का माल तिजारत ही के लिए समझा जाएगा और बुनियादी तौर पर जो नीयत की गई थी उसे काफ़ी समझा जाएगा। हां अगर तबादला के वक़्त तिजारत की नीयत न रही हो ता अब वह माले तिजारत मुतसव्वर न होगा।

❑ एक शर्त ये भी है कि उस माल में ये सलाहियत हो कि उसमें तिजारत करने की नीयत दुरुस्त हो, लिहाज़ा अगर किसी ने उश्री ज़मीन (जिसकी पैदावार पर उश्र हुआ है) ख़रीदी और उसमें काश्त की, या खड़ी खेती और उसकी पैदावार को ख़रीद लिया तो उस ज़मीन से जो पैदावार होगी उस पर उश्र वाजिब होगा। ज़कात वाजिब न होगी। ये हुक्म ख़िराजी ज़मीन का नहीं है उस पर ज़कात (उश्र) वाजिब नहीं होता। अगरचे ज़राअत (खेती) न की गई हो।

अगर किसी का माल मेवेशी (जानवर) है और हुनूज़ (अभी तक) साल न गुज़रा था कि उसकी तिजारत का इरादा तर्क कर दिया और उसे दूध या नस्ल के लिए या ऐसे ही किसी और काम के लिए जिस का ज़िक्र साएमा जानवरों की ज़कात में बताया गया और जंगल में चराना शुरू कर दिया तो माले तिजारत का साल मुनक़तअ़ हो जाएगा और साल उस वक़्त से शुरू होगा जब कि उसे साएमा जानवर बनाया गया और फिर साल पूरा हो तो उसकी ज़कात साएमा जानवर के तरीक़ा से निकाली जाएगी, क़ीमत लगा कर नहीं (इसका जानवरों की ज़कात में ब्यान है।)

सोने व चांदी की तिजारत हो तो उसकी ज़कात नक़दी की ज़कात के तरीक़ (मुतज़क्किरा साबिक़ा) के मुताबिक़ अदा की जाए। उनकी ज़कात वाजिब होने के लिए तिजारत की नीयत करना शर्त नहीं है। अगर किसी के पास तिजारत का माल सालहा साल पड़ा रहा फिर उसके बाद फ़रोख़्त किया तो हर साल की ज़कात वाजिब होगी सिर्फ़ एक

साल की नहीं।

(किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–987 ता 989)

ज़कात के लिए साल गुज़रना क्यों शर्त है?

शरीअत ने ज़कात के वजूब को न तो हुक्मरानों की मर्ज़ी पर छोड़ा कि जब चाहें ज़कात वसूल करना शुरू कर दें, और न बख़ील लोगों की मर्ज़ी पर रहने दिया कि जब वह चाहें ज़कात दे दिया करें, बल्कि एक महदूद व मुक़र्ररा ज़ाबता के तहत सालाना गर्दिश के साथ क़ाइम कर दिया है। और साल को मिक़्दार के तौर पर इसलिए मुक़र्रर किया है कि साल भर में फ़स्लों के तमाम तग़ैयुरात मुकम्मल हो जाते हैं, माल वालों की आमदनियां मुकम्मल हो जाती हैं और ज़रूरत मंदों की ज़रूरतें सामने आ जाती हैं। ग़रज़ साल की मुद्दत एक ऐसी माक़ूल मुद्दत है जिसमें अस्ल माल का बढ़ना मुतहक़्क़क़ हो जाता है। तिजारत का नफ़ा नुक़्सान सामने आ जाता है और मवेशियों की नई नस्ल आ जाती है और छोटी नस्ल बड़ी हो जाती है।

इमाम इब्न क़य्यिम (रह.) फ़रमाते हैं कि अल्लाह तआला ने हर साल ज़कात इसलिए वाजिब फ़रमाई है कि एक साल में हर तरह की फ़स्लें और फल तैयार हो जाते हैं और ये मुद्दत बड़ी मबनी बर इंसाफ़ है। इसलिए कि अगर हर हफ़्ते या हर महीने ज़कात वाजिब होती तो ये साहबे निसाब (मालदारों) के लिए बाइसे तकलीफ़ होता। और अगर ज़कात उम्र भर में एक मरतबा फ़र्ज़ होती तो ये बात मिस्कीन (ज़रूरत मंद) के लिए बाइसे मुज़र्रत होती। इसलिए साल की मुद्दत वजूबे ज़कात के मआमले में यक़ीनन एक आदिलाना मुद्दत है।

(फ़िक़्हुज़्ज़कात जिल्द–2 सफ़्हा–222 बहवाला बिदायुलमुजतहिद जिल्द–1 सफ़्हा–261 व ज़ादुलमआद जिल्द–1 सफ़्हा–307 व हुज्जतुल्लाहिलबालिग़ा जिल्द–2 सफ़्हा–3)

कितनी तिजारत पर ज़कात है?

मस्अला: वजूबे ज़कात के लिए निसाबे ज़कात पर पूरा साला गुज़रना ज़रूरी है, ख़्वाह क़रीब क़रीब पूरा साल होने को हो। चुनांचे अगर कोई शख़्स आग़ाज़े साल में निसाब से कम का मालिक था, फिर उस कम माल से तिजारत की जिससे इतना नफ़ा हुआ कि निसाब (साढ़े बावन तोला चांदी) की क़ीमत के बराबर मुकम्मल हो गया तो जिस वक़्त से निसाब मुकम्मल हुआ उस वक़्त से पूरा साल गुज़रना मोतबर होगा। चुनांचे निसाब पूरा होने के बाद जब एक साल गुज़र जाए तब ज़कात वाजिब होगी। अगर शुरू साल में निसाब पूरा था फिर दौराने साल में उससे तिजारत कर के नफ़ा में वही कुछ हासिल किया जो उस माल की जिन्स में से है तो उस माल को जो उसके पास था उस नफ़ा में शामिल कर के तमाम साल की ज़कात पूरे अस्ल माल की अदा की जाएगी। बशर्तेकि अस्ल माल निसाब को पूरा करता हो, क्योंकि अगर अस्ल माल निसाब को पूर करता हो तो उस के फ़ाएदे को भी अस्ल माल ही तसव्वुर किया जाएगा।

(किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–965)

मस्अला: सामाने तिजारत अगर साढ़े बावन तोला चांदी की क़ीमत के बराबर है तो उस पर भी ज़कात फ़र्ज़ है। (यानी छः सौ बारह ग्राम पैंतीस मिली ग्राम चांदी की

क़ीमत के बराबर हो।) (इमदाद मसाइले ज़कात सफ़्हा–48)

तिजारत की ज़कात निकालने का तरीक़ा

मस्अला: अस्ल माले तिजारत की क़ीमत लगा कर ज़कात अदा करना वाजिब है, तमाम माल की क़ीमत लगा कर बाहम इकट्ठा कर लेना चाहिए। ख़्वाह वह माल मुख़्तलिफ़ नौइयत के हों, मसलन कपड़ा और तांबे पीतल का सामान। इसी तरह साल के दौरान जो नफ़ा हो उसको भी माल की क़ीमत में शामिल कर लिया जाए। नीज़ तिजारत के अलावा किसी और ज़रीआ से जो माल हासिल हो मसलन वरासत या हिबा वग़ैरा से तो वह मुनाफ़ा और ये माल सब को मिला कर निसाब पूरा हो और साल भी पूरा हो जाए तो सब की ज़कात निकाली जाए, बशर्तेकि कि निसाब पूरा हो और साल के ख़ात्मा पर (निसाब से) कम न हो गया हो। ग़रज़ ज़कात के वाजिब होने का इन्हिसार पूरे साल भर तक निसाब के क़ाइम रहने पर है। (किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–994)

मस्अला: जब ज़कात के अदा करने का वक़्त आ जाए तो अपनी नक़दी और तिजारती सामान का जाइज़ा लिया जाए और जुमला सामाने तिजारत की नक़दी में क़ीमत मुतअैयन कर लो फिर उस रक़म में उस क़र्ज़ को भी शामिल कर लो जो तुम ने खाते पीते आसूदा हाल लोगों को दे रखा हो, फिर उस मजमूई रक़म में से वह क़र्ज़ाजात जो तुम पर वाजिबुल अदा हों, मिन्हा कर के बक़िया रक़म की ज़कात अदा कर दो।

(फ़िक़्हुज़्ज़कात जिल्द–1 सफ़्हा–242)

मस्अला: किसी के पास कुछ सोना व चांदी और

कुछ रुपया और कुछ माले तिजारत है लेकिन अलाहिदा अलाहिदा उनमें से बक़द्रे निसाब कोई चीज़ नहीं तो सब को मिला कर देखें, अगर उस मजमूआ की क़ीमत साढ़े बावन तोला चांदी के बराबर हो जाए तो ज़कात फ़र्ज़ होगी।

(इमदाद मसाइले ज़कात सफ़्हा–48 व किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–964)

क़र्ज़ की क़िस्मों पर ज़कात के अहकाम

मस्अला: शरीअ़त में जो रक़म या चीज़ किसी के ज़िम्मा बाक़ी हो उसे "दैन" कहते हैं। ज़कात के अहकाम के लिहाज़ से ये दैन चार क़िस्म के हैं।

(1) वह क़र्ज़ जो किसी शख़्स को दिया गया हो या ताजिरान ने वह सामान जो तिजारत ही के लिए था बेचा हो और उसकी क़ीमत बाक़ी हो, अगर ये रक़म कुल की कुल एक साथ मिल जाए तो सब की ज़कात अदा करनी होगी और अगर कई सालों के बाद मिली तो तमाम सालों की बयक वक़्त ज़कात अदा की जाएगी। और अगर ये रक़म थोड़ी थोड़ी वसूल हो तो जितना रुपया वसूल हो उतने की ज़कात अदा करता जाए, लेकिन अगर ये रक़म निसाबे ज़कात के 1/5 से भी कम हो तो फिर ज़कात वाजिब नहीं होगी। इस को फ़िक़्ह की इस्तिलाह में "दैने क़वी" कहते हैं।

(2) दूसरी सूरत ये है कि किसी सामान की क़ीमत तो बाक़ी हो लेकिन वह सामान अस्लन तिजारत के लिए नहीं था, उस माल पर भी ज़कात उसी वक़्त वाजिब होगी जब वह वसूल हो जाएगा और वसूली के बाद उस

पूरी मुद्दत की ज़कात अदा करनी होगी जब से उसने वह सामान बेचा था। अलबत्ता उस रक़म पर उसी वक़्त ज़कात अदा करनी होगी जब ये तमाम रक़म इकट्ठी वसूल हो जाए और ज़कात के निसाब की मिक़्दार को पहुंच जाए। अगर थोड़ी थोड़ी रक़म वसूल होती रहे, कभी सौ, कभी दो सौ, कभी चार सौ तो उस में ज़कात नहीं होगी। ऐसी बाक़ी रुक़ूम को "दैने वस्त" कहते हैं।

(3) ऐसी रक़में जो किसी माल के बदले में बाक़ी न हों जैसे महर की रक़म कि वह किसी माल के एवज़ में नहीं है, बल्कि औरत की इसमत का मुआवज़ा है उस पर ज़कात उस क्त वाजिब होगी जब माल पर क़ब्ज़ा हो जाए और क़ब्ज़ा के बाद एक साल गुज़र जाए। फ़िक़्ह की इस्तिलाह में उसको "दैने ज़ईफ़" कहते हैं।

(खुलासतुलफ़तावा जिल्द–1 सफ़्हा–338)

(4) ऐसा क़र्ज़ जिसकी वसूलयाबी या ऐसा माल जिसको हासिल करना दुश्वार हो उस पर भी ज़कात वाजिब नहीं होती। हां अगर ग़ैर मुतवक़्क़े तौर पर कभी वह माल वसूल हो गया तो अब उस पूरी मुद्दत की ज़कात अदा करनी होगी। फ़िक़्ह की इस्तिहाल में उसको "माले ज़िमार" कहा जाता है। (फ़तावा हिन्दीया जिल्द–1 सफ़्हा–89)

ये फ़िक़्ही अहकाम गो कि अपनी नौइयत के लिहाज़ से जदीद नहीं हैं मगर आज कल बक़ायाजात और दैन (क़र्ज़) की जो मुख़्तलिफ़ सूरतें नए मआशी निज़ाम और तरीक़े इंतिज़ाम की वजह से पैदा हो गई हैं इन उसूली अहकाम के ज़रीआ उनको बआसानी हल किया जा सकता है। (जदीद फ़िक़्ही मसाइल सफ़्हा–118)

नक़द माल और ख़र्च वग़ैरा की ज़कात का हुक्म

मस्अला: आख़िर साल में जिस क़दर रुपया नक़द और माले तिजारत मौजूद है सब पर ज़कात वाजिब है और जो रक़म बज़िम्मा दूसरों के क़र्ज़ है उस पर भी ज़कात है मगर अदा करना ज़कात का उस पर बाद वसूली के है। और जो रक़म वसूल न हो उसकी ज़कात साक़ित है और मआफ़ है। और जो माल साल भर के अन्दर ख़त्म साल से पहले ख़र्च हो गया उसकी ज़कात लाज़िम नहीं और जो बरतन (दुकान का सामन फ़रनीचर वग़ैरा) तिजारत की ग़रज़ से नहीं ख़रीदे गए उन पर भी ज़कात नहीं है। अलबत्ता उनमें से जो ज़ुरूफ़ फ़रोख़्त कर दिए और उसकी क़ीमत शामिले रक़म मौजूद है, उसकी ज़कात दी जाएगी।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–4 सफ़्हा–58 बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–12 किताबुज़्ज़कात)

मस्अला: इस्तेमाली बरतन और पहनने के कपड़े और खाने के ग़ल्ला पर ज़कात नहीं है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–60 बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–13)

क्या ताजिर उधार व नक़द दोनों की ज़कात दे?

सवाल: एक ताजिर है उसका रुपया कुछ उधार में और कुछ नक़द मौजूद है तो वह तमाम रुपये की ज़कात अदा करे या सिर्फ़ नक़द की?

जवाब: तमाम रुपये की ज़कात अदा करे, लेकिन जिस क़दर रुपये क़र्ज़ में है उसकी ज़कात बाद वसूल के अदा करनी लाज़िम होती है। वसूल होने के बाद गुज़श्ता

अैयाम की भी ज़कात देना लाज़िम और वाजिब है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–156 बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–12)

ज़कात के लिए क्या रोज़ाना का हिसाब रखना ज़रूरी है?

मस्अला: ज़कात के लिए रोज़ाना का हिसाब रखने की ज़रूरत नहीं। साल में एक तारीख़ (चांद की) मुक़र्रर कर लीजिए। मसलन यकुम रमज़ानुलमुबारक को पूरी दुकान के क़ाबिले फ़रोख़्त सामान का जाइज़ा ले कर उसकी मालियत का तअैयुन कर लिया जाए और उसके मुताबिक़ ज़कात अदा कर दीजिए। जिस तारीख़ को आप ने दुकान शुरू की थी, हर साल उसी तारीख़ को हिसाब कर लिया कीजिए। (आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–387)

क्या आमदनी का हर साल हिसाब करना ज़रूरी है?

मस्अला: अगर आमदनी में कमी ज़्यादती से तग़ैयुर होता रहता है तब तो हर साल अपनी आमदनी का हिसाब करना ज़रूरी है। अगर (सिर्फ़) एक रक़म किसी के पास रखी हुई है या ज़ेवर रखा है और कोई आमदनी ऐसी नहीं कि जिस पर ज़कात वाजिब हो तो सिर्फ़ एक मरतबा हिसाब कर लेना काफ़ी है। उसके बाद उसी हिसाब से हर साल ज़कात अदा कर दी जाए।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–7 सफ़्हा–255)

थोड़ी बचत वाला ज़कात किस हिसाब से अदा करे?

मस्अला: ये उसूल समझ लीजिए कि जिस शख़्स के पास थोड़ी थोड़ी बचत होती रही, जब तक उसकी जमा शुदा पूंजी साढ़े बावन तोला (छः सौ बारह ग्राम पैंतीस मिली ग्राम) चांदी की मालियत को न पहुंच जाए उस पर

ज़कात वाजिब नहीं। और जब वह जमा शुदा पूंजी इतनी मालियत को पहुंच जाए और क़र्ज़ से भी फ़ारिग़ हो तो उस तारीख़ को वह "साहबे निसाब" कहलाएगा। उस साल के बाद उसी क़मरी तारीख़ को उस पर ज़कात वाजिब हो जाएगी। उस वक़्त उसके पास जितनी जमा शुदा पूंजी हो (बशर्तेकि निसाब के बराबर हो) उस पर ज़कात वाजिब होगी। साल के दौरान अगर वह रक़म कम व बेश होती रही उसका एतेबार नहीं, बस साल के अव्वल व आख़िर में निसाब का होना शर्त है।

(आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–360)

अदाएगीये ज़कात में कौन सी क़ीमत का एतेबार होगा?

सवालः ज़कात माल ख़रीद कर्दा पर होगी या मौजूदा निर्ख़ पर?

जवाबः ज़कात के अदा करते वक़्त जो क़ीमत है उसका एतेबार होगा?

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–61 बहवाला रद्दुलमुह्तार बाब ज़कातुलमाल जिल्द–2 सफ़्हा–30)

मस्अलाः ज़कात में अश्या की वह क़ीमत मोतबर होगी जो आम तौर पर राइज व मारूफ़ हो, ताज़िराना क़ीमत का एतेबार नहीं। क्योंकि वह मबनी है तख़्फ़ीफ़ व रिआयते मुसालेह ख़ास्सा पर बल्कि मुतफ़र्रिक़ ख़रीदार जिस क़ीमत से लेते हैं वह मोतबर है और अगर उसमें इख़्तिलाफ़ हो तो अक्सर और शहर का एतेबार है।

(इमदादुलफ़तावा जिल्द–2 सफ़्हा–42)

मस्अलाः ज़कात में माले तिजारत की क़ीमते फ़रोख़्त लगाई जाएगी। (अहसुनलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–499)

जो रक़म साल भर में घटती बढ़ती रहे उसका हुक्म

मस्अला: साल के अव्वल और आख़िर में निसाब का पूरा होना शर्त है, अगर दरमियान में रक़म कम हो जाए तो उसका एतेबार नहीं। मसलन एक शख़्स साल के शुरू में तीन हज़ार रुपये का मालिक था, तीन महीने बाद उसके पास पंद्रह सौ रुपये रह गए। फिर छः महीने बाद चार हज़ार रुपये हो गए, और साल के ख़त्म पर साढ़े चार हज़ार रुपये का मालिक था तो साल पूरा होने के वक़्त उस पर साढ़े चार हज़ार रुपये की ज़कात वाजिब होगी, दरमियान साल में अगर रक़म घटती बढ़ती रही, उसका एतेबार नहीं। (आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–340 व फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–77 व किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–969)

मस्अला: साल के अव्वल व आख़िर में मालदार (साहबे निसाब) हो और साल के बीच में उस मिक़्दार से कम रह जाए तब भी ज़कात वाजिब है, थोड़े दिन कम हो जोन से ज़कात मआफ़ नहीं होती, अलबत्ता अगर सब माल जाता रहा, उसके बाद फिर माल मिला तो जब से फिर मिला है तब से साल का हिसाब किया जाएगा। (हिदाया)

मस्अला: किसी के पास साढ़े बावन तोला चांदी थी फिर साल गुज़रने से पहले दो चार तोला या दस तोला सोना और मिल गया तो उस सोने का हिसाब अलग शुमार नहीं होगा बल्कि जब उस चांदी का साल पूरा होगा तो ये समझा जाएगा कि बाद में मिले हुए सोने का साल भी पूरा हो गया तो उस पूरे सोने चांदी की ज़कात की अदाएगी उसी वक़्त फ़र्ज़ हो जाएगी।

(हिदाया व इमदाद मसाइले ज़कात सफ़्हा–49 बहवाला अहकामे ज़कात सफ़्हा–19)

बचत से ज़्यादा क़र्ज़ वाले का हुक्म

सवाल: ज़ैद ने कपड़ा कंपनी में बीस हज़ार का हिस्सा क़र्ज़ रुपया ले कर ख़रीद लिया है, इस वक़्त ज़ैद पर ज़कात फ़र्ज़ है या नहीं? जब कि उसको बचत क़र्ज़ की अदाएगी की वह से नहीं है?

जवाब: इस सूरत में जब कि बक़द्रे माले मौजूदा के उसके ज़िम्मा क़र्ज़ है और बचत कुछ नहीं है, तो उस पर ज़कात वाजिब नहीं है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–65 बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–2 सफ़्हा–9 किताबुज़्ज़कात)

जो रुपया बारहवें महीना में ख़र्च हो गया उसका हुक्म

सवाल: एक शख़्स के पास हाजते ज़रूरीया से ज़ाएद रुपया है, जब उस पर ग्यारह माह गुज़रे तो उसने मकान या सामान वग़ैरा ख़रीद लिया, तो उस रुपया की ज़कात है या नहीं?

जवाब: जब तक हौलाने हौल (मुकम्मल साल) नहीं हुआ और उसने मकान या सामान ख़रीद लिया जिसमें ज़कात नहीं है तो उस रुपया की ज़कात साक़ित हो गई।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–70 बहवाला हिदाया किताबुज़्ज़कात जिल्द–1 सफ़्हा–168)

साल के ख़र्च के बाद जो गल्ला बचे उसका हुक्म

मस्अला: जो ग़ल्ला खाने के लिए साल भर के लिए ख़रीदा और ख़र्च हो कर साल के ख़त्म के बाद बाक़ी रह गया, उस पर ज़कात वाजिब नहीं है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–72 बहवाला आलमगीरी जिल्द–1 सफ़्हा–161 किताबुज़्ज़कात)

नक़द और माले तिजारत मौजूदा और क़र्ज़ का हुक्म

सवालः एक ताजिर तक़रीबन दस हज़ार रुपये नक़द तहवील में रखता है और पांच हज़ार रुपये का माल तैयार रखता है और उस माल में से अकसर माल तबदील होता जाता है और दो हज़ार रुपये का माल कारख़ाना में मुकम्मल रखता है और तक़रीबन पांच हज़ार रुपया लोगों के ज़िम्मा बक़ाया है जो कि बतदरीज वसूल होता है तो क्या नक़द तहवील में जो मौजूद है उसकी ज़कात दे या माल और बक़ाया की भी?

जवाबः नक़द और माले तिजारत मौजूदा और उस रुपया की जो लोगों के ज़िम्मा है सब की ज़कात देना लाज़िम है। अलबत्ता जो रुपया लोगों के ज़िम्मा है वसूल होने के बाद गुज़श्ता साल की भी लाज़िम होती है। मसलन अगर क़र्ज़ दो साल के बाद वसूल हुआ तो बाद वसूल होने के दोनों सालों की ज़कात देना लाज़िम होगी। पस अगर वसूल होने से पहले भी दे दे तो कोई हरज नहीं है। बहरहाल ज़कात सब की लाज़िम है ख़्वाह नक़द हो ख़्वाह माल तैयार शुदा या गैर तैयार शुदा और ख़्वाह लोगों के ज़िम्मा क़र्ज़ हो। और जो क़र्ज़ अपने ज़िम्मा हो उसको मिन्हा (वज़ा) कर लिया जाएगा।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–144 बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–13 किताबुज़्ज़कात)

मस्अलाः साल के ख़त्म पर देखा जाए कि जिस क़दर माले तिजारत व नक़द रुपया मौजूद हो उस का

हिसाब कर के ज़कात अदा की जाए और जो रुकूम लोगों के ज़िम्मा क़र्ज़ हैं, उनकी ज़कात भी वाजिब है, मगर अदा करना बाद वसूलयाबी के वाजिब होता है। गुज़श्ता ज़माने की ज़कात भी बाद वसूल होने के देनी लाज़िम है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–133)

जिस माल की क़ीमत बदलती रहती है उसकी ज़कात

सवाल: जिस माल की क़ीमत बदलती रही और बाज़ मरतबा तो क़ीमत ख़रीद से भी कम हो जाती है और माल फ़रोख़्त होने की कोई सूरत न हो तो उसकी ज़कात कैसे देनी चाहिए?

जवाब: जिस वक़्त पूरा साल माले तिजारत पर हो जाए तो जो क़ीमत उस माल की उस वक़्त हो उसका हिसाब कर के चालीसवां हिस्सा दे दे, या नक़द से या उस माले मौजूदा में से। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–145 बहवाला रद्दुलमुह्तार बाब ज़कातुलग़नम जिल्द–2 सफ़्हा–30)

मस्अला: माल की क़ीमत वह लगाई जाए जो उस शहर में हो, अगर वह माल किसी ग़ैर आबाद जगह भेजा जाए जहां क़ीमत का सवाल ही पैदा नहीं होता तो उस एलाक़ा के क़रीब जो शहर हो वहां की क़ीमत के लिहाज़ से उसकी मालियत लगाई जाए।

(किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–987)

ताजिर की क़ीमते ख़रीद का एतेबार है या मौजूदा का?

सवाल: ताजिर के पास माल मौजूद है, अब ज़कात देना चाहता है साल भर के बाद, तो उस माल की क़ीमते ख़रीद का एतेबार होगा या बाज़ार के भाव का लिहाज़

होगा?

जवाबः माले तिजारत की जो क़ीमत बाज़ार में बवक़्त ज़कात देने के है, उसी क़ीमत के एतेबार से ज़कात अदा की जाए, ख़्वाह क़ीमत ख़रीद से ज़्यादा हो या कम।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–141)

मस्अलाः असबाबे तिजारत पर ज़कात उस क़ीमत के एतेबार से दी जाएगी, जो क़ीमत बाज़ार के मुवाफ़िक़ है उसी पर अमल करना चाहिए। अगर निर्ख़े ख़रीद के मुवाफ़िक़ ज़कात दे और बएतेबार निर्ख़े बाज़ार ज़्यादा वाजिब हुई थी तो बाक़ी ज़कात उसके ज़िम्मा रही, उसको अदा करे। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–149 बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–4 सफ़्हा–42)

क़र्ज़ से जो तिजारत की उसकी ज़कात

सवालः ज़ैद ने ग्यारह हज़ार रुपये क़र्ज़ लेकर तिजारत शुरू की, ज़ाती सरमाया कुछ नहीं था। तो क्या ज़ैद पर ज़क़ात लाज़िम है?

जवाबः अभी कुछ ज़कात उस पर लाज़िम न होगी, जब ग्यारह हज़ार से ज़्यादा बक़द्रे निसाब उसके पास हासिल हो जाए उस वक़्त ज़ाएद की ज़कात दे।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–141 बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–9 किताबुज़्ज़कात)

जो रुपया तिजारत में लगा उसकी ज़कात

मस्अलाः जो रुपया तिजारत में लगा हुआ है और सामाने तिजारत उससे ख़रीदा गया है, उस तमाम पर ज़कात वाजिब है। जबकि वह निसाब को पहुंच जाए और साल भी गुज़र जाए। और जो रुपया ज़मीन व मकान की

ख़रीदारी पर सर्फ़ किया जाए, अगर ज़मीन व मकान भी तिजारत के लिए ख़रीदे जाऐं मसलन ज़मीन व मकान किराया पर दिये जाऐं, उनके किराया की आमदनी पर निसाब पूरा होने के बाद ज़कात है।

"यानी अगर किराया की आमदनी साल भर तक बची रहे और निसाब को पहुंच जाए।"

(रफ़अत क़ासमी ग़ुफ़िरलहू)

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–142 बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–10)

तिजारत में नफ़ा व ख़र्च की ज़कात कैसे दे?

सवालः एक ताजिर अगर एक हज़ार रुपये से तिजारत शुरू करता है और साल भर के बाद जब हिसाब करता है तो उसके पास डेढ़ हज़ार रुपये का माल मौजूद है और साल भर वह उसमें से अपना ख़र्च भी साथ करता रहा है तो क्या उसको अब ज़कात साल भर का ख़र्च निकाल कर देनी चाहिए या कि डेढ़ हज़ार की पूरी बग़ैर निकाले ख़र्च?

जवाबः अब उसको डेढ़ हज़ार की ज़कात अदा करनी लाज़िम है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–145 बहवाला हिदाया किताबुज़्ज़कात जिल्द–1 सफ़्हा–175 व किफ़ायतुलमुफ़्ती जिल्द–4 सफ़्हा–241)

क़ाबिले फ़रोख़्त माल मअ़ मुनाफ़ा पर ज़कात

सवालः मुझे दुकान चलाते हुए तीन साल हो गए हैं मैंने कभी ज़कात नहीं दी, क्या दुकान के पूरे माल पर ज़कात है या उससे जो सालाना मुनाफ़ा होता है उस पर है?

जवाबः आप की दुकान में जितना क़ाबिले फ़रोख़्त

सामान है उसका हिसाब लगा कर और मुनाफ़ा जोड़ कर साल के साल ज़कात दिया कीजिए और उसके साथ घर में जो काबिले ज़कात चीज़ हो उसकी ज़कात भी उसके साथ अदा कीजिए, गुज़श्ता सालों की ज़कात भी आप के ज़िम्मा वाजिबुलअदा है उसको भी हिसाब कर के अदा कीजिए। साल के अन्दर जो रक़म घर के मसारिफ़ और दीगर ज़रूरयात में ख़र्च हो जाती है उस पर ज़कात नहीं है।

(आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़हा–361)

गुड़ की ज़कात किस तरह दी जाए?

मस्अला: माले तिजारत गुड़ है उसकी ज़कात किस तरह देनी चाहिए?

जवाब: गुड़ की क़ीमत कर के चालीसवां हिस्स ज़कात दी जाए या गुड़ ही ज़कात में दे दिया जाए।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़हा–154)

ख़रीद करदा बीज या खाद पर ज़कात

मस्अला: ज़मीन के लिए जो खाद या बीज ख़रीद कर रख लिया है उस पर ज़कात वाजिब नहीं है।

(आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़हा–374)

मुख़्तलिफ़ नौइयत के माल की ज़कात का हुक्म

सवाल: एक शख़्स कपड़े की तिजारत (बिज़नेस) करता है पांच हज़ार का माल उसके पास मौजूद है और उसने जो उधार फ़रोख़्त किया है उसमें से पांच हज़ार के आने की तवक़्क़ो यक़ीनी है और तीन हज़ार के वसूल होने में शक है और एक हज़ार रुपये के वसूल होने की उम्मीद बिल्कुल नहीं। और ये शख़्स चार हज़ार का मक़रूज़ है, तो इस सूरत में किस क़दर रक़म की ज़कात देनी है?

जवाब: जिस क़दर माल और नक़द मौजूद है उसकी ज़कात उस वक़्त अदा करे और जो माल उधार फ़रोख़्त हुआ है और क़ीमत उसकी लोगों के ज़िम्मा पर क़र्ज़ है उसकी ज़कात अदा करना वसूल होने पर वाजिब होगी, जिस क़दर वसूल होता रहे उसकी ज़कात देता रहे और जिस क़दर उसके ज़िम्मा क़र्ज़ है उसको माले मौजूदा में मिन्हा करे बाक़ी की ज़कात अदा करे।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–146 बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–2 सफ़्हा–9 किताबुज़्ज़कात)

जो माल व्यापारी के हवाले करे उसकी ज़कात

सवाल: अक्सर बड़े बिज़नेस मैन (तिजारती आदमी) अपना तिजारती माल व्यापारियों के हवाले कर देते हैं। और उसकी क़ीमत का अदा होना क़राइने क़वीया से मुतअैयन भी है। ऐसी सूरत में क़ीमत माहूद निसाबे ज़कात में महसूब होगी या नहीं। क्योंकि बसा औक़ात ऐसा होता है कि आज ताजिरों के पास माल आया और कल व्यापारी बतौर क़र्ज़ के उठा ले गए?

जवाब: उस माल की ज़कात वाजिब है मगर बाद वसूल होने के अदा करना ज़कात का वाजिब होता है, और गुज़श्ता ज़माना का भी लिहाज़ ज़कात में किया जाता है। मसलन अगर कई साल में वह रुपया वसूल हो तो गुज़श्ता ज़माना की भी ज़कात अदा करना लाज़िम है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–147 बहवाला रद्दुलमुहतार बाब ज़कातुलमाल जिल्द–2 सफ़्हा–48)

मुनाफ़ा की ज़कात कैसे दी जाएगी?

सवाल: क्या तुज्जार क़ब्ल तमामे साल जो मुनाफ़ा

होता है उसको अस्ल के साथ मिला कर ज़कात निकालें या सिर्फ़ अस्ल की ज़कात निकाली जाए?

जवाबः दरमियान के जो मुनाफ़े हुए वह ख़त्म साल में अस्ल माल पर ज़कात देने के लिए शुमार व मोतबर किए जाऐंगे। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–152 बहवाला हिदाया जिल्द–1 सफ़्हा–157 किताबुज़्ज़कात फ़स्ल फ़िलख़ैल)

मस्अलाः साल गुज़रने के बाद अस्ल रक़म मअ़ मुनाफ़ा के जितनी बनती हो उस पर ज़कात है।

(आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–361 व किफ़ायतुलमुफ़्ती जिल्द–4 सफ़्हा–241)

माल की सपलाई पर ज़कात का हुक्म

सवालः मैं शहर से माल ला कर देहात (गांव) में सपलाई करता हूं, जितने में माल लेता हूं उनका क़र्ज़ा मेरे ऊपर तक़रीबन 300000 रुपये हैं और दूसरों के ऊपर मेरा क़र्ज़ा तक़रीबन 180000 रुपये हैं और मेरे पास तक़रीबन 800000 का माल मौजूद है मालूम ये करना है कि मैं किस तरह ज़कात निकालूं?

जवाबः जितनी मालियत आपके पास मौजूद है ख़्वाह नक़दी की शक्ल में हो या माले तिजारत की शक्ल में नीज़ आप के वह क़र्ज़े जो लोगों के ज़िम्मा हैं उन सब को जामा कर लिया जाए। उसकी मजमूई रक़म में से वह क़र्ज़ा जात मिन्हा कर दिए जाऐं जो आप के ज़िम्मा हैं। मिन्हा करने के बाद जितनी मालियत बाक़ी रहे उसकी ज़कात अदा कर दिया करें। सूरते मस्ऊला में 68 हज़ार रुपये की ज़कात आपके ज़िम्मा वाजिब है।

(आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–361)

क़र्ज़ लेकर कारोबार पर ज़कात

सवाल: ज़ैद ने क़र्ज़ के पैसों से एक दुकान खोली, साल पूरा होने पर हिसाब कर के देखा तो 95000 रुपये का माल मौजूद था, जब कि शुरू में 110000 का माल डाला था और क़र्ज़ जो दुकान पर 600000 रुपये का बक़ाया है और नक़द दो हज़ार रुपये पड़े हुए हैं तो क्या उन पर ज़कात आद हो सकती है या नहीं?

जवाब: जितनी मालियत का सामान क़ाबिले फ़रोख़्त है, उसकी क़ीमत में से क़र्ज़ की रक़म मिन्हा कर के बाक़ी मांदा रक़म में दो हज़ार जमा कर के उसकी ज़कात अदा कर दीजिए। (आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–362)

सनअ़त पर ज़कात का हुक्म

सवाल: सनअ़त के सिलसिले में कौन सा माल ज़कात से मुस्तस्ना है?

जवाब: सनअ़त कार के पास दो क़िस्म का माल होता है। एक ख़ाम माल, जो चीज़ों की तैयारी में काम आता है। दूसरा तैयार शुदा माल, इन दोनों क़िस्म के मालों पर ज़कात है। अलबत्ता मशीनरी और दीगर वह चीज़ें जिनके ज़रीआ माल तैयार किया जाता है (औज़ार वग़ैरा) उन पर ज़कात नहीं। (आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–362 व किफ़ायतुलमुफ़्ती जिल्द–4 सफ़्हा–142)

शिरकत वाले कारोबार की ज़कात

सवाल: एक भाई ने दूसरे को दुकान खुलवाई है। रक़म एक भाई की है और चलाता दूसरा भाई है। नफ़ा बराबर का है, उसकी ज़कात कौन अदा करे? जबकि ये

कारोबार शिकरत में हो गया?

जवाबः पहले ये समझ लीजिए कि जब किसी कारोबार के लिए माल दिया जाए और नफ़ा में हिस्सा रखा जाए तो शरई इस्तिलाह में उसको "मुज़ारबत" कहते हैं और हमारे यहां आम तौर से उसको "शिराकत" कह दिया जाता है। इस कारोबार में एक अस्ल रक़म होती है और एक उसका मुनाफ़ा। अस्ल रक़म की ज़कात उसके मालिक के ज़िम्मा है और उसके ज़िम्मा मुनाफ़ा के उस हिस्सा की ज़कात भी वाजिब है जो उसे मिलेगा, और जो नफ़ा पर काम करता है अगर उसका नफ़ा निसाब की मिक़्दार को पहुंचे और उस पर साल भी गुज़र जाए तो अपने हिस्सा की ज़कात उस पर भी होगी। जो क़ितआ ज़मीन का दुकान के लिए ख़रीदा है उस पर ज़कात नहीं।

(आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–350)

मस्अलाः उस रुपये की ज़कात बज़िम्मा ज़ैद (यानी जिसका रुपया है, मालिक के ज़िम्मा है) वाजिब है और जो नफ़ा पर काम करता है, उसको जब नफ़ा का रुपया बक़द्रे निसाब हासिल हो जाए और साल भर गुज़र जाए तो उसके ज़िम्मा उस रुपये की ज़कात वाजिब है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–155 व जिल्द–6 सफ़्हा–148 बहवाला रद्दुलमुह्तार बाब ज़कातुलग़नम जिल्द–2 सफ़्हा–31)

मक़रूज़ ताजिर को ज़कात देना कैसा है?

सवालः एक ताजिर क़र्ज़दार हो गया, सारी पूंजी ख़त्म हो गई, तो क्या उसको ज़कात दे सकते हैं जबकि उसके घर में दस हज़ार का ज़ेवर भी है?

जवाबः घर में जो दस हज़ार का जेवर है वह उसकी बीवी का होगा, कर्ज़ खुद ताजिर (बिज़नेस मैन) के ज़िम्मा है इसलिए वह ज़कात का मुस्तहिक़ है।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–3 सफ़्हा–61)

मस्अलाः क़र्ज़दार को ज़कात देना जाइज़ है। अगरचे उसके पास दस हज़ार रुपये मौजूद हों, मगर ग्यारह हज़ार (मौजूदा रक़म से ज़ाएद) का क़र्ज़दार है, ऐसे शख़्स को ज़कात देना जाइज़ है।

(इमदाद मसाइले ज़कात सफ़्हा–78)

मस्अलाः अगर कोई शख़्स ये कहे कि मेरे ज़िम्मा इतना क़र्ज़ है उसकी अदाएगी के लिए मुझे ज़कात की रक़म दे दी जाए तो उस क़र्ज़ का सुबूत उससे तलब करना चाहिए। (मआरिफ़ुलकुरआन जिल्द–4 सफ़्हा–412 बहवाला क़रतबी)

जाएदाद और सामाने तिजारत की ज़कात

सवालः एक शख़्स के पास जाएदाद क़ीमती पच्चास हज़ार मुनाफ़ा फ़ी साल है और तिजारत का सामान बीस हज़ार का है। उसमें ढाई हज़ार रुपये सालाना मुनाफ़ा होता है और वह शख़्स कभी तीस हज़ार रुपये छः माह के लिए क़र्ज़ भी लेता है। इन सब सूरतों में ज़कात का हुक्म क्या है और उसके ज़िम्मा महर भी है?

जवाबः सामाने तिजारत जो बीस हज़ार का है मसलन, उसके कुल पर ज़कात वाजिब है। चालीवां हिस्सा (या उसकी क़ीमत) उसका हर साल में ज़कात का रुपया निकाला करे, यानी फ़ी सैंकड़ा **ढाई रुपया** ज़कात देना चाहिए और जाएदाद की **क़ीमत पर ज़कात नहीं** है।

(रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–10 जिल्द–2 सफ़्हा–42)

उसके नफ़ा में जो रुपया हासिल हो। अगर ख़र्च न हो और साल भर गुज़र जाए उसकी ज़कात देना ज़रूरी है और तीन हज़ार रुपया जो उसके ज़िम्मा क़र्ज़ हो जाता है, अगर ख़त्मे साल पर बक़्वते ज़कात अदा करने के उसके ज़िम्मा क़र्ज़ हो तो उसको मुजरा किया जाएगा। बाक़ीमांदा सामाने तिजारत और नक़द रुपया व ज़ेवर वगै़रा की ज़कात भी दे। (रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–9)

अदाए ज़कात में ताजिर के लिए एक सहूलत

सवाल: ज़ैद ने एक दुकान आठ हज़ार रुपये से की और उसी आठ हज़ार में से तीन हज़ार रुपये उधार में हो गए और पांच हज़ार का माल दुकान में बाक़ी है, अब ज़कात माले मौजूद पर ही है या उधार पर भी। और उधार का रुपया सालवार कुल वसूल नहीं होता, बल्कि थोड़ा थोड़ा वसूल होता है और फिर उतना ही हो जाता है।

जवाब: उधार की ज़कात देना वाजिब तो उस वक़्त होता है कि वह रुपया वसूल हो जाए और उस वक़्त पिछले ज़माना की भी ज़कात देनी लाज़िम है, लिहाज़ा बेहतर ये है कि कुल माल उधार व मौजूदा की ज़कात का हिसाब कर के ख़त्मे साल पर दे दे, ताकि बार बार वसूल होने के वक़्त उधार का हिसाब करने की दिक़्क़त पेश न आए।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–153 बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–47 बाब ज़कातुलमाल)

क्या डेकोरेशन पर ज़कात है?

मस्अला: दुकान में जो अलमारियां व शो केश वगै़रा

सामान रखने के लिए रखी हों या फ़रनीचर वग़ैरा इस्तेमाल के लिए रखा हो तो उस पर ज़कात फ़र्ज़ नहीं है, क्योंकि ये माले तिजारत नहीं, अलबत्ता अगर कोई फ़रनीचर ही की तिजारत करता हो यानी फ़रनीचर तिजारत की नीयत से ख़रीदा या बनवाया हो तो उस पर ज़कात फ़र्ज़ है क्योंकि इस सूरत में ये माल, माले तिजारत है।

(इमदाद मसाइले ज़कात सफ़्हा–56 बहवाला दुर्रेमुख़्तार)

रोज़ मर्रा की आमदनी वाला कैसे ज़कात दे?

सवालः एक शख़्स की रोज़ मर्रा की आमदनी है, वह रुपया बैंक में जमा करता जाता है, मसलन माह जनवरी से दिसम्बर तक आमदनी मोतदबेह क़ाबिले ज़कात हो गई। आख़िर माहे दिसम्बर तक उसका हिसाब किस तरह किया जाए, किसी आमदनी पर ग्यारह माह गुज़रे, किसी पर दस, किसी पर दो चार, बल्कि किसी पर दो चार दिन, उसी आमदनी से ख़र्च भी होता रहा मगर साल के ख़त्म पर ख़र्च के बावजूद वह क़ाबिले ज़कात है, तो कैसे ज़कात निकाली लाए?

जवाबः जिस वक़्त से वह ज़ख़ीरा बक़द्रे निसाब हो गया हो, उस तारीख़ से साल शुरू होगा और उस साल के ख़त्म पर जिस क़दर उस वक़्त मौजूद होगा बशर्तेकि निसाब से कम न हो, सब पर ज़कात वाजिब होगी, गो हर चीज़ पर साल न गुज़रा हो, और गो दरमियान साल के निसाब से कम रह गया हो।

(इमदादुलफ़तावा जिल्द–2 सफ़्हा–12)

आलाते तिजारत पर ज़कात का हुक्म

सवालः तिजारत के आलात पर ज़कात है या नहीं

मसलन पन चक्की या ट्रेक्टर किराया पर चलाया जाता है?

जवाबः अगर ये आलात ख़ुद फ़रोख़्त करने के लिए हों तो उन पर ज़कात होगी, और उनके ज़रीआ से काश्त की जाए या आटा पीसा जाए, ख़ुद उनको फ़रोख़्त न किया जाए तो उन पर ज़कात नहीं है।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–3 सफ़्हा–53 बहवाला दुर्रेमुख़्तार जिल्द–2 सफ़्हा–9)

> "आमदनी होने के बाद अगर साल भर के बाद बचत, इतनी हो जाए कि साढ़े बावन तोला चांदी ख़रीदी जा सके तो उस आमदनी पर ज़कात होगी।" (रफ़अ़म क़ासमी)

मस्अलाः आलाते तिजारत मसलन कश्तियां, जहाज़ और बैल गाड़ियां और ऊँट गाड़ियां वग़ैरा जो तिजारत का माल ढोने (मुनतक़िल करने) के लिए दुकानदार के पास होती हैं। ये सब आलात उरूज़े तिजारत में शामिल हैं उनमें ज़कात वाजिब नहीं है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–68 बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–11 व फ़तावा महमूदिया जिल्द–13 सफ़्हा–95)

> "अलबत्ता अगर उन आलात से हासिल शुदा मुनाफ़ा बक़द्रे निसाब हो जाए और उस पर साल भी गुज़र जाए तो मुनाफ़ा के रुपयों पर ज़कात फ़र्ज़ होगी।"
>
> (मुहम्मद रफ़अ़त क़ासमी)

क्या क्रॉकरी पर ज़कात है?

मस्अलाः कसी ने बरतन, शामियाने, फ़रनीचर या

साईकलें वग़ैरा या और कोई सामान किराया पर देने के लिए ख़रीदा और किराया पर चलाता रहा तो उन चीज़ों पर भी ज़कात फ़र्ज़ नहीं, क्योंकि किराया पर चलाने से माल माले तिजारत नहीं बनता और उस पर ज़कात फ़र्ज़ नहीं होगी। अलबत्ता किराया की वसूल शुदा रक़म अगर बक़द्रे निसाब हो और एक साल गुज़र जाए तो उस रुपये पर ज़कात फ़र्ज़ होगी। (इमदाद मसाइले ज़कात सफ़्हा–57 बहवाला क़ाज़ी ख़ाँ)

प्रिंटिंग प्रेस और कारख़ानों पर ज़कात का हुक्म

मस्अला: प्रिंटिंग प्रेस, कारख़ानों वग़ैरा में जो मशीनें वग़ैरा फ़िट हों, वह भी माले तिजारत नहीं, लिहाज़ा उन पर ज़कात फ़र्ज़ नहीं। दर्ज़ी की कपड़े सीने की मशीन, ड्राई क्लीन वग़ैरा और हर क़िस्म की मशीनों का यही हुक्म है। अलबत्ता अगर तिजारत वग़ैरा की नीयत से ख़रीदी हों कि उनको फ़रोख़्त किया करेंगे तो उन पर ज़कात फ़र्ज़ होगी। (इमदाद मसाइले ज़कात सफ़्हा–56)

मस्अला: कारख़ाने और मिल वग़ैरा की मशीनों पर तो ज़कात फ़र्ज़ नहीं है, लेकिन उनमें जो माल तैयार होता है उस पर ज़कात है, इस तरह जो ख़ाम माल जो मिल में सामान तैयार करने के लिए रखा है उस पर भी ज़कात फ़र्ज़ है। ख़ाम माल और तैयार शुदा माल सब की क़ीमत लगा कर उसका ढाई फ़ीसद ज़कात अदा करना फ़र्ज़ है। (इमदाद मसाइल ज़कात जिल्द– सफ़्हा–49 व आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–340)

सनअ़ती औज़ार की दो क़िस्में और उन पर ज़कात का हुक्म

मस्अला: सनअ़ती औज़ार और सामान दो क़िस्म के

हैं। एक वह जिनको किसी काम के लिए इस्तेमाल किया जाता है और उसका असर उस चीज़ में बाक़ी नहीं रहता, दूसरी क़िस्म वह जो बिऐनिही उसमें लगा दी जाती हैं। मसलन साइकल की दुरुस्तगी के बाज़ औज़ार ऐसे हैं जिनाका मक़्सद ये है कि उससे चीज़ें ठीक कर दी जाएं। कारीगर उनसे उसी क़द्र काम लेता है। बड़े बड़े कारख़ानों में जो मशीनें हैं वह इसी नौइयत की हैं और बाज़ सामान ख़ास उसी मक़्सद के लिए होते हैं कि ज़रूरत पड़ने पर उनको साइकल में फ़िट कर दिया जाए। इन दोनों क़िस्म में से पहली क़िस्म की चीज़ों पर ज़कात नहीं है। इसमें मशीनें घड़ी साज़ी, बढ़ई, लोहार, मोटर साइकल दुरुस्त करने वालों और काश्तकारों वग़ैरा के सनअ़ती औज़ार दाख़िल हैं। दूसरी क़िस्म की चीज़ों पर ज़कात वाजिब है। इसमें घड़ी, रेडियो और मोटर साइकल वग़ैरा के क़ाबिले फ़रोख़्त अजज़ा (पुरज़े) शामिल हैं। चुनांचे फ़ुक़हा ने पहली क़िस्म की चीज़ों को "बुनियादी ज़रूरत" (हाजते अस्लीया) और दूसरी क़िस्म की चीज़ों को क़ाबिले ज़कात क़रार दिया है।

(जदीद फ़िक़्ही मसाइल सफ़्हा–122 बहवाला फ़तावा हिन्दीया जिल्द–1 सफ़्हा–88)

टैक्सी के ज़रीआ किराया की रक़म पर ज़कात

सवालः एक शख़्स के पास एक लाख रुपया है उससे वह एक टैक्सी ख़रीदता है, एक साल बाद चालीस हज़ार रुपये की कमाई हो गई अब ज़कात कितनी रक़म पर दे?

जवाबः अगर गाड़ी फ़रोख़्त करने की नीयत से नहीं ख़रीदी बल्कि कमाई (किराया पर चलाने) के लिए ख़रीदी

है तो साल के बाद ज़कात सिर्फ़ चालीस हज़ार की देंगे। क्योंकि गाड़ी कमाने का ज़रीआ है उस पर ज़कात नहीं।

मस्अला: गाड़ियों से जो मुनाफ़ा हासिल हो जाए और जो निसाब तक पहुंच जाए तो साल गुज़रने के बाद उस पर ज़कात आएगी, सिर्फ़ गाड़ियों पर ज़कात नहीं आएगी, क्योंकि ये हुसूले नफ़ा के आलात हैं। इन पर ज़कात नहीं आती है। लेकिन ये ख़्याल रहे कि बाज़ लोग गाड़ी इसी नीयत से ख़रीदते हैं कि ज्योंहि उसके अच्छे दाम मिलेंगे उसको फ़रोख़्त कर देंगे और ये उनका गोया बाक़ाएदा कारोबार है। ऐसी गाड़ी दरहक़ीक़त माले तिजारत है और उसकी क़ीमत पर ज़कात वाजिब है।

(आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–376 व अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–478 बहवाला तहतावी जिल्द–1 सफ़्हा–392)

किराया पर चलने वाले सामान पर ज़कात का हुक्म

मस्अला: आप के हिसाब से साढ़े बावन तोला चांदी की क़ीमत के बराबर रुपये होंगे तो ज़कात वाजिब होगी, इसी तरह साइकल या और कोई सामान तिजारत के लिए हो और वह साढ़े बावन तोला चांदी की मालियत का हो तो उस पर भी ज़कात वाजिब होगी। अगर साईकल और दुकान का दुसरा सामान किराया पर दिया जाता हो तो आमदनी पर ज़कात वाजिब होगी। मालियत पर नहीं।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–5 सफ़्हा–149)

मस्अला: मशीनरी में जो तिजारती न हों उसमें ज़कात नहीं है। उसकी आमदनी में ज़कात है जब हवाइजे अस्लीया (ज़रूरत) से फ़ाज़िल हो कर निसाब को पहुंच जाए और पूरा साल भी हो जाए। (फ़तावा रहीमिया जिल्द–3 सफ़्हा–112)

मस्अला: मोटर, हवाई जहाज़ (वग़ैरा) कि अगर ये चीज़ें शख़्सी इस्तेमाल में हैं तो उस पर ज़कात नहीं है और अगर उनको किराया के लिए मुख़्तस कर दिया गया है तो उस पर ज़कात है (जबकि उसकी आमदनी साल भर के बाद निसाब के बराबर या दीगर माल वग़ैरा के साथ मिल कर निसाब के बराबर हो जाए) क्योंकि अब ये अश्या नुमू व अफ़्ज़ाइश और नफ़ा देने लगी हैं इसलिए अब ये ज़कात का महल बन गई हैं।

(फ़िक़्हुज़्ज़कात जिल्द–1 सफ़्हा–600)

जो माल बरआमद किया जाता है उसकी ज़कात

सवाल: जो माल व्यापारियें को मुनाफ़ा लगा कर रवाना किया जाता है। उसका रुपया कभी साल भर में और कभी डेढ़ दो साल में वसूल होता है। उसकी ज़कात मअ़ मुनाफ़ा के निकाली जाए या बग़ैर मुनाफ़ा के? और कभी व्यापारी साल भर के बाद माल वापस भी कर देते हैं और उनसे रुपया वसूल मुश्किल से होता है।

जवाब: जो माल व्यापारी को दिया जाता है उसकी जो कुछ क़ीमत मअ़ मुनाफ़ा उससे मुक़र्रर हुई है उस क़ीमत पर वसूल होने के बाद ज़कात वाजिब है। जिस क़द्र रुपया वसूल होता जाए उसकी ज़कात अदा की जाए और जो वसूल न हो उसकी ज़कात कुछ लाज़िम नहीं है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–155, रद्दुलमुह्तार बाब ज़कातुलमाल जिल्द–2 सफ़्हा–47)

स्टेशनरी की ज़कात का हुक्म

सवाल: मैं किताबों और स्टेशनरी की दुकान करता हूं। सामान की मालियत तक़रीबन बारह या पंद्रह हज़ार

रुपया होगी। दुकान किराया की है। क्या दुकान का सामान क़ाबिले अदाएगीये ज़कात है?

जवाब: दुकान का जो भी माल फ़रोख़्त किया जाता है अगर उस माल की मालियत साढ़े बावन तोले चांदी की मालियत को पहुंचती हो तो उस माल पर ज़कात फ़र्ज़ होगी। (आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–387)

इत्र व रौग़न की ज़कात का हुक्म

सवाल: मसलन एक इत्र और रौग़न वग़ैरा छः रुपये तोला की लागत का है और उसको आठ रुपये तोला फ़रोख़्त किया गया तो ज़कात बहिसाब लागत छः रुपये तोला दी जाएगी या आठ रुपये तोला के?

जवाब: जबकि क़ीमत इत्र की और रौग़न की बक़द्रे निसाब हो ज़कात उस पर वाजिब है। और ज़कात उस हिसाब से दी जाएगी जो क़ीमत उसकी बाजार में है और मुराद उस बाज़ार से वह बाज़ार है जिसमें वह माल है।

(शामी जिल्द–2 सफ़्हा–30 बाब ज़कातुलग़नम)

और जिस हिसाब से बिक्री होती है उस हिसाब से क़ीमत इत्र और रौग़न की लगाई जाए, अगर नक़द देने में नुक़्सान मालूम हो तो सहूलत वही तरीक़ है कि बिऐनिही इत्र व रौग़न का चालीसवां हिस्सा निकाल दे ख़्वाह उसको फ़रोख़्त कर के वह क़ीमत फ़ुक़रा को दे दे या इत्र व रौग़न ही तक़सीम कर दे।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–81)

दुकान की ज़कात किस तरह अदा की जाए

सवाल: मैंने एक दुकान बीस हज़ार की ख़रीदी थी और मैंने उसमें पचास हज़ार रुपये का सामान ख़रीद कर

भरा था जिसमें से तक़रीबन बीस हज़ार का माल क़र्ज़ लिया था जो अब मैंने अदा कर दिया है, उससे जो आमदीन होती है वह मैं दुकान में ही लगा देता हूं। मार्किट के हिसाब से मेरी दुकान की क़ीमत एक लाख रुपये से ज़्यादा है और जो उसमें सामान है उसकी क़ीमत भी साठ पैंसठ हज़ार रुपये बनती है। मैं उस पर ज़कात किस हिसाब से अदा करूं?

जवाबः दुकान में जितनी मालियत का सामान है। उसकी क़ीमत लगा कर आपके ज़िम्मा अगर क़र्ज़ हो उसको मिन्हा कर दिया करें, और बाक़ी जितनी रक़म बचे उसका चालीसवां हिस्सा ज़कात में अदा कर दिया करें। दुकान की इमारत, बारदाना और फ़रनीचर वग़ैरा पर ज़कात नहीं। सिर्फ़ क़ाबिले फ़रोख़्त माल पर ज़कात है। (आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–381)

बिसात ख़ाना की ज़कात का हुक्म

सवालः अत्तार ख़ाना (दावा फ़रोश) की दुकान है हज़ार क़िस्म की अदविया हैं और बिसात ख़ाना नीज़ दीगर सामान भी है। अगर तख़्मीनन क़ीमत लगाई जाए और ज़ाएद कर के लगाई जाए तो क्या हुक्म है?

जवाबः अदविया और सामाने बिसात ख़ाना की वह क़ीमत लगाई जाएगी जो उस वक़्त बाज़ार में उनकी क़ीमत है। उसी क़ीमत पर ज़कात दी जाएगी।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–149 बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–1 सफ़्हा–12)

अदवियात पर ज़कात का हुक्म

सवालः दुकान में पड़ी अदवीयात पर ज़कात लाज़िम

है या सिर्फ़ उसकी आमदनी पर?

जवाबः अदवीयात की क़ीमत पर भी लाज़िम है।

(आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–373)

कुतुब ख़ाना की ज़कात निकालने का तरीक़ा

ज़कात देने में एक कोताही ये है कि अपने नज़दीक हिसाब से देते हैं, मगर वाक़ेअ़ में वह हिसाब ग़लत होता है मसलन माले तिजारत में अपनी ख़रीद या लागत का हिसाब लगा लेते हैं। फ़र्ज़ कीजिए कि एक शख़्स ने कुछ किताबें ताजिराना क़ीमत से ख़रीदीं या अपने प्रेस में छापीं और वह एक हज़ार रुपये में उसको पड़ गईं मगर बाज़ार में वह दो हज़ार की हैं, तो ज़कात दो हज़ार की देना चाहिए और अगर दो हज़ार की ज़कात पचास रुपये देते हुए दिल दुखे तो सहल ये है कि खुद किताबों का चालीसवां हिस्सा दे दे, मसलन चालीस "हिदाया" में से एक "हिदाया" दे दे, या ऐसी किताब दे दे जिसकी "हिदाया" के बराबर क़ीमत पर निकासी होती हो। (इमदाद मसाइले ज़कात सफ़्हा–33 व फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–80 व शामी जिल्द–2 सफ़्हा–30 बाब ज़कातुलग़नम)

परचून की ज़कात

सवालः ज़ैद पंसारी की दुकान करता है, उसमें चूंकि सैंकड़ों क़िस्म का सामान होता है। इस वजह से अख़ीर साल में वज़न नहीं कर सकता। अंदाज़ा से ज़कात अदा करता है। क्या ज़कात अदा हो जाती है या नहीं?

जवाबः अंदाज़ा करने में हत्तलवुस्अ ये लिहाज़ रखे कि कुछ ज़्यादा अंदाज़ा लगाया जाए ताकि ज़कात में कमी न रहे, क्योंकि दरहक़ीक़त अगर अंदाज़ा कम हुआ

तो उस क़द्र ज़कात उसके ज़िम्मा पर वाजिब रहेगी।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–140 आलमगीरी किताबुज़्ज़कात जिल्द–1 सफ़्हा–168)

दवाख़ाना की ज़कात

सवालः ज़ैद दवाख़ाना की दुकान करता है, जिसमें हज़ारों दवाऐं हैं जोकि फ़रोख़्तगी में माशा दो माशा (ही बाज़ दफ़ा) निकलती हैं जिस का बाक़ाएदा हिसाब रहना मुश्किल है। उन दवाओं की ज़कात किस तरह देनी चाहिए?

जवाबः हिसाब करना तो ज़कात के लिए ज़रूरी है मगर तमाम अदविया को अलाहिदा अलाहिदा वज़न करना और क़ीमत लगाना दुश्वार है तो ऐसा किया जाए कि सालाना मौजूद में से जिस क़दर फ़रोख़्तगी की मीज़ान हो उसको मिन्हा (वज़ा) किया जाए। अलग़रज़ अंदाज़ा कर लेना माले मौजूदा का ज़रूरीयात में से है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–142 बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–42 बाब ज़कातुलमाल)

जिस दुकान का हिसाब न हो उसकी ज़कात

सवालः ज़ैद की दुकान जब से क़ाइम हुई है इस वक़्त तक कोई ऐसा हिसाब नहीं हुआ जिससे उसकी मालियत का सही अंदाज़ा हो सके, ज़कात के लिए क्या करे?

जवाबः हिसाब कर के ज़कात अदा करनी चाहिए और गुज़श्ता सालों की भी ज़कात अदा करे।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–148 बहवाला रद्दुलमुह्तार बाब ज़कातुलमाल जिल्द–2 सफ़्हा–41)

"यहां पर माल का अंदाज़ा और तख़मीना लगाया जाए और अंदाज़ा में जहां तक हो

सके कुछ ज़्यादा ही हो ताकि हुकूकुल्लाह न रहे।" (मुहम्मद रफ़अ़त क़ासमी)

दुकान छोड़ने की सूरत में ज़कात का हुक्म

सवाल: तिजारत (बिज़नेस) में अगर बाद अदाए क़र्ज़ा मसलन पचास हज़ार रुपये का माल दुकान में हो तो क्या उस पचास हज़ार रुपये पर ज़कात देना वाजिब है। लेकिन दुकानदारी का माल हमेशा ऐसा होता है कि अगर उसको दुकान छोड़ने की ग़रज़ से फ़रोख़्त किया जाए (माल निमटाया जाए) तो कभी एक रुपये का माल एक रुपये में फ़रोख़्त नहीं होता। उस माल की क़ीमत अदाए ज़कात के वक़्त वही महसूब होगी जो उसकी अस्ली क़ीमत बवक़्ते मौजूदा ख़रीद है, या वह क़ीमत महसूब करनी चाहिए जो दुकान छोड़ने के वक़्त मिल सकती है और उस पर ज़कात देना चाहिए?

जवाब: क़र्ज़े दवामी को अदा करने के बाद अगर पचास हज़ार रुपये का माल मसलन बचे तो ख़त्मे साल पर उसको ज़कात देनी चाहिए और ज़कात क़ीमते माले मौजूदा बनिर्ख़ मौजूद के हिसाब से वाजिब होगी। दुकान छोड़ने की हालत में जो कमी पर माल फ़रोख़्त हो उसका ख़्याल न किया जाएगा। बल्कि निर्ख़ (क़ीमत) बाज़ार मौजूदा माल का एतेबार होगा।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–151 बहवाला आलमगीरी (मिस्री) किताबुज़्ज़कात बाब सालिस, फ़स्ल सानी जिल्द–1 सफ़्हा–168)

मवेशियों पर ज़कात क्यों है?

अल्लाह तआला ने अपनी क़ुदरते मामिला से लाखों

जानवर इस दुनिया में पैदा फ़रमाए हैं जिनमें से बहुत कम जानवरों से इंसान मुस्तफ़ीद होता है, और उन जानवरों में भी मुफ़ीदतरीन जानवर वह हैं जिन्हें अरबी ज़बान में अनआम (मवेशी) कहा जाता है और ये ऊँट, गाए और भैंस और बकरी और भेड़ हैं, अल्लाह तआला ने कुरआन करीम में इन जानवरों का ज़िक्र अपने बंदों पर एक एहसान के तौर पर किया है और मुतअद्दद मक़ामात पर उनके मनाफ़े भी ब्यान फ़रमाए हैं। इसी शुक्र की अदाएगी के तौर पर अल्लाह तआला ने उनमें ज़कात फ़र्ज़ फ़रमाई है, उसके निसाब और मक़ादीर मुक़र्रर फ़रमाए और सुन्नते नबवी (स.अ.व.) ने उसे एक मरबूत और मुस्तहकम निज़ाम की सूरत में नाफ़िज़ फ़रमाया।

बहरहाल चूंकि अहले अरब के लिए मवेशी और उनमें भी ख़ास तौर पर ऊँट बहुत मुफ़ीद और कसीरुलमनाफ़े जानवर थे इसलिए सुन्नते नबवी (स.अ.व.) ने बित्तफ़सील उनके निसाब और उनकी मक़ादीर को ब्यान फ़रमाया और आज तक भी दुनिया के बेशतर मुमालिक में हैवानी सर्वत को अहम माली आमदनी का ज़रीआ मुतसव्वर किया जाता है और लाखों की तादाद में हैवानात पाले और परवरिश किए जाते हैं। (फ़िक़्हुज़्ज़कात जिल्द–1 सफ़्हा–228)

शरीअ़त में मवेशियों की ज़कात की अहमियत

ज़कात दरअस्ल उस सरमाए मालियत पर आएद होती है जहां इंसान की बुनियादी ज़रूरीयात की हद ख़त्म हो जाती है। इस्लाम और अंबिया अलैहिमुस्सलाम की आमद का मक़सद आख़िरत की तैयारी और दुनिया की इस्लाह है। आख़िरत की तैयारी के लिए तो तीन इबादतें मख़सूस

हैं जो इंसान का अल्लाह तआला से तअल्लुक़ जोड़ती हैं और उसमें आख़िरत का शुऊर और उख़रवी ज़िन्दगी की बराहे रास्त मुहब्बत और तड़प पैदा करती हैं। ये नमाज़ व रोज़ा और हज की इबादतें हैं। दो इबादतों ज़कात व जिहाद हुदूद व ताज़ीरात और दुसरे अख़लाक़ व मआमलात का अव्वलीन राबता दुनियां से है। उनको ठीक ठीक मुक़र्ररा हिदायात के तहत इस्लामी स्प्रीट की रौशनी में कोई शख़्स या जमाअत सर अंजाम दें तो दुनिया में अद्ल व इंसाफ़ और अम्न व सुकून पैदा होगा। इसलिए ख़ुदावंदे कुद्दूस ने ख़ुद जो फ़ितरते इंसानी का ख़ालिक़ और उसकी कमज़ोरियों से बख़ूबी वाक़िफ़ है, सरमाए से इंसान की मुहब्बत और वाबस्तगी को हुदूद आशना करने के लिए कुछ पाबंदियां आएद कर दी हैं ताकि एक तरफ़ ख़ुद इंसान उस सरमाए को कुल्लियतन अपनी मिल्क समझ कर ख़ुद मुख़्ताराना तसर्रुफ़ से बाज़ रहे और वह अल्लाह की दी हुई अमानत समझ कर उसकी हिदायात के मुताबिक़ सरमाए को ठिकाने लगाए और दूसरी तरफ़ ख़ुद मुआशरा और सूसाइटी शख़्सी दौलत व सरमाए की फ़रावानी और सरमाया परस्ताना ज़ेहन व अमल का तख़्तए मश्क़ न बन सके और जमाअत के अफ़राद दौलत के तफ़ावुत के बावजूद मुआशरती मुसावात, इजतिमाई इंसाफ़, इनफ़िरादी मुसाबक़त और जमाअती तआउन से यकसां तौर पर बहरा अंदोज़ हों।

ज़कात की इस अहमियत को हमेशा बरक़रार रखा गया, नमाज़ के बाद ज़कात के अहकाम ब्यान किए जाते हैं ताकि तअल्लुक़ बिल्लाह के बाद तअल्लुक बिलइबाद क़ाइत हो। चूनांचे बुनियादी तौर पर अरब न ज़राअती

मुल्क था न सनअती, अह्ले अरब का सरमाया नक़दी से बढ़ कर उनके मवेशी थे। इसलिए ज़कात का ज़्यादा ज़ोर मवेशियों ही पर रहा। उसके बाद और भी चीज़ों पर ज़कात वाजिब हुई मगर मवेशियों (जानवरों) की अहमियत ज़्यादा थी, इसलिए अहादीस में भी उनसे मुतअ़ल्लिक़ बहुत तफ़सीलात मिलती हैं। इसी वजह से फ़ुक़हा भी ज़कात के बुनियादी अहकाम ब्यान करने के बाद बिलउमूम मवेशियों ही की ज़कात के बारे में तफ़सीलात ज़िक्र किया करते हैं। अब यहां पर जानवरों की ज़कात का ब्यान शुरू किया जाता है।

(फ़तावा आलमगीरी जिल्द–4 सफ़्हा–15)

साएमा जानवर क्या हैं?

मस्अला: साएमा वह जानवर कहलाते हैं जो जंगल में चरने के लिए ख़ास मक़सद से छोड़े जाते हैं और वह मक़सद या तो उनसे दूध हासिल करना होता है, या उनकी नस्ली अफ़ज़ाइश होती है, या अपनी बढ़ोतरी और बालीदगी की बिना पर वह बेश क़ीमत क़रार पायें, जिन जानवरों को नस्ली अफ़ज़ाइश और शीर (दूध) अफ़ज़ूनी के बजाए सवारी के लिए या बार बरदारी के लिए जंगल में चराया जाए उन पर ज़कात नहीं है।

साएमा ख़्वाह नर हों या मादा ख़्वाह मिले जूले हों उन सब पर ज़कात वाजिब होगी। ऐसे ही अगर महज़ तिजारती मक़सद से जंगल में छोड़े जायें तो उन पर ज़कात वाजिब होगी। मगर तिजारत के हिसाब से होगी। साएमा के हिसाब से न होगी। हां अगर गोश्त ख़ोरी के लिए (जानवर पाले जायें और) जंगल में चरने के लिए

छोड़े तो उन पर ज़कात वाजिब नहीं।

"इससे ये न समझा जाए कि रोज़ मर्रा जो जानवर ज़िब्ह किए जाते हैं और खाने के काम आते हैं उनको जंगल में इसी मक़सद से पाला जाय तो वह ज़कात से फ़ारिग़ हैं। मतलब ये है कि ऐसे जानवरों पर ज़कात साएमा जानवरों के हिसाब से आएद न होगी। बल्कि तिजारती नौअ़ की ज़कात होगी। अलबत्ता अगर कोई शख़्स सिर्फ़ अपने ज़ाती इस्तेमाल में लाने और ख़ुद गोश्त खाने के लिए जंगल में गाए भैंस वग़ैरा को चरने के लिए छोड़ता है तो उस पर किसी क़िस्म की ज़कात नहीं है।"

(मुहम्मद रफ़अ़त क़ासमी)

मस्अला: अगर मवेशी तिजारती हों और उन्हें छः माह या कुछ ज़्यादा दिन जंगल में चराया तो वह साएमा नहीं होंगे, तावक़्ते कि मालिक उन्हें ख़ुद साएमा बनाने की नीयत न कर ले। जिस तरह वह गुलाम जो तिजारती नौइयत का हो और मालिक उसे चंद साल अपनी ख़िदमत में रखना चाहे तो वह उसकी ख़िदमत में रहने के बावजूद हसबे साबिक़ तिजारती गुलाम शमार होगा। जब तक उसको तिजारत से निकाल कर वह ख़िदमत के लिए मख़सूस करने की नीयत न करे। और अगर साएमा के मालिक का ये इरादा हो कि वह उनसे काम लेगा या उन्हें (जंगल में चराने के बजाए) चारा खिलाएगा मगर वह साल भर तक उस इरादा के मुताबिक़ अमल न कर सका और साल पूरा हो गया तो साएमा की ज़कात वाजिब

हो जाएगी।

मस्अला: अगर जानवर तिजारत की ग़रज़ से ख़रीदे फिर उन्हें साएमा बना दिया, तो साले निसाब उस वक़्त से शुमार होगा जब से उन्हें साएमा बना दिया है।

(फ़तावा आलमगीरी जिल्द–4 सफ़्हा–17 व किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–970)

साएमा वह जानवर हैं जिनमें ये तीन बातें पाई जाऐं–

(1) साल के अक्सर हिस्सा में अपने मुंह से चर के इकतिफ़ा करते हों (यानी सरकारी चरागाह में बग़ैर पैसों के चरते हों और घर में उनको कुछ न दिया जाता हो) अगर निस्फ़ साल अपने मुंह से चर कर रहते हों और निस्फ़ साल उनको घर में खिलाया जाता हो तो फिर वह साएमा नहीं हैं। इसी तरह अगर घांस उनके लिए घर में मंगाई जाती हो ख़्वाह वह बक़ीमत हो या बिला क़ीमत, तो फिर वह साएमा नहीं हैं।

(2) जो घांस वह चरते हों उसके चरने की किसी की तरफ़ से मुमानअ़त न हो। अगर किसी की मना की हुई और नाजाइज़ घांस उनको चराई जाए (खिलाई जाए) तब भी वह साएमा न होंगे।

(3) दूध की ग़रज़ से या नस्ल के ज़्यादा होने के लिए रखे गए हों, अगर दूध और नस्ल की ग़रज़ से न रखे गए हों बल्कि गोश्त खाने के लिए या सवारी के लिए हों तो फिर वह साएमा न कहलायेंगे।

(आलमगीरी जिल्द–4 सफ़्हा–7)

जो जानवर साल के दरमियान हासिल हो उसका हुक्म

जो माल साल के अन्दर हासिल हुआ हो, ख़्वाह ख़रीदने

से या तनासुल (जानवरों के बच्चे देने से) या वरासत से या हिबा वग़ैरा से वह अपने हम जिन्स निसाब के साथ मिला दिया जाएगा और उसके साथ उसकी भी ज़कात दी जाएगी। मसलन शुरू साल में पच्चीस ऊँट थे, साल के दरमियान में उनके पच्चीस बच्चे हुए तो अब साल के ख़त्म पर ये बच्चे भी उन ऊँटों के साथ मिला दिए जायें और कुल ऊँटों की ज़कात में चौथे साल का ऊँट देना होगा गो उन बच्चों पर अभी पूरा साल नहीं गुज़रा। हां अगर उस माल के मिला देने से एक ही साल पर दो मरतबा ज़कात देना पड़े तो फिर न मिलायेंगे। मसलन कोई शख़्स अपने माल की जकात दे चुका हो बाद इसके उस मुज़क्की (ज़कात देने वाला) रुपये से कुछ जानवर ख़रीद लिये तो वह जानवर अपने हम जिन्स निसाब के साथ न मिलायेंगे वरना उनकी ज़कात फिर देनी होगी, और अभी उनकी क़ीमत की ज़कात दी जा चुकी है। इसी तरह अगर कोई शख़्स जानवरों की ज़कात दे चुका हो बाद इसके उन मुज़क्का (जिसकी जकात दी जा चुकी है) जानवरों को बेच डाले तो उनकी क़ीमत का रुपया रुपये के निसाब के साथ न मिलाया जाएगा।

(इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–4 सफ़्हा–30)

ज़कात में कैसे मवेशी लिए जाएँ?

मस्अला: जब ज़कात देहिन्दा मवेशियों की ज़कात अदा करे और वसूल कुनिन्दा वसूल करे तो जानवरों की ये ख़ुसूसीयात मद्देनज़र रखनी चाहिऐं–

जो जानवर ज़कात में दिए जायें उनमें कोई ऐब न हो। यानी न वह बीमार हों, न उनमें टूट फुट हो (मसलन

टांग टूटी हुई हो या कान कटा हुआ हो) और न ऐसे बूढ़े हों कि उनके दांत गिर गए हों। ग़रज़ उनमें कोई भी ऐ़ब ऐसा न हो जिससे उनकी मनफ़अ़त और क़ीमत में कमी आ जाए।

मस्अला: अलबत्ता एक सूरत में ऐ़बदार जानवर ज़कात में वसूल किया जा सकता है और वह ये कि अगर सारे ही जानवर बूढ़े हों या सारे ही जानवर बीमार हों या सारे ही ऐ़बदार हों और ज़कात वसूल कुनिन्दा उन्हीं में से ज़कात वसूल करे और मालिक को बेऐ़ब जानवर ख़रीदने का पाबंद न करे। इसलिए कि ज़कात उसी माल में से अदा होनी चाहिए जिस माल पर ज़कात आएद होती है।

(फ़िक़्हुज़्ज़कात जिल्द–1 सफ़्हा–284)

मस्अला: अस्ल बात ये है कि अगर ज़कात में उमदा जानवर ही वसूल किए जायें (ये आम मवेशियों का हुक्म है) तो इसमें मालिकों का नुक़सान है। और अगर निकम्मे (ख़राब) जानवर लिए जायें तो ये मुस्तहिक़्क़ीन के हक़ में मज़र्रत रसाँ है। इसलिए तक़ाज़ाए अद्ल यही है कि दरमियानी और मुतवस्सित क़िस्म के जानवर लिए जायें।

(फ़िक़्हुज़्ज़कात जिल्द–1 सफ़्हा–190)

मुश्तरका जानवरों की ज़कात का हुक्म

मस्अला: एक शख़्स की अस्सी आदमियों के साथ अस्सी बकरियों में निस्फ़ निस्फ़ की शिरकत है कि हर बकरी में निस्फ़ उसकी है और निस्फ़ दूसरे शख़्स की गोया बहैसियते मजमूई उसकी चालीस बकरियां हैं तो इमाम अबूहनीफ़ा (रह.) और इमाम मुहम्मद (रह.) के नज़दीक इस तादाद (मुश्तरका) में ज़कात वाजिब नहीं, और यही

हुक्म उस वक़्त भी होगा जब मसलन साठ आदमियों के साथ एक शख़्स की साठ गायों में शिरकत है।

मस्अला: दो शरीकों से जब उनके मुशतरका माल की ज़कात ली जाए तो इस सूरत में दोनों शरीक एक दूसरे से अपने अपने हिस्से के मुताबिक़ माल का लौट फेर कर लेंगे यानी हिसाब कर लेंगे।

मस्अला: जब दो आदमियों के पास ऊँटों के एक मुशतरका गल्ला में इकसठ ऊँट हों, एक शख़्स के पास छत्तीस हों, दूसरे के पास पच्चीस हों तो ज़कात वसूल कुनिन्दा उन दोनों से एक पांच साल की उम्र की और एक तीन साल की उम्र की ऊँटनी ज़कात में ले लेगा। अब जिस शरीक के हिस्से में जिस क़द्र ज़ाएद ज़कात में चला गया है वह उससे बक़द्र दूसरे शरीक से ले लेगा।
(फ़तावा आलमगीरी जिल्द–4 सफ़्हा–26)

मस्अला: मवेशियों (जानवरों) की ज़कात वाजिब होने की जगह वह है जहां पर मवेशी मौजूद हों बशर्तेकि ज़कात वसूल करने वाला वहां पर मौजूद हो, अगर मुहस्सिल वहां न हो तो जहां मालिक है वहां पर ज़कात वाजिब होगी। (किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–1018)

जो जानवर इस्तेमाल में हों उनकी ज़कात का हुक्म

मस्अला: सवारी के घोड़े और ज़राअत के बैलों पर ज़कात नहीं है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–62 बहवाला हिदाया किताबुज़्ज़कात जिल्द–1 सफ़्हा–169)

मस्अला: बैल जो ज़राअत के और घोड़े सवारी के और गाय दूध पीने के लिए हैं। तो इन जानवरों पर ज़कात नहीं है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–106

बहवाला हिदाया जिल्द–1 सफ़हा–196 व फ़िक्हुज़्ज़कात जिल्द–1 सफ़हा–234)

मस्अलाः ज़राअत के लिए जो जानवर परवरिश किए गए हों अगरचे साएमा हों। उनमें ज़कात वाजिब नहीं है और दूध पीने और नस्ल हासिल करने वग़ैरा के लिए जो जानवर पाले जायें और वह साएमा हों, उनमें ज़कात वाजिब है बतर्शेकि निसाब को पहुंच जायें।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़हा–105 बहवाला रद्दुलमुह्तार बाबुस्साएमा जिल्द–1 सफ़हा–20)

मस्अलाः अगर मुख़्तलिफ़ हैवानात के मुतअद्दद निसाब एक शख़्स के पास हैं और उसने उनमें से बाज़ की ज़कात पेशगी दे दी, मगर जिनकी ज़कात दी थी वह जानवर हलाक और ख़त्म हो गए तो अब दी हुई ज़कात उन जानवरों की जानिब से शुमार न हो सकेगी जो उसके पास अब मौजूद हैं। (आलमगीरी जिल्द–4 सफ़हा–15)

किन किन जानवरों पर ज़कात वाजिब नहीं होती?

मस्अलाः घोड़ों पर ज़कात वाजिब नहीं होती इसी पर फ़तवा है। हां अगर घोड़े तिजारती हों तो उन पर तिजारती नौइयत की ज़कात वाजिब होगी, घोड़े तिजारती हों तो उनकी हैसियत तिजारती सामान की होगी। उनकी क़ीमत हद्देनिसाब तक पहुच जाए तो ज़कात ली जाएगी ख़्वाह वह जंगल में चरते हों या घर पर घास दाना खाते हों। गधे पर, ख़च्चर पर, सधाए हुए चीते और कुत्ते पर उसी वक़्त ज़कात वाजिब होगी जब वह तिजारत के लिए हों।

(फ़िक्हुज़्ज़कात जिल्द–1 सफ़हा–299)

मस्अलाः तिजारती घोड़ों की मजमूई क़ीमत पर

चीलीसवां हिस्सा, इमाम अबूहनीफ़ा (रह.) के आख़िरी क़ौल के मुताबिक़ बकरी, ऊँट और गाय के बच्चे पर ज़कात वाजिब नहीं होती, अगर उनमें से एक भी निसाब की उम्र को पहुंच जाए तो बाक़ी बच्चे उसके ताबेअ़ हो कर निसाब में शुमार होंगे। अलबत्ता वह ज़कात में नहीं लिए जायेंगे। यानी ज़कात में वही पूरी बकरी या उसकी क़ीमत ली जाएगी। ये छोटे बच्चे निसाब की तकमील का ज़रीआ तो ज़रूर बनते हैं मगर ज़कात की अदाएगी उनसे दुरुस्त नहीं है।

मस्अला: अगर बकरी के उनतालीस बच्चे हैं और उनमें सिर्फ़ एक बकरी पूरी है (जिसे शामिल कर के चालीस की तादाद पूरी होती है) तो उसमें एक औसत दर्जा की बकरी ज़कात में देनी होगी, अगर वही एक (पूरी उम्र वाली) बकरी दरमियाना दर्जा की या उससे कुछ कम है तो ज़कात में ले ली जाएगी।

मस्अला: अगर साल पूरा होने के बाद वह बकरी न रहे तो साहिबैन (रह.) के नज़दीक ज़कात साक़ित हो जाएगी। ऐसे ही अगर ऊँट के पचास बच्चे हैं और उन ही में दरमियाना दर्जे की एक ऊँटनी भी शामिल है तो वही ज़कात में देना वाजिब है। अगर आधे बच्चे ज़ाए हो जाऐं तो निस्फ़ ऊँटनी के बक़द्र ज़कात भी साक़ित हो जाएगी और निस्फ़ ऊँटनी के बक़द्र ज़कात वाजिब होगी। ज़कात में बच्चा लेना जाइज़ नहीं।

(फ़तावा आलमगीरी जिल्द–4 सफ़्हा–19)

मस्अला: जंगली और वहशी जानवरों पर साएमा होने की हैसियत से ज़कात वाजिब नहीं होती इसलिए ऐसे

मख़लूतुन्नस्ल जानवर पर जिसकी मां जंगली और वहशी हो। ज़कात आएद न होगी।

मस्अला: बार बरदारी इस्तेमाली और चारा खाने वाले जानवरों पर ज़कात वाजिब नहीं होती क्योंकि जिस तरह आदमी के आलाते कारकर्दगी पर ज़कात नहीं है। उसी तरह वह जानवर जो ज़राअत के मक़सद से पाले गए हों या जिन से बोझ ढोना मक़सूद हो और जिन्हें घर पर रख कर चारा खिलाया जाता हो, इन तीनों क़िस्म के जानवरों पर ज़कात वाजिब नहीं होती। लेकिन घर पर चारा खाने वाले जानवर अगर तिजारती नौइयत के हों तो उन पर तिजारती ज़कात आएद होगी।

(फ़तावा आलमगीरी जिल्द–4 सफ़्हा–19 व किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–968)

मस्अला: वक़्फ़ के जानवरों पर ज़कात फ़र्ज़ नहीं है।

(इमदाद मसाइले ज़कात सफ़्हा–51)

मख़लूतुन्नस्ल जानवरों की ज़कात

साएमा जानवरों की ज़कात में ये शर्त है कि वह जंगली न हों, जंगली जानवरों पर ज़कात फ़र्ज़ नहीं। हां अगर तिजारत की नीयत से रखे जायें तो उन पर तिजारत की ज़कात फ़र्ज़ होगी।

जो जानवर किसी देसी और जंगली जानवर से मिल कर पैदा हों तो अगर उनकी मां देसी है तो वह देसी समझे जायेंगे और अगर जंगली है तो जंगली समझे जायेंगे। मसलन बकरी और हिरन से कोई जानवर पैदा हो तो वह बकरी के हुक्म में है और नील गाय और गाय से कोई जानवर पैदा हो तो वह गाय के हुक्म में है।

जो जानवर साएमा हो और साल के दरमियान उसकी तिजारत की नीयत कर ली जाए तो उस साल उसकी ज़कात न देनी पड़ेगी। और जब उसने तिजारत की नीयत की है उस वक़्त से उसका तिजारती साल शुरू होगा।

(इमदाद मसाइले ज़कात सफ़्हा–51)

वक़्फ़ के जानवरों पर ज़कात का हुक्म

मस्अला: वक़्फ़ के जानवरों पर और उन घोड़ों पर जो दीनी जिहाद के लिए रखे गए हों ज़कात फ़र्ज़ नहीं। घोड़ों पर ख़्वाह वह साएमा हों या ग़ैर साएमा और गधे और ख़च्चर पर बशर्तेकि तिजारत के लिए न हों ज़कात फ़र्ज़ नहीं। (इमदाद मसाइले ज़कात सफ़्हा–51)

ऊँटों की ज़कात के निसाब की तफ़सील

नोट: 6 में 7 में 8 में 9 में भी एक ही बकरी या बकरा यकसाला वाजिब होता है। इसी तरह नीचे लिखे हुए हिसाब को समझये। (मुहम्मद रफ़अत क़ासमी)

सवाल: ज़कात में ऊँटों का निसाब और उन पर ज़कात का हिसाब बहुत मुश्किल है। आप ऐसे वाज़ेह तरीक़ा से तहरीर फ़रमायें कि बसहूलत समझ में आ जाय? बैयिनू व तूजिरू।

जवाब: एक ऊँट से चार ऊँटों तक मआफ़ है। उन पर ज़कात नहीं। उसके बाद बहिसाबे ज़ैल ज़कात फ़र्ज़ है।

5 से 9 तक:	यकसाला एक बकरी या बकरा।
10 से 14 तक:	दो बकरियां या बकरे।
15 से 19 तक:	तीन बकरियां या बकरे।
20 से 24 तक:	चार बकरियों या बकरे।
25 से 35 तक:	यक साला ऊँटनी (बिन्ते मख़ास)

36 से 45 तकः दो साला ऊँटनी (बिन्ते लबून)
46 से 60 तकः सेह साला ऊँटनी (हिक़्क़ा)
61 से 75 तकः चार साला ऊँटनी (जिज़आ)
76 से 90 तकः दो साला दो ऊँटनी
91 से 124 तकः सेह साला दो ऊँटनी
125 से 129 तकः सेह साला दो ऊँटनियां और एक बकरी।
130 से 134 तकः सेह साला दो ऊँटनियां और दो बकरियां।
135 से 139 तकः सेह साला दो ऊँटनियां और तीन बकरियां।
140 से 144 तकः सेह साला दो ऊँटनियां और चार बकदियां।
145 से 149 तकः सेह साला दो ऊँटनियाँ और साला एक ऊँटनी।
150 से 154 तकः सेह साला तीन ऊँटनियां।
155 से 159 तकः सेह साला तीन ऊँटनियां और एक बकरी।
160 से 164 तकः सेह साला तीन ऊँटनियां और दो बकरियां।
165 से 169 तकः सेह साला तीन ऊँटनियाँ और तीन बकरियां।
170 से 174 तकः सेह साला तीन ऊँटनियां और चार बकरियां।
175 से 185 तकः सेह साला तीन ऊँटनियां और यक साला एक ऊँटनी।

186 से 195 तक: सेह साला तीन ऊँटनियां और दो साला एक ऊँटनी।

196 से 204 तक: सेह साला चार ऊँटनियां या दो साला पांच ऊँटनियां।

205 से 209 तक: सेह साला चार ऊँटनियां और एक बकरी।

210 से 214 तक: सेह साला चार ऊँटनियां और दो बकरियां।

215 से 219 तक: सेह साला चार ऊँटनियां और तीन बकरियां।

220 से 224 तक: सेह साला चार ऊँटनियां और चार बकरियां।

225 से 235 तक: सेह साला चार ऊँटनियाँ और यक साला एक ऊँटनी।

236 से 245 तक: सेह साला चार ऊँटनियां और दो साला एक ऊँटनी।

246 से 254 तक: सेह साला पांच ऊँटनियां।

255 से 259 तक: सेह साला पांच ऊँटनियां और एक बकरी।

260 से 264 तक: सेह साला पांच ऊँटनियां और दो बकरियां।

265 से 269 तक: सेह साला पांच ऊँटनियाँ और तीन बकरियां।

270 से 274 तक: सेह साला पांच ऊँटनियां और चार बकरियां।

275 से 285 तक: सेह साला पांच ऊँटनियां और यक

साला एक ऊँटनी।

286 से 295 तकः सेह साला पांच ऊँटनियां और दो साला एक ऊँटनी।

296 से 304 तकः सह साला छः ऊँटनियां।

इस नक़शा में 150 से आख़िर तक दिए गए आदाद से एक कुल्लिया हासिल हुआ, उसके मुताबिक़ जहां तक चाहें हज़ारों लाखों ऊँटों की ज़कात का हिसाब लगा सकते हैं। इस कुल्लिया का हासिल ये है कि 150 के बाद हर पांच ऊँटों पर एक बकरी फिर 25 से 35 तक यकसाला ऊँटनी, फिर 36 से 45 तक दो साला ऊँटनी, फिर 46 से 50 तक सेह साला ऊँटनी, उसके बाद फिर नए सिरे से हर पांच पर एक बकरी, 25 पर यकसाला ऊँटनी, 36 पर दो साला, 46 से 50 तक सेह साला।

हिदायातः (1) जहां बकरी वाजिब है। उसमें एक साल की उम्र लाज़िम है और मुज़क्कर व मुअन्नस में इख़्तियार है चाहे बकरी दे या बकरा दे, मगर ऊँटनी मुअन्नस ही देना लाज़िम है, ऊँट देना जाइज़ नहीं, अलबत्ता ऊँटनी की क़ीमत लगा कर उस क़ीमत से बराबर या उससे ज़ाएद क़ीमत का ऊँट दे देना जाइज़ है।

(2) जहां सेह साला चार ऊँटनियां वाजिब हैं वहां इख़्तियार है कि उनके बजाए दो साला पांच ऊँटनियां दे दे।

(3) ज़कात का हिसाबे मज़कूर उस सूरत में है कि ऊँट तिजारत के लिए न हों और उनका ग़ालिब चारा बाहर चरना हो, घर में चारा न दिया जाता हो, या बाहर चरने की बनिस्बत घर का चारा कम हो, अगर घर का

चारा ज़्यादा हो या दोनों बराबर हों तो ज़कात नहीं।

(4) अगर ऊँट तिजारत के लिए हों तो उन पर हिसाबे मज़कूर के मुताबिक़ बकरी या ऊँटनी वाजिब नहीं, बल्कि दूसरे अमवाले तिजारत की तरह उनकी क़ीमत पर ज़कात फ़र्ज़ होगी, ख़्वाह बाहर चरते हों या घर में चारा दिया जाता हो। तिजारत के लिए होने का मतलब ये है कि ख़रीदते वक़्त उनको फ़रोख़्त करने की नीयत हो, अगर ख़रीदने के बाद बेचने की नीयत की, या अस्ल को बरक़रार रखते हुए उनकी नस्ल को बेचने की नीयत हो, ख़्वाह अस्ल को ख़रीदते वक़्त ये नीयत हो या बाद में, इन सब सूरतों में ये माले तिजारत नहीं।

(5) जो ऊँट सवारी या बार बरदारी के लिए हों उन पर किसी क़िस्म की ज़कात नहीं। फ़क़त वल्लाहु तआ़ला आलमु। (अहसनुलफ़तावा अज़ जिल्द–4 सफ़्हा–272 ता 275 व हिदाया जिल्द–1 सफ़्हा–188)

गाय व भैंस की ज़कात का निसाब

गाय और भैंस दोनों एक ही क़िस्म में हैं, दोनों का निसाब भी एक है। और अगर दोनों के मिलाने से निसाब पूरा होता हो तो दोनों को मिला लेंगे, मसलन बीस गाय हों औद दस भैंस तो दोनों को मिला कर तीस का निसाब पूरा कर लेंगे, मगर ज़कात में वही जानवर दिया जाएगा जिसकी तादाद ज़्यादा हो। यानी अगर गाय ज़्यादा हैं तो ज़कात में गाय दी जायेगी और भैंस ज़्यादा हैं तो ज़कात में भैंस दी जाएगी और अगर दोनों बराबर हैं तो इख़्तियार है।

तीस गाय भैंस में एक गाय या भैंस का बच्चा जो पूरे एक साल का हो, तीस से कम में कुछ नहीं और तीस के

बाद उन्तालीस तक भी कुछ नहीं (सिर्फ़ एक साला बच्चा ही है) चालीस गाय भैंस में पूरे दो साल का बच्चा। इकतालीस से उनसठ तक कुछ नहीं (यानी सिर्फ़ दो साला बच्चा ही रहेगा) जब साठ हो जायें तो एक एक साल के दो बच्चे दिए जाऐंगे। फिर जब साठ से ज़्यादा हो जायेंगे तो हर तीस में एक साल का बच्चा और हर चालीस में दो साल का बच्चा मसलन सत्तर हो जायें तो एक एक साल का बच्चा और एक दो साल का बच्चा। क्योंकि सत्तर में एक तीस का निसाब है और एक चालीस का। और जब अस्सी हो जायें तो दो साल के दो बच्चे क्योंकि इसमें चालीस के दो निसाब हैं और नव्वे में एक एक साल के तीन बच्चे, क्योंकि नव्वे में तीस के निसाब हैं और सौ में दो बच्चे एक एक साल के और एक बच्चा दो साल का। क्योंकि सौ में दो निसाब तीस के और एक निसाब चालीस का है। हां जहां कहीं दोनों निसाबों का हिसाब मुख़्तलिफ़ नतीजा पैदा करता हो वहां इख़्तियार है चाहे जिसका एतेबार करें। मसलन बीस में चार निसाब तो तीस के हैं और तीन निसाब चालीस के, पस इख़्तियार है कि तीस के निसाब का एतेबार कर के एक साल के चार बच्चे दें या चालीस के निसाब का एतेबार करे के दो साल के तीन बच्चे दें।

ग़रज़ कि साठ के बाद फिर दहाई से निसाब बदलता रहेगा। दहाई से कम बढ़े तो ज़कात में ज़्यादती न होगी वही ज़कात देना होगी जो उससे पहले दी जाती थी।

(इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–4 सफ़्हा–25 व अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–271 व फ़तावा आलमगीरी जिल्द–4

सफ़्हा–18)

नोटः गाय व भैंस के निसाब में नर मादा यानी बैल, बछड़ा, कटड़ा, झोटा भैंसा वगैरा का भी यही हुक्म है।

(मुहम्मद रफ़अत क़ासमी गुफ़िरलहू)

बकरियों और भेड़ों की ज़कात का निसाब

सवालः जो बकरियां बाहर चरती हैं और तिजारत के लिए नहीं हैं। उनकी ज़कात का क्या हिसाब है? कितनी बकरियों पर एक बकरी वाजिब है? बकरी और भेड़ का हुक्म एक है या दोनों में फ़र्क़ है?

जवाबः चालीस बकरियों पर एक बकरी या एक बकरा वाजिब है। चालीस से एक सौ बीस तक यही वाजिब है, फिर एक सौ इकीस से दो सौ तक दो बकरियां, फिर दो सौ एक से तीन सौ निन्नानवे तक तीन बकरियां, फिर चार सौ पर चार बकरियां। इसके बाद हर सैंकड़े पर एक बकरी वाजिब है। भोड़ों का भी यही हुक्म है। (मेंढे भी इसी में शामिल हैं) भेड़ व बकरी मख़लूत (मिली हुई) हों तो भी यही निसाब है। अलबत्त ज़कात की अदाएगी में ये फ़र्क़ है कि भेड़ और बकरी में जो ज़्यादा हों ज़कात में वही जानवर दीये जाऐं और अगर दोनों बराबर हों तो इख़्तियार है कि आला क़िस्म से अदना क़ीमत का जानवर दे या अदना क़िस्म से आला क़ीमत का दे। (अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–272 बहवाला रद्दुलमुहतार सफ़्हा–20 व फ़िक़्हुज़्ज़कात जिल्द–1 सफ़्हा–277 व इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–4 सफ़्हा–26 व आलमगीरी जिल्द–4 सफ़्हा–17)

साल के दरमियान जानवर के मरने पर ज़कात का हुक्म

मस्अलाः एक शख़्स के पास दो सौ दिरहम की

मालियत (साढ़े बावन तोला चांदी) का बकरियों का रेवड़ था, इत्तिफ़ाक़ से वह साल भर गुज़रने से पहले मर गईं। उस शख़्स ने उनकी खालें उतार कर उन्हें रंग लिया और अब उन खालों की क़ीमत निसाबे शरई के बराबर हो गई। फिर बकरियों का साले निसाब भी पूरा हो गया तो अब उन रंगी हुई ख़ालों पर ज़कात वाजिब हो गई।

मस्अला: किसी शख़्स के पास कारोबारी मक़्सद के लिए अंगूर के शीरे का ज़ख़ीरा साल भर गुज़रने से पहले वह शराब में तब्दील हो गया और उसके बाद उसका सिरका बन गया जिसकी क़ीमत निसाब के बराबर हो गई। इसके साथ साथ शीरा का जो साले निसाबे चालू था वह भी पूरा हो गया तो अब उस सिरका पर ज़कात वाजिब न होगी। फ़ुक़हा ने उसकी वजह ये ब्यान की है कि पहले मस्अला में बकरियों की ऊन अपनी क़ीमत रखती थी वह बदस्तूर (उनके मरने के बाद भी) साल भर तक बाक़ी रही और दूसरे मस्अला में कुल माल (जो शीरा अंगूर की शक्ल में था) ख़त्म हो गया और एक दूसरी चीज़ बन गई इसलिए साल का हुक्म भी उस पर बाक़ी न रहा। (फ़तावा क़ाज़ी व फ़तावा आलमगीरी जिल्द–4 सफ़्हा–14)

मस्अला: जानवरों के बच्चों पर अगर वह तन्हा हों तो ज़कात फ़र्ज़ नहीं है। हां अगर उनके साथ बड़ा जानवर भी हो, गो एक ही हो, तो उन पर भी ज़कात फ़र्ज़ होगी और ज़कात में वही जानवर दिया जाएगा और साल पूरा होने के बाद अगर वह बड़ा जानवर मर जाए जो ज़कात साक़ित यानी ख़त्म हो जाएगी। (इमदाद मसाइले ज़कात

सफ़्हा–51 व दुर्रेमुख़्तार)

बकरी के बच्चों पर ज़कात का हुक्म

मस्अला: अगर सिर्फ़ बच्चे हैं तो उन पर ज़कात नहीं, और अगर उनके साथ कोई एक साल की या उससे बड़ी बकरी भी है तो उसके साथ मिल कर निसाब में बच्चों का एतेबार होगा और मजमूआ चालीस पर एक बड़ी बकरी फ़र्ज़ होगी। (अहसनुलफ़तावा जिल्द– सफ़्हा–266 व फ़िक़्हुज़्ज़कात जिल्द–1 सफ़्हा–281)

जो मवाशी जंगल में चरें और घर में भी

सवाल: गाय, भैंस वग़ैरा जंगल में भी चरती हैं और घर में भी चारा दिया जाता है तो उन पर ज़कात फ़र्ज़ है या नहीं, जबकि कामिल निसाब है?

जवाब: ग़ालिब ख़ूराक का एतेबार है, अगर जंगल में चरने की ख़ूराक ग़ालिब है तो ज़कात फ़र्ज़ है (यानी बग़ैर पैसों के चरना) और घर का चारा ग़ालिब है या दोनों बराबर हैं तो ज़कात फ़र्ज़ नहीं, अलबत्ता तिजारत के लिए हों तो माले तिजारत की ज़कात फ़र्ज़ होगी।

मस्अला: जिन मवाशी का ग़ालिब चारा घर में हो या बाहर चरना कम हो, उन पर ज़कात फ़र्ज़ नहीं, अलबत्ता तिजारत की नीयत से ख़रीदे हों तो उनकी क़ीमत पर ज़कात फ़र्ज़ है। (अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–276 बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–20)

तिजारती मवाशी की ज़कात का हुक्म

सवाल: हम बकरियों की तिजारत करते हैं। चालीस पचास बकरियां मौजूद रहती हैं, मगर ख़रीदोफ़रोख़्त की वजह से बदलती रहती हैं। कोई बकरी पूरे साल नहीं

रहती, ये बकरियां जंगल में चरती हैं?

जवाबः इन बकरियों की ज़कात में बकरी वाजिब नहीं, बल्कि दूसरे अमवाले तिजारत की तरह इन बकरियों की कीमत लगा कर उसका चालीसवां हिस्सा ज़कात में दिया जाएगा। (अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–277 बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–17)

दूध फरोख़्त करने की नीयत से पाली हुई भैंसों का हुक्म

मस्अलाः जो भैंसें जंगल में नहीं चरतीं, बल्कि उनको खुद घर में खिलाया जाता है। इसलिए उन पर ज़कात फ़र्ज़ नहीं, बल्कि अगर भैंसों की तिजारत भी मक़्सूद हो, यानी भैंस ख़रीदते वक़्त उसका दूध बेचने के साथ खुद भैंस बेचने की नीयत हो तो ऐसी भैंसों की कीमत पर ज़कात फ़र्ज़ होगी।

(अहसुनलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–277)

ज़रई सरमाए पर ज़कात

इंसान पर अल्लाह सुब्हानहू व तआला का एक बड़ा एहसान और उसकी एक बड़ी नेमत खुद इस ज़मीन की तख़लीक़ है जिससे अल्लाह तआला के हुक्म से हर तरह की नबातात और हर क़िस्म के फल फूल पैदा होते हैं और बनी नौअे इंसान के लिए नौअ ब नौअ पेदा होते हैं। यहां तक कि बाज़ मग़रिबी माहिरीने इक्तिसादियात ने ये राए इख़्तियार की है कि ज़रई ज़मीन पर एक जुदागाना टेक्स होना चाहिए कि ज़मीन ही इंसानी मईशत का हक़ीक़ी सरचश्मा है।

हक़ीक़त तो ये है कि नज़रे बसीरत रखने वाले के लिए ये महज़ फ़ज़्ले इलाही है कि उसने ज़मीन को इंसान

के ताबेअ़ बना दिया और उसमें उसकी रोज़ी पिन्हां कर दी और उसमें बरकत दे कर तमाम इंसानों की मुतअैयन रोज़ी का ज़ख़ीरा जमा कर दिया। और अगर ज़रा हम इस पर ग़ौर करें कि एक दाना को फलदार दरख़्त बनने में किन किन मराहिले नश्वोनुमा से गुज़रना होता है और क्या क़वानीने क़ुदरत उसकी अफ़ज़ाइश में कारफ़रमा होते हैं तो हम उसकी मेहरबानी पर सज्दए शुक्र बजा लाएें।

क्योंकि हर मिट्टी रोईदगी (पैदावार) के क़ाबिल नहीं होती, बल्कि मिट्टी में ऐसे नागुज़ीर अनासिर दरकार होते हैं जो नबातात के परवान चढ़ाने में मददगार बनते हैं। तो ये ऐसे अनासिर पर मुश्तमल मिट्टी किस ने पैदा की है?

हर नबातात के उगने और नश्वोनुमा पाने के लिए पानी भी लाज़िम है और अल्लाह तआ़ला ने बादलों से पानी बरसाने और पहाड़ों से चश्मे बहा देने का बंदोबस्त फ़रमा दिया और उसको ऐसी मुनासिब मिक़्दार में ज़मीन में जारी किया कि मख़्लूक़ाते इंसानी और वह्शी को नुक़्सान न पहुंचे और जानदार ग़र्क़ न हो जायें। पौदों को मख़्सूस गैसों की भी ज़रूरत है और अल्लाह तआ़ला ने ये गैस हवा के अन्दर तख़्लीक़ फ़रमा दीं और नबातात को हुक्म फ़रमा दिया कि वह इंसान और हैवान के मुंह से निकलने वाली कारबन गैस अपने अन्दर जज़्ब करते रहे और इस तरह हैवानात और नबातात में ये बेनज़ीर और अजीब तबादलए गैस वक़ूअ़ पज़ीर होता रहे।

नबाताती अफ़ज़ाइश के लिए रौशनी और गर्मी एक मुनासिब और मौज़ूँ मिक़्दार में दरकार है कि गर्मी अगर

ज़्यादा बढ़ जाएगी तो पौदे जल जाऐंगे और अगर कम हो जाएगी तो पौदे कुम्हला जाऐंगे और हरारत न होगी तो काइनात में किसी भी ज़ी हयात का वजूद बाक़ी नहीं रहेगा।

ये अल्लाह तआला ही है जिससे सूरज को पैदा किया और उसको ज़मीन से इतने मौज़ूँ फ़ासिला पर रखा कि ज़मीन तक पहुंचने वाली उसकी हरारत (गरमाई) ज़िन्दगी के लिए मौज़ूँ हो जाए कि सूरज अगर ज़मीन से क़रीब आ जाए तो हर ज़िन्दा वजूद जल कर ख़ाकिस्तर हो जाए और अगर सूरज ज़मीन से कहीं दूर निकल जाए तो हर वजूद यख़बस्ता हो कर रह जाए।

बीज में नुमू और अफ़ज़ाइश और बढ़ने व फलने और फूलने की सलाहियत किस ने वदीअ़त की है? किसने खजूर की गुठली से आसमान की जानिब उठा हुआ तरोताज़ा फूल और फल वाला ज़ीक़ामत दरख़्त खड़ा किया है? किस ने दानए गंदुम की सात बालैं पैदा कीं और हर बाली में सौ दाने उगाए?

ज़ाहिर है कि अल्लाह ही ने ये सारा इंतिज़ाम किया है, ये सारी तरतीब क़ाइम की और तख़्लीक़ का एजाज़ ज़ाहिर किया। और यही वजह है कि अल्लाह ने अपने बंदों पर एहसान करते हुए फ़रमाया कि—

اَفَرَاَیْتُمْ مَّاتَحْرُثُوْنَ ءَاَنْتُمْ تَزْرَعُوْنَهٗ اَمْ نَحْنُ الزَّارِعُوْنَ۔

(الواقعہ ایۃ ٦٣ پ ٢٧)

तर्जुमा: कभी तुम ने सोचा ये बीज जो तुम बोते हो, उनसे खेतियां तुम उगाते हो, या उनके उगाने वाले हम हैं? हम चाहें तो उन खेतों को भुस बना कर रख दें और

तुम तरह तरह की बातें बनाते रह जाओ कि हम पर तो उलटी चटें पड़ गई बल्कि हमारे नसीब ही फूटे हुए हैं।

बिलाशुब्हा ज़मीन की हर पैदावार अल्लाह सुब्हानहू का एहसान और उसका फ़ज़्ल है और हक़ीक़ी पैदा करने वाला अल्लाह ही है और हम तो एक तिन्का भी ज़मीन से नहीं उगा सकते। इस अज़ीम नेअ़मत पर हमें अल्लाह तआ़ला का शुक्र अदा करना चाहिए कि इस क़दर खुशगवार लज़्ज़तों की हामिल ग़िज़ाएँ इस ज़मीन से हमारे लिए पैदा फ़रमाईं। इस इज़हारे शुक्र का तरीक़ा ये है कि हम इस ज़मीन की पैदावार पर ज़कात (उश्र व निस्फ़ उश्र व ख़िराज) अदा करें ताकि मुहताजों की ज़रूरतों की तकमील हो जाए और अल्लाह के दीन की हिमायत व नुसरत की जा सके। (फ़िक़्हुज़्ज़कात जिल्द–1 सफ़्हा–451 ता 455)

उश्र के वाजिब होने की दलील

खेती और फलों की ज़कात (उश्र यानी पैदावार का दसवां हिस्सा) की दलील किताब व सुन्नत से भी साबित है, अल्लाह तआ़ला का इरशाद है कि "وَاٰتُوْا حَقَّهٗ يَوْمَ حَصَادِهٖ" यानी फ़स्ल काटने के वक़्त हक़ अल्लाह का निकाल दिया करो। (पारा–8 सूरए अनआ़म)

और आंहज़रत (स.अ.व.) का इरशाद है कि "जो खेती बारिश से सैराब हो, उस पर उश्र (1/10) वाजिब है और जिस को डोल या जर्स या रहट से सैराब किया हो उसमें निस्फ़ उश्र (1/20) वाजिब है।

इस हदीस शरीफ़ में इसकी तफ़सील है जिसका ज़िक्र मज़कूरा आयत शरीफ़ा में इजमाली तौर पर किया गया है। (किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–103)

उश्र का मफ़हूम क्या है?

लफ़्ज़ "उश्र" के अस्ली मअ़ना दसवां हिस्सा है, मगर हदीस शरीफ़ में नबी करीम (स.अ.व.) ने वाजिबाते शरईया की जो तफ़सील ब्यान फ़रमाई है उसमें उश्री ज़मीन की दो क़िस्में क़रार दी हैं। एक में उश्र यानी दसवां हिस्सा पैदावार का अदा करना फ़र्ज़ होता है और दूसरी में निस्फ़ उश्र यानी बीसवां हिस्सा। लेकिन फ़ुक़हा की इस्तिलाह में इन दोनों क़िस्मों पर आएद होने वाली ज़कात को उश्र ही के उनवान से ताबीर किया जाता है। वाज़ेह हो कि उश्री ज़मीन की पैदावर की ज़कात इबादत है।

(इमदाद मसाइले ज़कात सफ़्हा–81 व उश्र व ख़िराज के अहकाम सफ़्हा–247)

निसाबे उश्र क्या है?

मस्अला: इमाम अबूहनीफ़ा (रह.) के नज़दीक उश्र का निसाब नहीं बल्कि हर क़लील व कसीर में उश्र वाजिब है। (फ़िक़्हुज़्ज़कात जिल्द–1 सफ़्हा–202)

पैदावार जितनी भी हो, कम हो या ज़्यादा, हर हाल में उश्र निकालना वाजिब है। इसके लिए ज़कात की तरह कोई ख़ास निसाब नहीं है, जिससे कम होने पर उश्र साक़ित हो जाए, वजह उसकी क़ुरआन व हदीस के अलफ़ाज़ का उमूम है। "وَمِمَّا اَخْرَجْنَا لَكُمْ مِنَ الْاَرْضِ الخ" पारा–3 सूरए बक़रा। (जवाहिरुलफ़िक़्ह सफ़्हा–274 उश्र व ख़िराज के अहकाम, व फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–76 व फ़तावा महमूदिया जिल्द–3 सफ़्हा–101)

क्या मक़रूज़ पर उश्र वाजिब है?

मस्अला: उश्र बावजूद क़र्ज़ के भी लाज़िम होता है

पस जिस जगह उश्र लाज़िम है वहां उश्र के वाजिब होने के लिए दैन यानी क़र्ज़ मानेअ़ नहीं है और जहां उश्र वाजिब नहीं है वहां भी दे देने में कुछ हरज नहीं है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–166)

उश्र वाजिब होने के शर्तें

(1) मुसलमान होना, क्योंकि उश्र ख़ालिसतन इबादत है और काफ़िर इबादत का अह्ल नहीं। (बदाए)

(2) ज़मीन का उश्री होना, ख़िराजी ज़मीन पर उश्र वाजिब नहीं होता।

(3) ज़मीन से पैदावार का हासिल होना। अगर किसी बेइख़्तियारी सबब या अपनी ग़फ़लत व कोताही के सबब पैदावार हासिल न हो तो बहरहाल उश्र साक़ित हो जाएगा।

(4) ऐसी पैदावार जो बो कर हासिल हो। ख़ुद रौ घास या दरख़्त पर उश्र वाजिब नहीं।

(इमदाद मसाइलुज़्ज़कात सफ़्हा–85)

मस्अला: आम अहकामे शरईया में आक़िल व बालिग़ होना भी शर्त है, मगर ज़मीन पर उश्र के वजूब में ये दोनों शर्तें नहीं, क्योंकि उश्र के वाजिब होने के लिए ज़मीन के मालिक का आक़िल और बालिग़ होना ज़रूरी नहीं, ज़मीन का मालिक अगर बच्चा या मजनून है मगर ज़मीन से पैदावार हासिल होती है तो उसमें उश्र वाजिब होगा और उसके औलिया (सरपरस्तों) के ज़िम्मा उसका अदा करना फ़र्ज़ है। बख़िलाफ़ ज़कात के, कि वह बच्चा और मजनून के माल में वाजिब नहीं होती। (बदाए)

मस्अला: उश्र के वाजिब होने के लिए ज़मीन का ख़ुद मालिक होना शर्त नहीं, चुनांचे वक़्फ़ की ज़मीन की

पैदावार में भी उश्र वाजिब है। इसी तरह अगर किसी शख़्स ने आरयतन या इजाज़तन या किराया पर ज़मीन ली है और उसमें ज़राअ़त करता है तो उसकी पैदावार का उश्र उस शख़्स के ज़िम्मा है। ज़मीन के मालिक के ज़िम्मा नहीं।

मस्अला: उश्र के वाजिब होने के लिए साल गुज़रना भी शर्त नहीं। साल में जितनी दफ़ा पैदावार होगी या और बढ़ेगी, उतनी दफ़ा ही उश्र वाजिब होगा।

मस्अला: क़र्ज़ का न होना भी उश्र का अदा करना लाज़िम है और क़र्ज़ की रक़म को मिन्हा भी नहीं किया जाएगा। यानी वज़ा न होगा। (उश्र व ख़िराज के अहकाम सफ़्हा–272, जवाहिरुलफ़िक्ह सफ़्हा–271 जिल्द दोम व अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–345)

मस्अला: एक शर्त मज़ीद ये है कि ज़मीन से जो पैदावार हासिल हो, जिस पर पैदावारी या नुमाई की ग़रज़ से ज़राअ़त की जाए, लिहाज़ा लकड़ी, घांस, बांस, नरसल और बर्ग ख़ुरमा पर ज़कात नहीं है। क्योंकि इस क़िसम की अश्या से ज़मीन में नुमू नहीं होती, बल्कि कम हो जाती है। अलबत्ता अगर उनको जुदा कर के उनसे नफ़ा कमाया जाए तो ज़कात वाजिब होगी। बशर्तेकि उसकी क़ीमत निसाब को पूरा करती हो।

मस्अला: ज़कात वाजिब होने के लिए ज़रूरी है कि ज़मीन पर फ़िलवाक़ेअ़ ज़राअ़त हुई हो बख़िलाफ़ ख़िराज के कि उस पर ख़िराज उसी वक़्त वाजिब हो जाता है जबकि ज़मीन क़ाबिले ज़राअ़त हो जाए (गो सरेदस्त उस पर खेती न हो) इसी तरह ज़रूरी है कि ज़मीन का

मालिक ज़राअत करने के काबिल हो, चुनांचे अगर कोई शख़्स ज़मीन पर ज़राअत करने की कुदरत तो रखता हो लेकिन ज़राअत नहीं करता तो उस पर ज़कात (उश्र) वाजिब नहीं है, लेकिन ख़िराज बहरहाल वाजिबुलअदा है। क्योंकि उस ज़मीन में नुमा (अफ़्ज़ूनी) की सलाहियत है। ग़रज़ वजूबे ज़कात की शर्त ये है कि ज़मीन में पैदावारी, नश्वोनुमा हो रही हो। बख़िलाफ़ ख़िराज के उसके वाजिब होने की शर्त ये है कि ज़मीन में नुमू की सलाहियत पैदा हो गई हो। (किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–1004)

उश्र व ख़िराज के अहकाम

उश्र व ख़िराज शरीअ़ते इस्लाम के दो इस्तिलाही लफ़्ज़ हैं। उन दोनों में ये बात मुश्तरक है कि इस्लामी हुकूमत की तरफ़ से ज़मीनों पर आएद करदा टेक्स की हैसियत इन दोनों में है। फ़र्क़ ये है कि उश्र सिर्फ़ टेक्स नहीं बल्कि उसमें एक हैसियत इबादत की भी है और इसीलिए उसको (ज़कातुलअर्ज़) "ज़मीन की ज़कात" कहा जाता है। और ख़िराज ख़ालिस टैक्स है जिसमें इबादत की कोई हैसियत नहीं। इसीलिए उश्र मुसलमानों की ज़मीन के साथ मख़सूस है। और अमली फ़र्क़ ये है कि उश्र तो ज़मीन की पैदावार है, अगर पैदावार न हो ख़्वाह उसका सबब मालिके ज़मीन की ग़फ़लत ही हो कि उसने काबिले काश्त ज़मीन को ख़ाली छोड़ दिया, काश्त नहीं की, इस सूरत में भी उश्र लाज़िम नहीं होगा, क्योंकि उश्र पैदावार ही के एक हिस्सा का नाम है। बख़िलाफ़ ख़िराज के कि वह काबिले काश्त ज़मीन पर आएद है। अगर मालिक ने ग़फ़लत बरती और काबिले काश्त होने के बावजूद उसमें

काश्त नहीं की तो ख़िराज इस हालत में भी उस पर लाज़िम होगा। (शामी जिल्द–2 सफ़्हा–73)

अलबत्ता ज़मीन का क़ाबिले काश्त होना इसमें भी शर्त है। बंजर ज़मीन जिसमें काश्त की सलाहियत न हो या पानी से इतनी दूर हो कि पानी ज़मीन तक नहीं पहुंच सकता और बारिश इतनी नहीं होती कि जिससे कोई चीज़ ज़मीन से पैदा हो सके तो ऐसी ज़मीन में ख़िराज नहीं है। (बदाए, जवाहिरुलफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़्हा–347)

मस्अला: हर पैदावार में जिससे आमदनी हासिल करना मक़सूद हो उश्र वाजिब होता है ख़्वाह ग़ल्ला हो ख़्वाह फल, पस खेते और बाग़ दोनों में उश्र वाजिब है।

(इमदादुलफ़तावा जिल्द–2 सफ़्हा–69)

उश्र और ज़कात में फ़र्क़

अमली तौर पर उश्र और ज़कात में ये फ़र्क़ भी है कि अम्वाले तिजारत और सोना चांदी वग़ैरा अगर साल भर रखे रहें उनमें किसी दर्जा से कोई नफ़ा न हो बल्कि नुक़्सान भी हो जाए मगर नुक़्सान हो कर मिक़्दारे निसाब से कम न हों तो भी ज़कात उन अमवाल की अदा करना फ़र्ज़ है। बख़िलाफ़ उश्र के कि ज़मीन में पैदावार होगी तो उश्र लाज़िम होगा और अगर पैदावार न हुई तो कुछ भी वाजिब नहीं। (जवाहिरुलफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़्हा–247)

मस्अला: हुकूमत जो ख़िराज लेती है वह ज़कात (उश्र) नहीं है। (फ़तावा महमूदिया जिल्द–11 सफ़्हा–138)

ख़ात्मए ज़मीनदारी के बाद मस्अलए उश्र

हामिदन व मुसल्लियन। ज़मीनदारी ख़त्म होने के बाद जब हर ज़मीन मिल्के हुकूमत क़रार पा गई फिर हुकूमत

ने अपनी तरफ़ से जिस जिस को भी ज़मीन दी है तो उस पर उश्र वाजिब है न निस्फ़ उश्र, ताहम अगर कोई शख़्स उश्र या निस्फ़ उश्र अदा कर दे तो मोजिबे ख़ैर व बरकत है जिस क़दर भी ज़्यादा गुरबा को दे गा अज्र व सवाब पाएगा।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–3 सफ़्हा–89)

क्या हिन्दुस्तान की ज़मीन पर उश्र वाजिब है?

मस्अला: हिन्दुस्तान में जो ज़मीनें मुसलमानों की ममलूका हैं वह उश्री हैं क्योंकि अस्ल वज़ीफ़ा मुसलमानों की ज़मीन का उश्र है। पस बहालते इशतिबाह अह्वत उश्र निकालना है।

मस्अला: हिन्दुस्तान की तमाम ज़मीनों का एक हुक्म नहीं है, अलबत्ता जो ज़मीनें ममलूका मुसलमानों की हैं उसमें उश्र वाजिब है। मुसलमानों को उश्र निकालना चाहिए।

(जवाहिरुलफ़िक्ह सफ़्हा–261)

मस्अला: और जब कि उश्र बमंज़िलए ज़कात है तो जैसा कि ज़काते अमवाल हर जगह वाजिब है इस्लामी शहर हों या ग़ैर इस्लामी उसी तरह उश्र भी हर जगह लाज़िम होगा। और अगर उश्री ज़मीन से ख़िराज ले लिया जाए तब भी इन्दल्लाह उश्र साक़ित नहीं होता। इसलिए साहबे ज़मीन को उश्र निकाल कर फ़ुक़रा को देना चाहिए। अल्हासिल अह्वत यही है कि मुसलमान अपनी आराज़ी की पैदावार से उश्र अदा करें।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–189)

मस्अला: एहतियात इसमें हैं कि बग़रज़े हुसूले ख़ैरोबरकत जहां तक हो सके उश्र व निस्फ़ उश्र निकालते रहना चाहिए। (निज़ामुलफ़तावा जिल्द–1 सफ़्हा–357)

जो अश्या महफ़ूज़ कर ली जायें उनका हुक्म

मस्अला: फ़स्लों की पैदावार और फलों पर साल गुज़र जोने से दो बारा ज़कात लाज़िम नहीं होती। यानी जब एक मरतबा फ़स्लों की पैदावार फलों पर उश्र आयद हो चुका तो दोबारा उन अश्या पर कुछ नहीं होगा ख़्वाह ये मालिक के पास कई सालों तक महफ़ूज़ रहें। इसलिए कि ज़कात का तकरार (हर साल आएद होना) सिर्फ़ अफ़ज़ाइश पज़ीर माल में होता है और ज़मीनी पैदावार और फलों में से जो अश्या महफ़ूज़ करली जाएँ तो चूंकि अब उनकी अफ़ज़ाइश ख़त्म हो चुकी है और उन्हें अब ख़त्म हो जाना है इसलिए अब उन पर ज़कात वाजिब नहीं है।

(फ़िक्हुज़्ज़कात जिल्द–1 सफ़्हा–192)

मस्अला: उश्र यानी पैदावार का दसवां हिस्सा जिस जगह वाजिब है कुल पैदावार पर वाजिब है। और जिस वक़्त गल्ला पैदा हो उसी वक़्त वाजिब होता है, साल गुज़रने की क़ैद उसमें नहीं है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–165)

उश्र किस पर है?

सवाल: (1) उश्र की तारीफ़ क्या है? (2) क्या ज़कात की तरह उसका भी निसाब होता है? (3) क्या उश्र सब ज़मीनदारों पर होता है? (4) ये किन लोगों को अदा किया जाता है? (5) एक आदमी अगर अपने माल की ज़कात अदा कर दे तो क्या उश्र भी देना होगा? (6) क्या ये साल में एक मरतबा दिया जाता है या हर नई फ़स्ल पर? (7) क्या मवेशियों के चारा के लिए काश्त की गई फ़स्ल पर भी उश्र होगा?

जवाब: (1) उश्र ज़मीन की पैदावार की ज़कात है। अगर ज़मीन बारानी हो, कि बारिश के पानी से सैराब होती है तो पैदावार उठने के वक़्त उस पर दसवां हिस्सा अल्लाह तआला के रास्ता में देना वाजिब है। और अगर ज़मीन को खुद सैराब क्या जाता है तो उसकी पैदावार का बीसवां हिस्सा सदक़ा करना वाजिब है।

(2) हमारे इमाम अबूहनीफ़ा (रह.) के नज़दीक उसका कोई निसाब नहीं बल्कि पैदावार कम हो या ज़्यादा उस पर उश्र वाजिब है।

(3) जी हां! जो शख़्स भी ज़मीन की फ़स्ल उठाए उसके ज़िम्मा उश्र वाजिब है।

(4) उश्र के मुस्तहिक़ वही लोग हैं जो ज़कात के मुस्तहिक़ हैं।

(5) उश्र पैदावार की ज़कात है। इसलिए दूसरे मालों की ज़कात अदा करने के बावजूद पैदावार पर उश्र वाजिब होगा।

(6) साल में जितनी भी फ़स्लें आईं, हर नई फ़स्ल पर उश्र वाजिब है।

(7) जी हां! मवेशियों के चारे के लिए काश्त की गई फ़स्ल पर भी हज़रत इमाम साहब (रह.) के नज़दीक उश्र वाजिब है। (आप के मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–400 व फ़तावा महमूदिया जिल्द–3 सफ़्हा–100 व हिदाया जिल्द–1 सफ़्हा–181)

इमाम अबूहनीफ़ा (रह.) के नज़दीक फलों, सब्ज़ियों, तरकारियों और मवेशियों के चारे में भी, जिसको काश्त किया जाता हो, उश्र वाजिब है। ज़रई पैदावार में ज़कात

वाजिब नहीं होती, सिर्फ़ उश्र वाजिब है।

(आप के मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–409 व फ़तावा महमूदिया जिल्द–3 सफ़्हा–101)

चारा वाली ज़मीन का हुक्म

मस्अला: उश्र (पैदावार का दसवां हिस्सा) उस खेती में भी है जो जानवरों के चारा (खाने) के लिए है और ग़ल्ला या चारा उसमें पैदा हुआ हो वाजिब है।

मस्अला: खेत को बग़ैर दाना और बिला पुख़्तगी के काट कर जानवरों को खिलाया जाए तो उश्र नहीं है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–186)

"यानी अगर गल्ला के लिए खेत बोया लेकिन इरादा बदल गया और खेत को पकने से पहले पहले ही काट कर जानवरों का चारा बना दिया तो उश्र वाजिब नहीं है। जैसा कि इबारत से ज़ाहिर है।" (रफ़अ़त)

खेती पकने से पहले फ़रोख़्त करने पर उश्र का हुक्म

मस्अला: अगर खड़े खेत को तैयार होने से पहले फ़रोख़्त कर दिया गया तो उसकी ज़कात (उश्र) ख़रीदार पर वाजिब होगी। और अगर दाना पक जाने के बाद बेचा तो उसकी ज़कात बेचने वाले के ज़िम्मा है।

मस्अला: फलदार दरख़्त की ज़कात उस वक़्त वाजिब होगी जब उसमें फल लग जायें, और उनके ख़राब होने का अंदेशा न रहे, बईं तौर कि वह ऐसे हो जायें कि उनको काम में लाया जा सके, फिर उन पर जो वाजिब होगा वह काटने के वक़्त निकाला जाये। अलबत्ता ग़ल्ला की ज़कात (उश्र) का वक़्त वह है जबकि उसको तोड़ा

और साफ़ किया जाए। अगर मालिक के अपने किसी अमल के बग़ैर हासिल शुदा पैदावार (अज़ख़ुद) तलफ़ हो जाए तो उसकी ज़कात भी साक़ित (ख़त्म) हो जाएगी और यही हुक्म उस सूरत में है कि जबकि उसका तोड़ना नागुज़ीर हो। (किताबुलफ़िक़्ह सफ़्हा–1005)

नाकाफ़ी पैदावार का हुक्म

सवालः बसा औक़ात पैदावार में इस क़दर ग़ल्ला भी नहीं होता जिसकी क़ीमत ख़र्च शुदा रक़म के बराबर हो, ऐसी सूरत में ज़कात किस तरह अदा की जाए?

जवाबः जो कुछ पैदा हो उसका दसवाँ हिस्सा निकालना चाहिए। ख़्वाह कम हो या ज़्यादा, मसलन अगर सौ मन ग़ल्ला पैदा हो तो दस मन दिया जाए और अगर दस मन पैदा हुआ तो एक मन दिया जाए और इख़राजात को महसूब न किया जाएगा।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–76)

बटाई की ज़मीन का उश्र किस तरह पर है?

सवालः मैं एक ज़मीनदार की ज़मीन में काश्त करता हूं, दस हज़ार की कपास हुई पांच की मेरे हिस्सा में आई। अब क्या मैं पूरे दस हज़ार का उश्र निकालूं या अपने हिस्सा में से?

जवाबः आप अपने हिस्सा की पैदावार का उश्र निकालिए। क्योंकि उसूल ये है कि ज़मीन की पैदावार जिसके घर आएगी, ज़मीन का उश्र भी उसी के ज़िम्मा होगा। पस मुज़ारेअ़ को (बटाई के) हिस्सा में जितनी पैदावार आए उसका उश्र उसके ज़िम्मा है और मालिक के हिस्सा में जितनी जाए उसका उश्र उस पर लाज़िम है।

(आप के मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–421 व फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–159 बहवाला दुर्रेमुख़्तार बाबुलउश्र जिल्द–2 सफ़्हा–75)

क्या पैदावार का ख़र्चा निकाल कर उश्र है?

सवालः आज कल कीड़े मार स्प्रे और कीमियाई खाद, ट्रैक्टर के ज़रीए हल चलाए जाते हैं। क्या ख़र्च फ़स्ल की आमदनी से कम कर के उश्र देना होगा या कुल पैदावार पर?

जवाबः शरीअत ने इख़राजात पर निस्फ़ उश्र (यानी बीसवां हिस्सा) कर दिया है। इसलिए इख़राजात वज़ा कर के उश्र नहीं दिया जाएगा। बल्कि तमाम पैदावार का उश्र दिया जाएगा। (आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–312)

मस्अलाः इख़राजात को वज़ा नहीं किया जाएगा, बल्कि पूरी पैदावार का बीसवां हिस्सा अदा करना होगा। नीज़ बीज को भी इख़राजात में शुमार किया जाएगा।

(आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–411)

कटाई का ख़र्च और उश्र

सवालः ढाई एकड़ ज़मीन में सौ मन गेहूं पैदा हुआ, उस गंदुम की कटाई का ख़र्च तक़रीबन पांच मन होगा और थ्रेशर (गहाई) का ख़र्च तक़रीबन पंद्रह मन होगा। बचत आमदनी अस्सी मान हो गई। क्या उश्र सौ मन पर देना होगा या अस्सी मन पर?

जवाबः उश्र सौ मन पर होगा।

(आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–412)

मस्अलाः उश्र में मज़दूर की मज़दूरी और दीगर इख़राजात का हिसाब नहीं होता यानी मज़दूरों की मज़दूरी

वग़ैरा की वजह से उश्र में कमी न होगी। लिहाज़ा पैदावार का दसवां हिस्सा देना चाहिए।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–185 बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–2 सफ़्हा–69 बाबुलउश्र)

मस्अलाः उश्र तमाम पैदावार से निकाला जाएगा, बोने, काटने और हिफ़ाज़त करने, इसी तरह बैलों, मज़दूरों और कंपनियों वग़ैरा के इख़राजात उश्र निकालने के बाद अदा किए जाऐं।

(इमदाद मसाइले ज़कात सफ़्हा–89 व किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–1004)

मस्अलाः उश्र में महसूल सरकारी वग़ैरा कुछ वज़ा न होगा। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–180)

क्या खेत की क़ीमत पर ज़कात है?

मस्अलाः खेत की क़ीमत पर ज़कात नहीं है। (चाहे जितनी क़ीमत का हो) ज़मीन अगर उश्री है तो उसकी आमदनी पर यानी जिस क़दर ग़ल्ला उस ज़मीन में पैदा हो उस पर उश्र यानी दसवां हिस्सा वाजिब होता है। लेकिन अगर ज़मीन उश्री न हो तो कुछ वाजिब नहीं होता।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–57 बहवाला आलमगीरी मिस्री जिल्द–1 सफ़्हा–185)

मस्अलाः हौलाने हौल यानी माल पर पूरा साल गुज़र जाने की शर्त खेती और फलों के अलावा दूसरी अश्या के लिए है। खेती और फलों के लिए साल गुज़र जाने की शर्त नहीं है बल्कि हर फ़स्ल पर साल में जितनी भी हों उश्र होगा। (किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–964)

क्या सरकारी मालगुज़ारी अदा करने से उश्र अदा हो जाएगा?

मस्अला: उश्र ज़मीन का ज़कात की तरह एक माली इबादत है और उसका मसरफ़ भी यही है जो ज़कात का है। अगर कोई भी हुकूमत ख़्वाह मुस्लिम हो या ग़ैर मुस्लिम, अगर ज़मीनदारों या काश्तकारों से कोई सरकारी टेक्स वसूल करती है तो उस टैक्स की अदाएगी से उश्र अदा न होगा, बल्कि मुस्लिम मालिकान के ज़िम्मा वाजिब होगा कि वह बतौर ख़ुद उश्र निकालें और उसके मसरफ़ में ख़र्च करें और ये बिऐनिही ऐसा है जैसे हुकूमतों को इनकम टेक्स अदा करने से अमवाले तिजारत और नक़द की ज़कात अदा नहीं होती।

(जवाहिरुलफ़िक़्ह जिल्द–2 सफ़्हा–276, इमदादुलफ़तावा जिल्द–2 सफ़्हा–19 व फ़तवा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–182)

जिस ग़ल्ला का उश्र न निकाला वह हलाल है या हराम?

मस्अला: जिसने ग़ल्ला में दसवां हिस्सा ज़कात (उश्र) नहीं निकाली वह ग़ल्ला हलाल है। लेकिन वह शख़्स ज़मीन की ज़कात (उश्र) न देने से गुनाहगार और फ़ासिक़ हो जाएगा। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–180 व फ़तावा महमूदिया जिल्द–3 सफ़्हा–51)

जिन चीज़ों में उश्र वाजिब है?

मस्अला: अनाज, साग तरकारी, मेवा, फल, फूल वग़ैरा जो कुछ पैदा हो सब का यही हुक्म है यानी उश्र है। (फ़तावा आलमगीरी सफ़्हा–183)

मस्अला: उश्री ज़मीन या पहाड़ या जंगल में से अगर शहद निकला तो उसमें भी ये सदक़ा वाजिब है।

(दुर्रेमुख़्तार सफ़्हा–139)

मस्अला: तमाम अक़्साम की तरकारियों वग़ैरा में हज़रत इमाम अबूहनीफ़ा (रह.) के नज़दीक उश्र लाज़िम है, जैसे ख़रबूज़ा, तरबूज़, ख़्यारैन, (खीरा, ककड़ी) लहसुन, प्याज़, धनिया, तोरी, कद्दु, करैला, संगतरा वग़ैरा। (दुर्रेमुख़्तार)

ग़रज़ जो चीज़ें ज़मीन से पैदावार में हासिल होती हैं जैसे गेहूं, जौ, चना, चावल, मकई, जुवार, बाजरा, कपास और हर क़िस्म के दाने और तरकारियां, सब्ज़ियां, फूल, तर खजूरें, गन्ने, ककड़ी, खीरे, बैंगन और इसी क़िस्म की दूसरी चीज़ें ख़्वाह उनके फल बाक़ी रहें या न रहें।

मस्अला: एलसी के पेड़ों और बीजों में उश्र वाजिब है। इसी तरह अख़रोट, बादाम, ज़ीरा और धनिया में भी उश्र वाजिब है। इसी तरह मेथी, मटर, जवार, कंवारा वग़ैरा इनमें भी उश्र लाज़िम है।

(इमदाद मसाइले ज़कात सफ़्हा–85, बहवाला इस्लाम का मालियाती निज़ाम, व फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–170 व कुदूरी सफ़्हा–41)

मस्अला: उश्री ज़मीन में जो कुछ पैदा हो ख़्वाह ग़ल्ला, ख़्वाह नैशकर व चरी वग़ैरा ख़्वाह ख़शख़ाश या ख़्वाह तम्बाकू या और अदविया या फूल जो बग़रज़ नफ़ा बोए गए हों या उसमें बाग़ किसी क़िस्म के फल का हो, उन सब में भी ज़कात वाजिब है। इस ज़कात को उश्र कहते हैं। (इमदाद मसाइले ज़कात सफ़्हा–33)

मस्अला: जब फल क़ाबिले इत्मीनान हो जाए उस वक़्त के हिसाब से उश्र वाजिब है।

मस्अला: तैयारी से पहले जिस क़दर ख़र्च करेगा। उस सब का हिसाब याद रखे उसका भी उश्र देना पड़ेगा।

(इमदादुलफ़ताव जिल्द–2 सफ़्हा–69)

मस्अला: ये उश्र हर गूना ज़मीनी पैदावार पर वाजिब है। मसलन गंदुम, जौ, बाजरा, जुवार, नीज़ दूसरी क़िस्म के दाने, सब्ज़ियां, ख़ुशबूदार फूल गुलाब, गन्ना, ख़रबूज़ा, खीरा, ककड़ी, बैंगन, ज़ाफ़रान, खजूर और अंगूर वग़ैरा ख़्वाह वह फल देरपा हों या न हों, थोड़े हों या बहुत हों उनके लिए न निसाब की शर्त है और न साल गुज़र जाने की। पटसन, उसके बीज, अख़रोट, बादाम ज़ीरा और धनिया पर भी ज़कात है।

मस्अला: ऐसे दानों पर ज़कात नहीं है जिनको ज़राअत के काम में नहीं लाया जाता।

(किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–1004)

उश्र के चंद ज़रूरी मसाइल

अगर अपनी ज़मीन का उश्र बोने से पहले अदा कर दिया तो जाइज़ नहीं। और अगर बोने के बाद उगने से क़ब्ल अदा किया तब भी जाइज़ नहीं। और अगर फलों का उश्र फलों के ज़ाहिर होने से पहले अदा कर दिया तो जाइज़ नहीं। और अगर फलों के ज़ाहिर होने के बाद दिया तो जाइज़ है। (शामी)

मस्अला: अगर किसी ने अपनी ज़मीन को नक़द रुपये के ऐवज़ किराया (ठेका) पर दे दिया तो उसका उश्र ठेकादार के ज़िम्मा है जो ज़मीन काश्त कर के पैदावार हासिल करता है।

मस्अला: अगर ज़मीन दूसरे शख़्स को मुज़ारअत यानी बटाई पर दी है कि पैदावार में एक मुऐयन हिस्सा मालिके ज़मीन का और दूसरा मुऐयन हिस्सा काश्तकार

का, मसलन दोनों में निस्फ़ निस्फ़ हो या एक तिहाई और दो तिहाई हो, तो इस सूरत में उश्र दोनों पर अपने अपने हिस्से की पैदावार के मुताबिक़ लाज़िम होगा।

मस्अलाः अगर किसी ने ज़मीन तिजारत की नीयत से ख़रीदी और ज़मीन से पैदावार कर रहा है तो उसकी पैदावार पर उश्र वाजिब होगा। ज़काते तिजारत वाजिब नहीं होगी।

मस्अलाः मसाजिद, मदारिस और ख़ानक़ाहों पर वक़्फ़ शुदा ज़मीन की पैदावार में भी उश्र वाजिब होगा।

मस्अलाः अगर बादशाहे वक़्त या उसका नाइब उश्री ज़मीन का उश्र किसी शख़्स को मआफ़ कर दे तो न शरअ़न उसके लिए मआफ़ करना जाइज़ है और न मालिके ज़मीन के लिए ये उश्र अपने ख़र्च में लाना हलाल है, बल्कि उसके ज़िम्मा लाज़िम है कि ख़ुद मिक़्दारे उश्र निकाले और फ़ुक़रा व मसाकीन पर सदक़ा कर दे।

मस्अलाः अगर किसी ज़मीन की आबपाशी कुछ बारिश और कुछ कुवें वग़ैरा से हो तो उसमें अक्सर का एतेबार किया जाए, मसलन ज़्यादा बारानी हो तो दसवां हिस्सा और अगर कुंवे वग़ैरा से हो तो बीसवां हिस्सा और अगर दोनों तरीक़ों से बराबर हो तो आधी पैदावार का (1/10) हिस्सा और आधी पैदावार का (1/2) हिस्सा।

मस्अलाः गुज़श्ता ज़माना का उश्र अगर किसी के ज़िम्मा है। उसने अदा नहीं किया तो वह साक़ित नहीं होता बल्कि गुज़श्ता ज़माना का उश्र अदा करना वाजिब है। मरने लगे तो वसीयत वाजिब है।

मस्अलाः उश्र अदा करने से पहले जिस क़दर ग़ल्ला

इस्तेमाल करेगा या किसी को देगा, उजरत पर या बग़ैर उजरत उसके उश्र का ज़ामिन होगा। (दुर्रेमुख़्तार)

मस्अलाः उश्र (ज़कात) का जो हिस्सा अदा करना वाजिब होता है, अगर बजाए उस जिन्स के उसकी क़ीमत दे दी जाए तो भी जाइज़ है। (शामी) यानी उश्र व ख़िराज में पैदावार के बजाए क़ीमत देना जाइज़ है।

मस्अलाः अफ़यून के उश्र में उसकी क़ीमत भी दे देना जाइज़ है।

मस्अलाः ज़मीन उश्री की मालगुज़ारी अदा करने से उश्र साक़ित नहीं होता, जैसे इनकम टैक्स अदा करनें से ज़कात अदा नहीं होती। (इमदाद मसाइले ज़कात सफ़्हा–89 व फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–189 व बदाओ़ सनाओ़ जिल्द–2 सफ़्हा–56)

मस्अलाः अफ़यून माले मुतक़द्दम है और उसमें उश्र वाजिब है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–178)

मस्अलाः अगर किसी शख़्स ने अपनी ज़मीन में तम्बाकू बोया तो उसकी पैदावार में अगर ज़मीन उश्री है तो उश्र (दसवां हिस्सा) उसमें लाज़िम है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–179)

मस्अलाः अगर रिहाइशी प्लॉट को मुस्तक़िल बाग़ से तब्दील कर दिया तो उसमें उश्र या ख़िराज वाजिब होगा। अगर कोई उश्री ज़मीन उससे ज़्यादा क़रीब होगी तो उस पर उश्र होगा। और अगर ख़िराजी ज़मीन ज़्यादा क़रीब है तो उस पर ख़िराज होगा। और अगर उश्री व ख़िराजी दोनों क़िस्म की अराज़ी क़ुर्ब में बराबर हों तो उस बाग़ पर उश्र वाजिब होगा।

मस्अला: और अगर मकान रिहाइशी ही है मगर उसके सेहन में बाग़ लगा लिया तो उस पर उश्र या ख़िराज वाजिब नहीं है। (अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–357)

मस्अला: कपास, अनाज और सब्ज़ी तरकारी वग़ैरा हर किस्म की पैदावार पर उश्र है। मगर भूसा और सूखी चरी वग़ैरा यानी जिससे अनाज हासिल किया गया हो, उसमें उश्र नहीं है।

(अहसनुलफ़तावा जिल्द–6 सफ़्हा–344)

मस्अला: बाग़ के फल में उश्र वाजिब है। सोख़्ता (जलाने के क़ाबिल) लकड़ियों में उश्र नहीं है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–193 बहवाला हिदाया जिल्द–1 सफ़्हा–183)

ज़मीन फ़रोख़्त की तो उश्र व ख़िराज किस पर है?

मस्अला: अगर फ़ाज़िल ज़मीन ऐसे वक़्त फ़रोख़्त की कि साल ख़त्म होने में तीन माह या उससे ज़्यादा मुद्दत बाक़ी थी और बाऐ (बेचने वाले) ने उस साल में उस ज़मीन से कोई फ़स्ल न उठाई थी तो उसका ख़िराज ख़रीदने वाले पर है। और अगर बेचने वाल ने भी कोई फ़स्ल उठाई हो तो ख़िराज बाऐ और मुशतरी (ख़रीदने) दोनों पर तक़्सीम होगा। और अगर साल गुज़रने में तीन माह से कम मुद्दत बाक़ी थी तो पूरा ख़िराज बाऐ पर है। और अगर बेचने के वक़्त ज़मीन में फ़स्ल भी थी, फ़स्ल तैयार होने से पहले बेचने की सूरत में ख़िराज ख़रीदने वाले पर हे। बशर्तेकि बाऐ ने उस साल में कोई फ़स्ल न उठाई हो वरना ख़िराज दोनों पर तक़्सीम होगा और अगर फ़स्ल तैयार होने क बाद बेचे तो उसमें वही तफ़सील है

जो फ़ारिग़ ज़मीन की बैअ़ से मुतअल्लिक़ गुज़री है।

(अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–359)

मस्अला: उश्र ज़मीन को मअ़ उसकी तैयारिये फ़स्ल के मालिक ने फ़रोख़्त कर दिया या सिर्फ़ फ़स्ल बेची तो उश्र उस फ़रोख़्त कुनिन्दा पर वाजिब होगा। ख़रीदने वाले पर न होगा। और अगर सिर्फ़ ज़मीन फ़रोख़्त की और फ़स्ल अभी पुख़्ता नहीं हुई और उसी वक़्त ख़रीदने वाले ने ज़मीन से फ़स्ल की पैदावार को अलग कर दिया तो बेचने वाले पर उश्र वाजिब है। लेकिन अगर ख़रीदार ने फ़स्ल उस वक़्त जुदा नहीं की बल्कि बदस्तूर बाक़ी रखा और ज़मीन पर मअ़ उसकी पैदावार के क़ब्ज़ा कर लिया तो उस ख़रीदार पर उश्र वाजिब है।

(आलमगीरी जिल्द–4 सफ़्हा–37)

मस्अला: अगर खड़े ख़ेत को तैयार होने से पहले फ़रोख़्त कर दिया गया तो उसकी ज़कात ख़रीदार पर वाजिब होगी। और अगर दाना पक जाने के बाद बेचा तो उसका उश्र बेचने वाले के ज़िम्मा है।

(किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–1004)

मन्दरजा ज़ैल पैदावार में उश्र वाजिब नहीं है

मस्अला: ज़मीन की ऐसी पैदावार जिसकी मालियत मक़सूद नहीं जैसे नरसल मामूली, बेक़ीमत की लकड़ी और ख़ुदरौ घास, भूसा और खजूर के पत्ते, गोंद, ख़त्मी और रूई की ख़ाली डंडी और बैंगन की बेल, तरबूज़ और ख़रबूज़ के बीज और दवायें और धनिया के पत्ते वग़ैरा इनमें उश्र वाजिब नहीं है। क्योंकि इनकी मालियत मक़सूद नहीं है। हां अगर उनसे मालियत मक़सूद हो जैसा कि

आज कल के ज़मीनदार अपनी ज़मीन में नरसल, बांस वग़ैरा बड़ी हिफ़ाज़त से रखते हैं और ये उनके नज़दीक उस ज़मीन की पैदावार शुमार की जाती है, तो उसमें उश्र वाजिब होगा। (दुर्रेमुख़्तार)

मस्अलाः भूसा अगर दाना से उतारा जाए तो उसमें उश्र नहीं क्योंकि मक़सूदे पैदावार दाना है भूसा नहीं। (शामी)

मस्अलाः जो घांस ताबेअ़ हो कर किसी खेत में हो, उससे पैदावार मक़सूद नहीं तो उसमें उश्र लाज़िम नहीं होगा।

मस्अलाः गंदुम और जुवार वग़ैरा की सब्ज़ी जो ऊपर से काटी जाती है जिसको ख़ुवैद कहते हैं, अस्ल उसकी बदस्तूर रहती है जिससे फिर वह बहाल हो जाती है। इस सब्ज़ी में उश्र नहीं है।

मस्अलाः अगर किसी के घर में फलदार दरख़्त हो तो उसमें उश्र वाजिब नहीं होगा अगरचे वह बाग़ (घर में बाग़ीचा) हो, इसलिए कि वह घर के ताबेअ़ है। (शामी)

मस्अलाः हर पैदावार जो ज़मीन की मक़सूद आमदनी न हो जैसे लकड़ी, घांस, झाऊ, खजूर के पट्ठे, गोंद, लाख, राल और अदविया जैसे हलीला, कुन्दुर, अजवाइन, कलौंजी और भंग सनूबर, इनजीर वग़ैरा में उश्र वाजिब नहीं है।

"अगर किसी की मज़कूरा चीज़ों की काश्त से आमदनी मक़सूद हो तो क़ाएदा की रू से उन अश्या में भी उश्र वाजिब होगा।"

(मुहम्मद रफ़अ़त क़ासमी ग़ुफ़िरलहू)

मस्अलाः किसी ने अपने घर में तरकारी काश्त की या और कोई फलदार दरख़्त बोया और उसमें फल आया तो उसमें उश्र वाजिब नहीं।

(इमदाद मसाइले ज़कात सफ़्हा–85 बहवाला इस्लामी हुकूमत का मालियाती निज़ाम सफ़्हा–51)

मस्अलाः बाग़ के फल में उश्र वाजिब है। सोख़्ता यानी लकड़ियों में नहीं है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–193 बहवाला हिदाया जिल्द–1 सफ़्हा–183)

क्या उश्र की रक़म पर ज़कात है?

सवालः बाग़ बेचने के एक माह बाद किसी ने अपनी सालाना ज़कात निकाली, तो क्या उस बाग़ की रक़म पर जिसका उसने उश्र दे दिया है ज़कात आएगी या नहीं?

जवाबः उस रक़म पर भी ज़कात आएगी। जब दूसरी रक़म की ज़कात दे तो उसके साथ उसकी भी दे।

(आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–409)

नोटः हुकूमत जो (बाज़ जगह) फ़ी एकड़ के हिसाब से उश्र वसूल करती है ये सही नहीं। होना ये चाहिए कि जितनी पैदावार हो उसका दसवां या बीसवां हिस्सा लिया जाए। पूरे एलाक़ा के लिए उश्र का फ़ी एकड़ रेट मुक़र्रर कर देना ग़लत है। (आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–410)

उश्र अदा करने के बाद जो ग़ल्ला फ़रोख़्त किया उसका हुक्म

सवालः फ़स्ल से बरवक़्त उश्र निकाला है। ग़ल्ला साल भर रखा रहा, यानी न अपनी किसी ज़रूरत में इस्तेमाल हुआ है न फ़रोख़्त किया, तो क्या साल गुज़रने पर उसमें उश्र दिया जाएगा?

जवाबः एक बार उश्र अदा कर देने के बाद जब तक उसको फ़रोख़्त नहीं किया जाता। उस पर न दोबारा उश्र है, न ज़कात। और जब उश्र अदा करने के बाद ग़ल्ला फ़रोख़्त कर दिया तो उससे हासिल शुदा रक़म पर ज़कात उस वक़्त वाजिब होगी जब उस पर साल गुज़र जाएगा। या अगर ये शख़्स पहले से साहबे निसाब है तो जब उसके निसाब पर साल पूरा होगा, उस वक़्त उस रक़म की भी ज़कात अदा करेगा।

(आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–410 व फ़तावा महमूदिया जिल्द–3 सफ़्हा–100)

बाग़ बेचने पर उश्र कौन दे?

सवालः एक शख़्स ने अपना बाग़ क़ाबिले नफ़ा होने के बाद बेच दिया तो क्या वह उश्र दे? या ख़रीदने वाले पर उश्र आएगा?

जवाबः इस सूरत में ख़रीदने वाले पर उश्र नहीं। बल्कि बाग़ के फ़रोख़्त करने वाले पर उश्र है।

(आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–411)

जिन सूरतों में उश्र साक़ित हो जाता है

मस्अलाः अगर पैदावार मालिक के इख़्तियार के बग़ैर हलाक हो जाए, तो उश्र साक़ित हो जाएगा। और अगर कुछ हिस्सा हलाक हो जाए तो हलाक शुदा का उश्र साक़ित हो जाएगा। बाक़ी का देना वाजिब होगा।

(बहरुर्राइक़)

मस्अलाः अगर मालिक पैदावार को हलाक कर दे तो हलाक शुदा पैदावार के उश्र का ज़ामन होगा और वह उसके ज़िम्मा क़र्ज़ हो जाएगा। और अगर मालिक के

अलावा किसी दूसरे शख़्स ने पैदावार को हलाक कर दिया तो मालिक उससे ज़मान ले कर उसमें उश्र अदा करेगा। (बहरुर्राइक़)

मस्अलाः जिस शख़्स के ज़िम्मा उश्र हो, उसकी मौत से वह साक़ित नहीं होता, बल्कि उसके मतरूका ग़ल्ला में से वूसल किया जाएगा। (शामी)

मस्अलाः अगर किसी शख़्स ने बावजूद ताक़त के ज़राअ़त नहीं की तो उस पर उश्र वाजिब न होगा।

(दुर्रेमुख़्तार व इमदाद मसाइलुज़्ज़कात सफ़्हा–89 बहवाला इस्लामी हुकूमत का मालियाती निज़ाम सफ़्हा–51 व फ़तावा आलमगीरी जिल्द–4 सफ़्हा–34)

मस्अलाः उश्र और ख़िराज जमा नहीं होता, उश्री ज़मीन से अगर हुक्काम ने ख़िराज ले लिया तो माबैनहू व बैनल्लाह उस शख़्स को उश्र दे देना चाहिए और ये एहतियात है और ये अम्रे मुहक़्क़क़ है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–171)

मस्अलाः अगर उश्री ज़मीन की फ़स्ल कटने से या फल तोड़ने से पहले या उसके बाद ज़ाए हो गई या चोरी हो गई तो उश्र साक़ित हो जाएगा।

(अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–354)

"जितनी फ़स्ल बाक़ी बचे उसमें उश्र देना होगा।" (मुहम्मद रफ़अ़त क़ासमी ग़ुफ़िरलहू)

मस्अलाः ऐसा मिस्कीन जो ख़ुद उश्र का मसरफ़ है, उस पर उश्र निकालना वाजिब नहीं।

(अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–364 व इमदादुलफ़तावा जिल्द–2 सफ़्हा–69)

उश्र की रक़म का मसरफ़ क्या है?

उश्र के मसारिफ़ वही हैं जो ज़कात के हैं, और जिस तरह ज़कात के लिए यह ज़रूरी है कि किसी मुस्तहिक़्क़े ज़कात को बग़ैर किसी मुआवज़ा के मालिकाना तौर पर क़ब्ज़ा करा दिया जाए उसी तरह उश्र की अदाएगी का भी यही तरीक़ा है। (इमदादं मसाइलुज़्ज़कात सफ़्हा–90)

मस्अला: ज़कात और उश्र की रक़म सिर्फ़ फ़ुक़रा व मसाकीन को दी जा सकती है। उसको रिफ़ाहे आम्मा पर ख़र्च करना जाइज़ नहीं है। (आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–412 व फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–169 बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–1 सफ़्हा–79)

क्या वक़्ते ज़रूरत ज़कात में तब्दीली हो सकती है?

सवाल: इस्लाम के आग़ाज़ में ज़कात की मुक़र्ररा मिक़्दार (ढाई फ़ीसद) जदीद मुआशरे की ज़रूरीयात के लिए नाकाफ़ी है। क्योंकि आज के इक़्तिसादी हालात में बड़े इंक़िलाब आ चुके हैं। अब इस मस्अले पर नए सिरे से ग़ौर की ज़रूरत है और इस शरह में इज़ाफ़ा करना चाहिए?

जवाब: ये राए दर्ज ज़ैल दलाइल की वजह से ग़लत है। (1) ये राए (मौजूदा शरहे ज़कात में इज़ाफ़ा) रसूलुल्लाह (स.अ.व.) से साबित शुदा सही अहादीस और ख़ुलफ़ाए राशिदीन (रज़ि.) की सुन्नत के बरख़िलाफ़ है और हमें हुक्म दिया गया है कि हम सुन्नते नबवी (स.अ.व.) और सुन्नते सहाबा (रज़ि.) को मज़बूती से थामें रखें और उसकी मुख़ालफ़त से डरें। इसलिए कि अल्लाह तआला का इरशाद है कि– "فَلْيَحْذَرِ الَّذِيْنَ يُخَالِفُوْنَ عَنْ اَمْرِهٖ اَنْ تُصِيْبَهُمْ فِتْنَةٌ اَوْ يُصِيْبَهُمْ عَذَابٌ اَلِيْمٌ" (سورۂ نور، پ ١٨) "रसूल

(स.अ.व.) की ख़िलाफ़ वरज़ी करने वालों को डरना चाहिए कि वह किसी फ़ितना में गिरफ़्तार न हो जायें या उन पर दर्दनाक अज़ाब न आ जाए।"

(2) ये राए उम्मते इस्लामिया के इजमाअ़ के बरख़िलाफ़ है और चौदह सौ साल से हर तरह के इक़्तिसादी तग़ैय्युरात और सियासी इख़्तिलाफ़ात के बावजूद ये इजमाअ़ चला आ रहा है और मुख़्तलिफ़ अदवार में उम्मते मुस्लिमा दाख़िली और ख़ारिजी मसाइब से दोचार हो चुकी है और उमरा के दौर में कई मरतबा ख़ज़ाने ख़ाली हो चुके हैं और उम्मत को शदीद माली दुश्वारियां पेश आ चुकी हैं। मगर इन सब बातों के बावजूद कभी किसी फ़क़ीह (रह.) ने ये नहीं कहा कि शरहे ज़कात में इज़ाफ़ा जाइज़ है।

(3) इस इजमाअ़ की ताईद इस अम्र से होती है कि फ़ुक़हाए किराम (रह.) के दरमियान अह्दे क़दीम से ये इख़्तिलाफ़ मौजूद है कि क्या अलावा ज़कात के भी इस्लामी हुकूमत और हक़ वसूल कर सकती है? अगर ज़कात की मुक़र्ररा शरह साबित और नाक़ाबिले तग़ैय्युर न होती तो इस इख़्तिलाफ़ की कोई वजह नहीं थी। इस इख़्तिलाफ़ से तो यही पता चलता है कि ज़कात की मुक़र्ररा शरह साबित और ग़ैर मुतग़ैयर है और इसीलिए ये सवाल पैदा हुआ कि इसके अलावा कोई और हक़ (टैक्स) आएद किया जा सकता है या नहीं?

(4) फ़ुक़हा में सब से ज़्यादा क़यास का इस्तेमाल फ़ुक़हाए अहनाफ़ (रह.) के यहां है, मगर वह भी कहते हैं कि मिक़्दारों के बारे में क़यास मुअस्सिर नहीं है, क्योंकि तक़दीर (किसी चीज़ की मिक़्दार का ब्यान) और तहदीद

(किसी शै की हुदूद मुक़र्रर करना) सिर्फ़ शारेअ़ का हक़ है जो आप (स.अ.व.) ने मुकर्रर कर दी है। जब मिक्दारों की तअयीन में क़यास मुअस्सिर ही नहीं है तो नस्स और इजमाअ़ से साबित शुदा मिक्दारें क़यास से क्यों कर तब्दील हो सकती हैं?

(5) ज़कात के तमाम पहलुओं में ये पहलू सब से अहम है कि वह एक दीनी फ़रीज़ा है और दीनी फ़राइज़ में साबित हमेशगी और यक्ताई हुआ करती है। ज़कात बिलइजमाअ़ अरकाने इस्लाम में से एक रुक्न और अज़ीम बुनियादों में से एक अहम असास है। अगर इज्तिमाई हालात और इक़्तिसादी तग़ैयुरात के तहत इसकी मिक़्दारों में तग़ैयुर व तबद्दुल किया जाता रहा तो इसमें सिबात, हमेशगी और यक्ताई की सिफ़त बाक़ी नहीं रह सकती। अगर ऐसा हुआ तो ज़कात हुक्मरानों की ख़्वाहिश की भेंट चढ़ जाएगी और कोई हुकूमत उसे मुस्तज़ाद टैक्स बना देगी। हालांकि शरीअ़त का मनशा ये है कि हर दौर और हर ज़माने में और हर जगह हर मक़ाम पर इस्लामी फ़राइज़ मुसलमानों में एक और यकसां रहें और यही दरहक़ीक़त उम्मते मुस्लिमा की बिनाए वहदत है।

(6) फिर जिस शैय में ज़्यादती हो सकती है उसमें कमी भी की जा सकती है और बिलकुल्लिया ख़त्म भी की जा सकती है। इसलिए अगर किसी क़ौम के पास मआ़शी फ़रावानी का दौर आ जाए और या हुकूमत के पास दौलत की आमद के ज़रख़ेज़ ज़राए मौजूद हों, मसलन तेल की दौलत से मुल्क माला माल हो गया। ऐसी सूरत में वह शख़्स जो आज ज़्यादती का मुतालबा कर रहा है।

वह कुल शरहे ज़कात में कमी करने या बिलकुल्लिया ख़त्म कर देने का मुतालबा नहीं करेगा? और इस तरह ज़कात की मानवीयत व हक़ीक़त और उसके गैर मुतग़ैयर इबादत होने की हैसियत और अबदी इस्लामी शिआर होने की कैफ़ियत पामाल हो जाएगी, और ज़कात जो एक इस्लामी इबादत है हुक्मरानों के हाथों में खिलौना बन कर रह जाएगी।

(7) अगर एक मरतबा इस्लामी अरकान में रद्दोबदल का दरवाज़ा खुल गया और अहकामे शरई में तग़ैयुर व तबद्दुल किया जाने लगा तो इससे तमाम अहकाम में तग़ैयुर और तब्दीली की जाने लगेगी। और जहां तक असरी, इजतिमाई ज़रूरीयात की किफ़ालत का तअ़ल्लुक़ है और एक दौरे जदीद की हुकूमत के ज़रूरी मसारिफ़ के पूरा करने का तअ़ल्लुक़ है तो इसके लिए अलावा ज़कात के और टैक्स भी आएद किए जा सकते हैं।

(फ़िक़्हुज़्ज़कात अज़ जिल्द–1 सफ़्हा–329 ता 331)

क्या मिक़्दारे निसाब हमेशा के लिए है?

हक़ तआ़ला के नज़दीक मुतऐयन है, ये नहीं कि जिसका जी चाहे जब चाहे इस (ज़कात) में कमी व बेशी कर दे। अल्लाह तआ़ला ने इस मुऐयन हक़ की मिक़्दार भी बतलाने का काम रसूले करीम (स.अ.व.) के सिपुर्द फ़रमाया और इसीलिए आप (स.अ.व.) ने उसका इस क़दर एहतेमाम फ़रमाया कि सहाबए किराम (रज़ि.) को सिर्फ़ ज़बानी बतला देने पर किफ़ायत नहीं फ़रमाई, बल्कि इस मआमला के मुतअ़ल्लिक़ मुफ़स्सल फ़रमान लिखवा कर हज़रत फ़ारूक़े आज़म (रज़ि.) और अमर बिन हिज़ाम (रज़ि.)

के सिपुर्द फ़रमाए जिससे वाज़ेह तौर पर साबित हो गया कि ज़कात के निसाब और हर निसाब में से मिक़्दारे ज़कात हमेशा के लिए अल्लाह तआला ने अपने रसूल (स.अ.व.) के वास्ता से मुतअैयन कर के बतला दिए हैं। इसमें किसी ज़माना और किसी मुल्क में किसी को कमी बेशी या तग़ैयुर व तबद्दुल का कोई हक़ नहीं है।

(मआरिफुलकुरआन जिल्द–4 सफ़्हा–394)

शरीअत का अस्ल मंशा क्या है?

शरीअत में अह्ले दौलत को जो ख़र्च करने की तरग़ीब दी गई है उसमें कोई तहदीद नहीं है बल्कि अपनी ज़रूरीयात से जो फ़ाज़िल माल है जिसके बग़ैर उनके काम बंद न हों वह सब ज़रूरतमंदों पर ख़र्च कर देना अस्ल मंशाऐ शरीअत है, लेकिन ज़ाहिर है इसकी हिम्मत हर एक नहीं कर सकता था। इसलिए इसको लाज़मी तो नहीं क़रार दिया, लेकिन पसंद उसी को किया है और तरग़ीब भी इसी की दी कि जितना माल अपनी ज़रूरीयात से ज़ाएद हो वह सब राहे ख़ुदा में ख़र्च कर दो।

"يسئلونک مَاذَا يُنۡفِقُوۡنَ ط قُلِ الۡعَفۡوَ"

(سورۂ بقرہ پارہ–۱ آیت–۲۱۹، ترغیب جلد–۱ صفحہ–۱۷۰)

"इससे मालूम हुआ कि ज़कात की मिक़्दार व तअैयुन वग़ैरा में कोई तग़ैयुर नहीं होगा, इस पर उम्मत का इजमाअ है, हाँ जो इज़ाफ़ा के ख़्वाहिशमंद हैं वह इस आयत पर अमल करें कि जो ज़रूरते अस्लीया से ज़ाएद हो, वह सब राहे ख़ुदा में दे कर सवाब हासिल करें।" (मुहम्मद रफ़अत क़ासमी गुफ़िरलहू)

फ़लाही इदारे में ज़कात देना कैसा है?

सवालः कोई "खिदमती इदारा" या कोई वक़्फ़ ट्रस्ट या फ़ाउंडेशन" को ज़कात देने से क्या ज़कात अदा हो जाती है?

जवाबः जो फ़लाही इदारे ज़कात जमा करते हैं। वह ज़कात की रक़म के मालिक नहीं होते। बल्कि ज़कात दिहिन्दगान के वकील और नुमाइंदे होते हैं। जबकि उनके पास ज़कात का पैसा जमा रहेगा वह बदस्तूर ज़कात दिहिन्दगान की मिल्क होगा। अगर वह सही मसरफ़ पर ख़र्च करेंगे तो ज़कात दिहिन्दगान की ज़कात अदा होगी वरना नहीं। (आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–406)

मस्अलाः जिन इदारों और तंज़ीमों के बारे में पूरा इत्मीनान हो कि वह ज़कात की रक़म को ठीक तरीक़ा से सही मसरफ़ में ख़र्च करते हैं, उनको ज़कात देनी चाहिए, और जिन के बारे में ये इत्मीनान न हो, उनको दी गई ज़कात अदा नहीं होगी। ज़कात देने वालों को चाहिए कि अपनी ज़कात दोबारा अदा करें।

(आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–403)

मस्अलाः ये इदारे उस ज़कात की रक़म में मालिकाना तसर्रुफ़ करने के मजाज़ नहीं, बल्कि सिर्फ़ फ़ुक़रा और मुहताजों (ज़रूरतमंदों) को बांटने के मजाज़ हैं। इसलिए उस रक़म को किसी को क़र्ज़ पर देने के मजाज़ नहीं, अलबत्ता अगर मालिकान की तरफ़ से इजाज़त हो तो दुरुस्त है। (आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–406)

दीनी मदारिस को ज़कात देना कैसा है?

मस्अलाः मदारिसे अरबीया में ज़कात देना जाइज़ ही

नहीं बल्कि बेहतर है, क्योंकि गुरबा व मसाकीन की इआनत के साथ ही साथ उलूमे दीनीया की सरपरस्ती भी होती है।

(आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़हा–404 व फ़तावा महमूदिया जिल्द–3 सफ़हा–40)

अंजुमनों या तंज़ीमों को ज़कात देना कैसा है?

मस्अलाः ज़कात में फुक़रा को मालिक बनाना ज़रूरी है बग़ैर इसके ज़कात अदा नहीं होती। पस अगर अंजुमन में तलबा मुहताज हों तो उनको ज़कात देना दुरुस्त है। और मुलाज़िमीने अंजुमन और वाइज़ीन की तन्ख़्वाह में ज़कात देना दुरुस्त नहीं है। इसमें बहुत एहतियात करनी चाहिए। ज़कात का माल ख़ास मुहताजों की मिल्क में बिला किसी एवज़ के देना चाहिए। अंजुमन के मुख़्तलिफ़ इख़राजात में ज़कात का माल ख़र्च करने से ज़कात अदा न होगी और मदारिसे इस्लामिया में जो ज़कात का रुपया आता है वह भी ख़ास तलबा व मसाकीन की ख़ूराक व पौशाक में सर्फ़ होता है। किसी मुदर्रिस व मुलाज़िम की तन्ख़्वाह में देना या तामीर वग़ैरा में सर्फ़ करना दुरुस्त नहीं है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–234 बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–85 बाबुलग़नम)

मस्अलाः ऐसी अंजुमन या इदारा क़ाएम करना जिसमें ज़कात का माल मसाकीन वग़ैरा पर सर्फ़ होता हो दुरुस्त है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–338)

ज़कात की तक़सीम ग़ैर मुस्लिम से कराना कैसा है?

मस्अलाः ज़कात की तक़सीम का काम ग़ैर मुस्लिम के सिपुर्द करना जाइज़ नहीं। इसमें मुसलमानों की तौहीन

लाज़िम आती है और एक ग़ैर मुस्लिम की सरदारी मुसलमानों पर होगी। और ज़कात की रक़म का ग़लत इस्तेमाल होगा। और ज़कात दिहिन्दगान की ज़कात अदा न होगी। और उसके ज़िम्मादार अंजुमन के मुन्तज़िमीन होंगे।

"यानी जो शख़्स भी ये ज़कात की तक़्सीम का काम ग़ैर मुस्लिम को देगा वही ज़िम्मादार होगा।" (मुहम्मद रफ़अत क़ासमी)

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–5 सफ़्हा–158)

मस्अला: किसी काफ़िर या फ़ासिक़ या मसाइले ज़कात से नावाक़िफ़ शख़्स को इस काम पर मामूर न किया जाए। यानी ज़कता की तक़्सीम न कराई जाए।

(किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–1016 व फ़िक़्हुज़्ज़कात जिल्द–2 सफ़्हा–394)

ज़कात में माल दिया जाए या उसकी क़ीमत?

मस्अला: ज़कात देने में इख़्तियार है ख़्वाह वह चीज़ दी जाए जिस पर ज़कात वाजिब हुई है, या उसकी क़ीमत दे दी जाए और क़ीमत उसी ज़माने की मोतबर होगी जिस ज़माने में ज़कात देना चाहता है, ख़्वाह वह ज़मानए वजूब के एतेबार से उस वक़्त उस चीज़ की क़ीमत ज़्यादा हो या कम हो, मसलन आख़िर साल में जब ज़कात फ़र्ज़ हुई थी, एक बकरी की क़ीमत तीन सौ रुपये थी और अदा करते वक़्त चार सौ रुपये हो जाए या दो सौ रुपये हो जाए तो उसको चार सौ रुपये या दो सौ रुपये देने होंगे। (इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–4 सफ़्हा–29)

ज़कात में कैसा माल दिया जाए?

सवाल: अगर कुल माल उमदा है तो ज़कात में उमदा

माल देना चाहिए और अगर सब माल ख़राब है तो ख़राब माल दिया जाए। और अगर कुछ माल उमदा है और कुछ ख़राब है तो ज़कात में मुतवस्सित दर्जा का माल देना चाहिए?

जवाबः अगर अदना दर्जा की चीज़ दी और उसमें जिस क़दर कमी हो, उसके बदले में कुछ क़ीमत दी जाए या आला दर्जा की चीज़ दी जाए और उसमें जिस क़दर ज़्यादती है उसकी क़ीमत वापस ले ली जाए तो जाइज़ है। (इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–4 सफ़्हा–30)

ज़कात में किस क़ीमत का एतेबार है?

सवालः मैं चांदी को लेकर दुकान पर जाऊँ तो उसको आधी क़ीमत के हिसाब से ख़रीदेंगे और अगर लेने जाऊँ तो अस्ल भाव में देंगे। तो अब किस हिसाब से ज़कात देंगे?

जवाबः हामिदन व मुसलियन। अगर ज़कात में आप चांदी व सोना नहीं देते, बल्कि उसकी क़ीमत देते हैं तो जिस क़ीमत पर वह बाज़ार में फ़रोख़्त होगी उस क़ीमत का एतेबार होगा। (फ़तावा महमूदिया जिल्द–13 सफ़्हा–96)

क्या हुकूमत ज़कात काट सकती है?

मस्अलाः बैंकों से हुकूमत की कटौती, ज़कात का मौजूदा तरीक़एकार क़ाबिले इस्लाह है। मालिकान की ज़कात इस तरह पर अदा हो जाना निहायत मशकूक है। इसलिए फ़रीज़ए ज़कात से यक़ीनन सुबुकदोश होने के लिए अपनी ज़कात ख़ुद अदा कर दिया करें।

(इमदाद मसाइले ज़कात सफ़्हा–90)

इस्तेमाल शुदा चीज़ ज़कात में देना कैसा है?

सवालः एक शख़्स एक चीज़ छः माह इस्तेमाल करने

के बाद वही चीज़ अपने दिल में ज़कात की नीयत कर के आधी कीमत पर बग़ैर बताए मुस्तहिक़्क़े ज़कात को दे देता है तो क्या ज़कात अदा हो जाएगी?

जवाब: अगर बाज़ार में वह चीज़ फ़रोख़्त की जाए और उतनी कीमत (जितनी साहबे निसाब ने लगाई) मिल जाए तो ज़कात अदा हो जाएगी।

(आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–382)

न फ़रोख़्त होने वाली चीज़ ज़कात में देना कैसा है?

सवाल: एक दुकानदार से एक चीज़ नहीं बिकती। क्या वह चीज़ ज़कात में दी जा सकती है?

जवाब: रद्दी, ख़राब चीज़ ज़कात में देना इख़लास के ख़िलाफ़ है। ताहम उस चीज़ की जितनी मालियत बाज़ार में हो उसके देने से उतनी ज़कात अदा हो जाएगी।

(आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–382)

रद्दी (ख़राब) चीज़ ज़कात में देना कैसा है?

मस्अला: बाज़ लोग ज़कात में ऐसी चीज़ देते हैं जो रद्दी और नाकारा हो, मसलन ताजिराने कुतुब ऐसी किताबें दें जिनकी निकासी न होती हो। इसी तरह ताजिरे पारचा पुराने थान निकाले, ताजिरे ग़ल्ला पुराना न बिकने वाला अनाज निकाले, इसी तरह हर ताजिर, तो जिस हिसाब में उसने ये चीज़ें लगाई हैं अगर बाज़ार (मार्किट) में उतने की न निकल (फ़रोख़्त हो) सके तब तो ज़कात ही अदा नहीं हुई, बक़द्रे कमी क़ीमत उसके ज़िम्मा रह गई। और अगर उतनी क़ीमत की है तो ज़कात अदा हो गई मगर बक़द्रे कमी ख़ुलूस के मक़बूलियत में कमी रही।

(इमदाद मसाइले ज़कात सफ़्हा–42 व किताबुलफ़िक़्ह

जिल्द–1 सफ़्हा–973)

ज़कात अदा करने से पहले उस रक़म का ख़ुद इस्तेमाल करना?

सवाल: एक शख़्स ने ज़कात की रक़म देने के लिए निकाली, लेकिन ऐन वक़्त पर उसे कुछ रक़म की ज़रूरत पड़ गई तो क्या वह ज़कात की रक़म से बतौरे क़र्ज़ ले सकता है?

जवाब: ज़कात की रक़म तो उसकी मिलकियत है। जब तक कि किसी को अदा नहीं कर देता। इसलिए उसका इस्तेमला करना सही है।

(आप के मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–414 व फ़तावा महमूदिया जिल्द–11 सफ़्हा–142)

मस्अला: जब तक वह रुपया जो ज़कात की नीयत से अलाहिदा रख दिया है फ़ुक़रा व मसाकीन को न दे दिया जाए और उनको मालिक न बनाया जाए उस वक़्त तक वह रुपया साहबे निसाब ही की मिल्क है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–218 व शामी जिल्द–2 सफ़्हा–14)

सूद की रक़म से ज़कात अदा करना कैसा है?

मस्अला: सूद की रक़म सदक़ा की नीयत से किसी को नहीं देनी चाहिए। बल्कि सवाब की नीयत किए बग़ैर किसी मुहताज को दे देनी चाहिए, सदक़ा तो पाक चीज़ का दिया जाता है। सूद का नहीं, पस सूद की रक़म से ज़कात अदा नहीं की जा सकती।

(आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–414 व अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–284)

ज़कात में किस करेंसी का एतेबार है?

सवालः अपने मुल्क के मुस्तहिक़्क़ीन को ज़कात की रक़म भेजना चाहते हैं लेकिन वहां की करेंसी और हमारी करेंसी (सिक्का, नोट) में फ़र्क़ है। मसलन यहां से 50,000 रुपये भेजेंगे तो उनको 40,000 रुपये मिलेंगे। मालूम ये करना है कि ज़कात 50,000 रुपये की अदा होगी या 40,000 रुपये की अदा होगी क्योंकि वहां के और यहां के दाम में यही फ़र्क़ चलता है। इसी तरह अगर हम अपने वतन में ज़कात भेजें जहां की करेंसी की क़ीमत यहां की करेंसी से कम हो?

जवाबः ज़कात दिहिन्दा ने जिस मुल्क की करेंसी से ज़कात अदा की है वहां की करेंसी का एतेबार होगा। उस मुल्क की करेंसी से जितने माल की ज़कात अदा की उतने माल की ज़कात शुमार होगी। दूसरे मुल्क की करेंसी ख़्वाह कम हो या ज़्यादा। दूसरे अलफ़ाज़ में यूं समझ लीजिए कि जो रक़म किसी मुहताज या मुहताजों को दी गई है वह ज़कात अदा करने वाले के माल का चालीसवां हिस्सा होना चाहिए, जिस करेंसी में ज़कात अदा की गई हो, उस करेंसी के हिसाब से चालीसवां हिस्से का एतेबार होगा।

(आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–413)

ग़ैर मुल्की सिक्का से अदाए ज़कात का तरीक़ा

मस्अलाः हामिदन मुसल्लियन। अदाए ज़कात के लिए जरूरी है कि मिक़्दारे वाजिब मुस्तहिक़्क़ीन के पास पहुंच जाए और उस पहुंचाने में जो कुछ ख़र्च होगा उसका मुतहम्मिल ख़ुद मुज़क्की होगा। यानी ज़कात देने वाला

ख़र्चा बरदाश्त करेगा। ज़कात की रक़म से उसका वज़अ करना दुरुस्त नहीं है, वरना मिक्दारे वाजिब में नुक़्सान (कमी) रह जाएगा और ज़कात पूरी अदा नहीं होगी। जो हुक्म फ़ीस मनी आर्डर का है वही हुक्म इसका है।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–12 सफ़्हा–141)

पेशगी ज़कात अदा करना कैसा है?

मस्अला: साहबे निसाब हो जाने से ज़कात का निफ़्स वजूब आ जाता है और हौलाने हौल यानी एक साल पूरा होने के बाद वजूब अदा यानी ज़कात अदा करना लाज़िम होता है, अगर कोई वजूबे अदा ऐ पहले ज़कात अदा करे तो ज़कात अदा हो जाएगी। बाद में अदा करना ज़रूरी नहीं। (फ़तावा रहीमिया जिल्द–5 सफ़्हा–159 बहवाला मराक़ियुलफ़लाह जिल्द–1 सफ़्हा–415 दुर्रेमुख़्तार मअ शामी जिल्द–6 सफ़्हा–36 व फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–245 व फ़िक़्हुज़्ज़कात जिल्द–2 सफ़्हा–265)

पेशगी ज़कात देने की तफ़्सील

मस्अला: मालिके निसाब होने के बाद साल गुज़रने से पहले ज़कात देना जाइज़ है। हां निसाब पूरा होने से पहले देना दुरुस्त नहीं।

पेशगी ज़कात देने के लिए तीन शर्तों का लिहाज़ ज़रूरी है। पहली शर्त ये है कि पेशगी ज़कात निकालते वक़्त निसाब का साल शुरू हो गया हो। दूसरी शर्त ये है कि जिस निसाब की ज़कात दी जा रही है वह इख़्तितामे साल पर नाक़िस न हो जाए। तीसरी शर्त ये है कि दरमियानी साल में अस्ल निसाब ज़ाए न हो, उसकी सूरत ये है कि एक शख़्स के पास सोना चांदी या तिजारती माल का

निसाब दो सौ दिरहम (साढ़े बावन तोला चांदी) से कुछ कम मिक़्दार में मौजूद है मगर उस शख़्स ने उसकी ज़कात पेशगी दे दी और निसाब बाद में पूरा हुआ, या ये सूरत हुई कि नक़्द दो सौ दिरहम या दो सौ दिरहम का तिजारती माल मौजूद था। उस शख़्स ने ज़कात के पांच दिरहम ख़ैरात कर दिए और उन पांच दिरहम के निकल जाने की वजह से निसाब पूरा न रहा और उसी नाक़िस निसाब पर साल भर गुज़र गया।

या ये सूरत हुई कि पेशगी देने के वक़्त निसाब तो पूरा था मगर बाद में साल पूरा होने से पेशतर ये पूरा निसाब ज़ाए हो गया तो अब जो रक़म ज़कात के तौर पर दी थी वह सदक़ा शुमार होगी। (तहतावी)

जिस तरह एक निसाब की पेशगी ज़कात देना जाइज़ है। उसी तरह मुतअद्दद निसाब अगर हों तो उनकी ज़कात भी पेशगी अदा की जा सकती है। (फ़तावा क़ाजी ख़ाँ)

मस्अला: एक शख़्स के पास दो सौ दिरहम हैं मगर उसने पेशगी हज़ार दिरहम की ज़कात दे डाली तो अब (साल के अन्दर अन्दर) उसके पास मज़ीद कुछ माल आ गया या उसी मौजूदा सरमाए से उसने इतना नफ़ा कमा लिया तो जब साल पूरा हुआ तो उसके पास हज़ार रुपये थे। इस सूरत में पेशगी ज़कात दुरुस्त होगी और उसके ज़िम्मे से हज़ार रुपये की ज़कात साक़ित हो जाएगी। हां अगर ये सूरत हुई कि पेशगी ज़कात देने के बाद साल पूरा हो गया और दौराने साल में उसके पास कोई माल न आया, बल्कि साल गुज़रने के बाद उसे कोई मज़ीद सरमाया बहम पहुंचा तो अब ये हज़ार रुपये की पेशगी

ज़कात काफ़ी न होगी। नया माल हासिल होने के बाद उस पर साल भर गुज़र जाए तो उसकी ज़कात वाजिब होगी। (बहरुर्राइक़)

चूंकि सबबे ज़कात मौजूद है इसलिए एक साल से ज़्यादा की भी पेशगी ज़कात देना जाइज़ है। (हिदाया)

मस्अलाः अगर दो हज़ार की ज़कात दी और उसके पास हज़ार दिरहम मौजूद हैं और नीयत ये की कि अगर एक हज़ार दिरहम और (इस साल में) मेरे पास आ जाऐं तो ये उसकी पेशगी ज़कात है वरना इसी एक हज़ार की अगले साल की ज़कात हो जाएगी तो ये नीयत दुरुस्त होगी।

मस्अलाः एक शख़्स के पास चार सौ दिरहम हैं मगर उसको ये ख़्याल है कि पांच सौ दिरहम हैं और उसने पांच सौ दिरहम ही की ज़कात दे दी। फिर उसको पता चला तो उसके लिए गुंजाइश है कि वह ज़कात की ज़ाएद दी हुई रक़म को साले आइंदा में शुमार कर ले।

(मुहीत अस्सुरख़्सी व फ़तावा आलमगीरी जिल्द–4 सफ़्हा–15)

मस्अलाः अगर कोई शख़्स अपने माल की ज़कात साल ख़त्म होने से पहले या कई साल की पेशगी दे दे तो जाइज़ है। इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–4 सफ़्हा–31)

जिस ग़रीब को पेशगी ज़कात दी, अगर वह मालदार हो गया या मर गया?

मस्अलाः अगर किसी मुहताज को पेशगी ज़कात दे दी थी और साल पूरा होने से पहले वह मुहताज शख़्स दौलतमंद बन जाए या उसका इंतिक़ाल हो गया या इस्लाम

से नऊज़ोबिल्लाह फिर गया तो जो ज़कात उसको दी थी वह जाइज़ है यानी अदा हो गई।

(फ़तावा आलमगीरी जिल्द–4 सफ़्हा–150)

मस्अला: इसलिए कि फ़क़ीर को जिस वक़्त ज़कात या उश्र दी गई है या दी जाए उस वक़्त का एतेबार है, बाद में क्या हुआ उसका एतेबार नहीं है और देने के वक़्त अगर वह फ़क़ीर था तो अदाएगी में कोई शुब्हा नहीं है। (आलमगीरी जिल्द–2 सफ़्हा–48)

मुजौव पेशगी ज़कात की रक़म से क़र्ज़ देना कैसा है?

सवाल: मैं हर माह ज़कात की रक़म अलग कर देती हूं और रज़मान में देती हूं, अगर कोई आम दिनों में क़र्ज़ मांगे तो क्या मैं उसमें से दे सकती हूं?

जवाब: जब तक वह रक़म आप के पास है। आपकी मिलकियत है आप उसका जो चाहें कर सकती हैं।

(आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–380)

मौजूदा रक़म से ज़कात दे या अलग से?

सवाल: ज़ैद के पास दो सौ रुपये हैं तो क्या मिन्जुमला उस रक़म के पांच रुपये ज़कात देना चाहिए या ये कि ज़ैद अस्ल अपने पास रख कर और अलाहिदा से कुछ इंतिज़ाम कर के क़र्ज़ वग़ैरा से पांच रुपये ज़कात के दे?

जवाब: ये इख़्तियार है कि ख़्वाह उन दो सौ रुपये में से पांच रुपये ज़कात के दे दे या अलग से उसके पास हों तो उनमें से दे दे लेकिन अगर उसके पास दो सौ रुपये से कुछ ज़्यदा होगा तो उस ज़ाएद की भी ज़कात उसे अदा करनी होगी और क़र्ज़ लेने की ज़रूरत नहीं

है। ग़रज़ नतीजा ये है जिस क़दर रुपये उसके पास हैं उसकी ज़कात हिसाब कर के उसमें से दे दे।

(फ़तावा दारूलउलूम जिल्द–6 सफ़हा–195 बहवाला रद्दुलमुह्तार बाब ज़कातुलमाल जिल्द–2 सफ़हा–41)

"अगर मालिके निसाब नहीं है तो सिर्फ़ दो सौ रुपये में ज़कात नहीं है। जिस ज़माना में दो सौ रुपये में साढ़े बावन तोला चांदी आती थी उस वक़्त का ये मस्अला है, इख़्तियार है उनमें से या अलग से अगर ज़ाएद है तो मज़ीद ज़कात है।" (रफ़अ़त)

<u>**ज़कात देने में शक हो जाए तो क्या हुक्म है?**</u>

मस्अला: अगर किसी शख़्स को ज़कात की अदाएगी में शुब्हा पेश आ जाए और ये मालूम न हो सके कि ज़कात दी है या नहीं दी तो एहतियातन दोबारा ज़कात दे दे। (फ़तावा आलमगीरी जिल्द–4 सफ़हा–24 व इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–4 सफ़हा–31)

<u>**फ़ीसबीलिल्लाह में कौन लोग दाख़िल हैं?**</u>

सवाल: फ़ीसबीलिल्लाह में कौन कौन मसारिफ़ दाख़िल हैं? क्या तबलीग़ व हिफ़ाज़ते इस्लाम की तन्ख़्वाह और मसारिफ़े ख़ूराक व सफ़र वग़ैरा इसमें दाख़िल हैं?

जवाब: फ़ीसबीलिल्लाह में बेशक साहबे बदाअे की तफ़सीर के मुताबिक़ जुमला मसारिफ़े ख़ैर दाख़िल हैं लेकिन जो शराइत अदाए ज़कात की हैं वह सब जगह मलहूज़ रखना ज़रूरी है। वह ये है कि बिला मुआवज़ा तमलीक मुहताज की होनी ज़रूरी है। इसलिए हीलए तमलीक अव्वल कर लेना चाहिए, ताकि तमलीक के बाद तबलीग़

वग़ैरा के मुलाज़िमीन की तन्ख़्वाह वग़ैरा में सर्फ़ करना उसका दुरुस्त हो जाए।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–282 बहवाला रद्दुलमुहतार बाबुलमसरफ़ जिल्द–1 सफ़्हा–83)

मस्अला: ज़कात में जो तमलीके फुक़रा वग़ैरा ज़रूरी है ये शर्त किसी वक़्त और किसी तरह साक़ित नहीं हो सकती है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–290)

लफ़्ज़ सबीलिल्लाह के लफ़्ज़ी माना बहुत आम हैं। जो काम अल्लाह तआला की रज़ा जोई के लिए किए जाऐं वह सब इसी मफ़हूम के एतेबार से फ़ीसबीलिल्लाह में दाख़िल हैं। जो लोग रसूले करीम (स.अ.व.) की तफ़सीर व ब्यान और अइम्मए तफ़सीर के इरशादात से क़तअ नज़र महज़ लफ़्ज़ी तर्जुमा के ज़रीआ कुरआन समझना चाहते हैं। यहां उनको ये मुग़ालता हो गया है कि लफ़्ज़ फ़ीसबीलिल्लाह को देख कर ज़कात के मसारिफ़ में उन तमाम कामों को दाख़िल कर दिया जो किसी हैसियत से नेकी या इबादत हैं। मसलन मसाजिद, मदारिस, शफ़ाख़ानों, मुसाफिरख़ानों वग़ैरा की तामीर कराना, कुवें और पुल और सड़कें बनाना और उन रिफ़ाही इदारों के मुलाज़िमीन की तन्ख़्वाहें और तमाम दफ़तरी ज़रूरीयात इन सब को उन्होंने "फ़ीसबीलिल्लाह" में दाख़िल कर के ज़कात का मसरफ़ क़रार दे दिया। जो सरासर ग़लत है और इजमाऐ उम्मत के ख़िलाफ़ है। और जिन हज़रात फुक़्हा ने तालिब इलामों या दूसरे नेक काम करने वालों को उसमें शामिल किया है तो इस शर्त के साथ किया है कि वह फ़क़ीर व हाजतमंद हों और ये ज़ाहिर है कि फ़क़ीर व हाजतमंद

तो ख़ुद ही मसारिफ़े ज़कात में सब से पहले मसरफ़ हैं। उनको फ़ीसबीलिल्लाह के मफ़हूम में शामिल न किया जाता जब भी वह मुस्तहिक़्क़े ज़कात थे।

अगर एक बात पर ग़ौर कर लिया जाए तो वह बात तो इस मस्अले के समझने के लिए बिल्कुल काफ़ी है वह ये कि ज़कात के मस्अले में इतना उमूम होता है कि तमाम ताआत व इबादात और हर क़िस्म की नेकी पर ख़र्च करना इस में दाख़िल हो, तो फिर कुरआन में उन आठ मसरफ़ों का ब्यान (मआज़ल्लाह) बिल्कुल फ़ुज़ूल हो जाता है। और रसूलुल्लाह (स.अ.व.) का इरशाद जो पहले इस सिलसिले में ब्यान हो चुका है कि आप (स.अ.व.) ने फ़रमाया कि अल्लाह तआला ने मसारिफ़े सदक़ात मुतअैयन करने का काम नबी (स.अ.व.) को भी सिपुर्द नहीं किया, बल्कि ख़ुद ही उसके आठ मसरफ़ मुतअैयन फ़रमा दिए। तो अगर फ़ीसबीलिल्लाह के मफ़हूम में तमाम ताआत और नेकियां दाख़िल हैं और उनमें से हर एक में ज़कात का माल ख़र्च किया जा सकता है तो मआज़ल्लाह ये इरशादे नबवी (स.अ.व.) बिल्कुल ग़लत ठहरता है। मालूम हुआ कि फ़ीसबीलिल्लाह के लुग्वी तर्जुमा से जो नावाक़िफ़ को उमूम समझ में आता है वह अल्लाह तआला की मुराद नहीं है, बल्कि मुराद वह है जो रसूलुल्लाह (स.अ.व.) के ब्यान और सहाबा (रज़ि.) व ताबईन की तसरीहात से साबित है। (तफ़सील के लिए देखिए मआरिफ़ुल कुरआन जिल्द—4 सफ़्हा—408)

मसारिफ़ की क़ुदरती तरतीब

ज़कात के आठ मसारिफ़ जिस तरतीब से ब्यान किए

हैं, अगर ग़ौर करोगे तो मालूम हो जाएगा कि मआमला की कुदरती तरतीब यही है। सब से पहले उन दो गरोहों का ज़िक्र किया जो इस्तेहक़ाक़ में सब से ज़्यादा मुक़द्दम हैं। क्योंकि ज़कात का अव्वलीन मक़सूद उन्हीं की इआनत है। यानी "फ़ुक़रा" और "मसाकीन"। फिर उस गिरोह का ज़िक्र किया जिसकी मौजूदगी के बग़ैर ज़कात का निज़ाम क़ाइम नहीं रह सकता और इस एतेबार से उसका तक़द्दुम ज़ाहिर है। लेकिन चूंकि उसका इस्तेहक़ाक़ बिज़्ज़ात नहीं था इसलिए अव्वलीन जगह नहीं दी जा सकती थी। पस दूसरी जगह पाई यानी "العاملين عليها" फिर "المؤلفة قلوبهم" का दर्जा हुआ कि उनका दिल हाथ में लेना, ईमान की तक़वियत और हक़ की इशाअ़त के लिए ज़रूरी था। फिर गुलामों को आज़ाद कराने और क़र्ज़दारों को बारे क़र्ज़ से सुबुकदोश कराने के मक़ासिद नुमायाँ हुए, जो निस्बतन मुवक़्क़त और महदूद थे। फिर "فِي سَبِيلِ الله" का मक़सद रखा गया कि अगर मुस्तहिक़्क़ीन की पिछली जमाअ़तें किसी वक़्त मफ़क़ूद हो गई हों या मुक़्तज़ियाते वक़्त ने उनकी अहमियत कम कर दी हो या माले ज़कात की मिक़्दार बहुत ज़्यादा हो गई हो तो एक जामेअ़ व हावी मक़सद का दरवाज़ा खोल दिया जाए। जिसमें दीन व उम्मत के मसालेह की सारी बातें आ जाएं। सब से आख़िर में "اِبْنَ السَّبِيْل" की जगह हुई, क्योंकि तक़द्दुम में ये सब से कम और मिक़्दार के लिहाज़ से बहुत ही महदूद सूरत में पेश आने वाला मसरफ़ था।

(हक़ीक़तुज़्ज़कात सफ़्हा–25)

क्या ज़कात तमाम मसारिफ़ में तक़सीम करे?

सवालः इन मसारिफ़ के ब्यान से मक़सूद ये है कि ज़कात की हर रक़म इन सब में वजूबन तक़सीम की जाए, या ये है कि ख़र्च इन्ही में की जा सकती है?

जवाबः इस बारे में फ़ुक़हा (रह.) ने इख़्तिलाफ़ किया है, लेकिन जमहूर का मज़हब यही है कि तमाम मसारिफ़ में बयक वक़्त तक़सीम करना ज़रूरी नहीं। जिस वक़्त जैसी हालत और जैसी ज़रूरत हो, उसी के मुताबिक़ ख़र्च करना चाहिए और यही मज़हब क़ुरआन व सुन्नत की तसरीहात और रूह के मुताबिक़ है। अइम्मए अरबआ (रह.) में सिर्फ़ इमाम शाफ़ई (रह.) इसके ख़िलाफ़ गए हैं।

(हक़ीक़तुज़्ज़कात सफ़्हा–24 व किताबुलफ़िक़्ह अललमज़ाहिबिलअरबआ जिल्द–1 सफ़्हा–1013 व इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–4 सफ़्हा–44)

ज़कात वसूल कुनिन्दा के उसूल व फ़ज़ाइल

इस्लामी हुकूमत की तरफ़ से ज़कात वसूल करने के लिए जो लोग भेजे जाते हैं उनके लिए जनाब रसूलुल्लाह (स.अ.व.) ने बहुत सी हिदायात इरशाद फ़रमाई हैं। उनमें से अक्सर हिदायात का तअ़ल्लुक़ उन लोगों से भी है जो मुसलमानों की किसी नुमाइंदा तंज़ीम या किसी इस्लामी इदारे (मदारिस व मकातिब) की तरफ़ से ज़कात की वूसलयाबी के लिए (सफ़ीर वग़ैरा) जाते हैं और उसमें वह लोग भी शामिल हैं जो किसी हुकूमत की तरफ़ से टैक्स वसूल करने पर मुक़र्रर हैं। मुन्दर्जा ज़ैल अहादीस में उन लोगों को अगर ये सही तौर पर अपनी ज़िम्मादारी से अदा करें तो मुख़्तलिफ़ क़िस्म की ख़ुश ख़बरियां और

बशारतें दी गई हैं और जो लोग बेपरवाई से काम लें और हुदूदे शरअ की पाबंदी न करें, उनके लिए वईदें ब्यान की गई हैं।

हज़रत राफ़ेअ बिन ख़ुदैज (रज़ि.) से रिवायत है कि रसूलुल्लाह (स.अ.व.) ने फ़रमाया– "आमिले सदक़ात (ज़कात वसूल करने वाला) जो सही तरीक़े पर अल्लाह के लिए काम करता हो वह जब तक अपने घर न लौट आए राहे ख़ुदा के ग़ाज़ी की तरह है।"

हज़रत अबूहुरैरा (रज़ि.) से रिवायत है कि रसूलुल्लाह (स.अ.व.) ने फ़रमाया– "बेहतरीन कमाई आमिल की कमाई है। बशर्तेकि वह ख़ैरख़्वाही से (सही तरीक़ा पर) काम करे।

तशरीह: जिस काम में इंसान के फिसलने के मवाक़े ज़्यादा हों उससे अगर वह सही सालिम और बेदाग़ निकल आए तो अलावा उस अमल के अज्र व सवाब के इस आज़माइश में पूरा उतरने को भी क़द्र की निगाह से देखा जाता है। यहां तक कि बहुत सा माल व दौलत इंसान के हाथ में आता है और अगर उसके दिल में ख़ौफ़े ख़ुदा न हो तो बहुत कुछ मवाक़े गड़ बड़ करने के होते हैं। ऐसे मरहले में आदमी तक़्वा व परहेज़गारी पर क़ाएम रहे और ख़ुदा के हुक्मों की रिआयत रखे तो ये यक़ीनन बहुत बड़ा मुजाहदा और नफ़्स के ख़िलाफ़ बड़ा जिहाद है। (तरग़ीब जिल्द–2 सफ़्हा–194)

क्या आमिले ज़कात हदया क़बूल कर सकता है?

हज़रत अब्दुल्लाह बिन बरीदा (रज़ि.) अपने वालिद के हवाले से नक़्ल करते हैं कि रसूलुल्लाह (स.अ.व.) ने

फ़रमाया– "जिस शख़्स को हम ने किसी काम पर मुक़र्रर किया फिर उसको रोज़ी (तन्ख़्वाह) दे दी, अब उसके बाद वह जो कुछ लेगा वह ख़्यानत है।"

अगली हदीस से इस मज़मून की मज़ीद वजाहत होती है–

हज़रत अबूहमीद साअ़दी (रज़ि.) फ़रमाते हैं कि रसूलुल्लाह (स.अ.व.) ने क़बीला इज़्द के एक शख़्स इब्न लुतैबा को सदक़ा यानी ज़कात वसूल करने पर मुक़र्रर फ़रमा कर भेजा जब वह वापस हुए तो उन्होंने रसूलुल्लाह (स.अ.व.) को माल सिपुर्द करते हुए कहा ये तो आप का है और ये मुझे हदया में मिला है, यानी ये माले ज़कात में वसूल हुआ और इतना तोफ़हा के तौर पर मुझे दिया गया है। रसूलुल्लाह (स.अ.व.) ने अपने आम हकीमाना तरीक़े के मुताबिक़ उनसे मुंह दर मुंह कुछ नहीं फ़रमाया बल्कि आप (स.अ.व.) ख़ुतबा देने के लिए खड़े हो गए और हम्दो सना के बाद फ़रमाया– मैं तुम में से एक शख़्स को उन कामों में से किसी काम के लिए मामूर करता हूं जिनका अल्लाह तआ़ला ने मुझे ज़िम्मादार बनाया है वह आता है और कहता है कि ये तुम्हारा है और ये वह हदया है जो मुझे दिया गया है। वह अपनी अम्मा अब्बा के घर में क्यों न बैठ रहा, ताकि अगर वह सच्चा है तो उसका हदया उसके पास आता। ख़ुदा की क़सम तुम में से जो भी कोई शख़्स नाहक़ कोई चीज़ लेगा तो ज़रूर क़यामत के दिन अपने ऊपर लादे हुए अल्लाह तआ़ला से मिलेगा। पस ऐसा न हो कि मैं तुम में से किसी को क़यामत के दिन इस हाल में पहचानूं कि वह अल्लाह तआ़ला से मिल

रहा है और बिलबिलाता हुआ ऊँट या डकराती हुई गाय या मिमयाती हुई बकरी को अपने ऊपर लादे हुए है। इसके बाद रसूलुल्लाह (स.अ.व.) ने अपने दोनों मुबारक हाथ उठाए यहां तक कि आपकी बग़लों की सफ़ेदी नज़र आने लगी और फ़रमाया– "ऐ अल्लाह! क्या मैंने तेरा पैग़ाम तेरे बंदों तक पहुंचा दिया।"

(तरग़ीब जिल्द–1 सफ़्हा–196)

तशरीह: जब कोई शख़्स ऐसे सरकारी (वग़ैरा) मुहकमे में होता है जिससे आम लोगों के काम पड़ते रहते हैं तो उस शख़्स को जो भी हदया, तोहफ़े (गिफ़्ट) मिलेंगे। बेशतर उनमें इसी ग़रज़ से दिए गए होंगे कि शायद किसी वक़्त हमारा उन साहब से कुछ काम पड़े।

(तरग़ीब सफ़्हा–197)

मतलब ये है कि उस शख़्स (ज़कात वग़ैरा वसूल करने वाले) को तोहफ़ा तहाइफ़ की पेशकश उसकी ज़ात की वजह से नहीं है बल्कि उसके उह्दा की वजह से है, अगर वह ज़कात वसूल करने के लिए आमिल मुक़र्रर न किया जाता बल्कि वह अपने घर बैठा रहता तो उसको कोई तोहफ़ा (गिफ़्ट) क्यों देता? इससे मालूम हुआ कि अगर आमिल को उसका कोई अज़ीज़ दोस्त तोहफ़ा दे तो देखा जाएगा कि अगर उसके लिए तोहफ़ा की पेशकश उसके आमिल होने की वजह से नहीं है बल्कि तअ़ल्लुक़ात और देरीना मरासिम की वजह से है और ये हमेशा का मामूल है तो वह तोहफ़ा उसके लिए जाइज़ होगा। और अगर तोहफ़ा की पेशकश महज़ उसके ओहदे की वजह से होगी तो वह तोहफ़ा उसके लिए जाइज़ नहीं होगा।

(मज़ाहिरे हक़ जदीद जिल्द–2 सफ़्हा–496)

आमिलीन कौन हैं?

आमिलीन से मुराद वह लोग हैं जो इस्लामी हुकूमत की तरफ़ से सदक़ात व ज़कात व उश्र वग़ैरा लोगों से वसूल करे के बैतुलमाल में जमा करने की ख़िदमत पर मामूर होते हैं। ये लोग चूंकि अपने तमाम औक़ात इस ख़िदमत में ख़र्च करते हैं इसलिए उनकी ज़रूरीयात की ज़िम्मादारी इस्लामी हुकूमत पर आएद है। कुरआन करीम की इस आयत "اَلْعَامِلِيْنَ عَلَيْهَا" ने मसारिफ़े ज़कात में उनका हिस्सा रख कर ये मुतऐयन कर दिया कि उनका हक़्क़ुलख़िदमत उसी मद्दे ज़कात से दिया जाएगा।

इसमें अस्ल ये है कि हक़ तआला ने मुसलमानों से ज़कात व सदक़ात वसूल करने का फ़रीज़ा बराहे रास्त रसूले करीम (स.अ.व.) के सिपुर्द फ़रमाया है, जिसका ज़िक्र इसी सूरत में आगे आयत में है "خُذْ مِنْ اَمْوَالِهِمْ صَدَقَةً" यानी "वसूल करें आप (स.अ.व.) मुसलमानों के माल में से सदक़ा" इस आयत की रू से मुसलमानों के अमीर पर ये फ़रीज़ा आएद होता है कि वह ज़कात व सदक़ात वसूल करें, और ये ज़ाहिर है कि अमीर ख़ुद इस काम को पूरे मुल्क मे बग़ैर आवान व मददगारों के नहीं कर सकता। उन्ही आवान व मददगारों का ज़िक्र मज़कूरुस्सद्र आयत में "وَالْعَامِلِيْنَ عَلَيْهَا" के अलफ़ाज़ से किया गया है।

इन्ही आयात की तामील में रसूलुल्लाह (स.अ.व.) ने बहुत से सहाबए किराम (रज़ि.) को सदक़ात वसूल करने के लिए आमिल बना कर मुख़्तलिफ़ ख़ित्तों में भेजा है और आयते मज़कूरा की हिदायात के मुताबिक़ ज़कात ही

की हासिल शुदा रक़म में से उनको हक़्क़ुलख़िदमत दिया है। इनमें वह हज़राते सहाबा (रज़ि.) भी शामिल हैं जो (मालदार) थे।

ब्याने मज़कूर से मालूम हुआ कि आमिलीने सदक़ा को जो रक़म मद्दे ज़कात से दी जाती है वह उस रक़म के मुस्तहिक़ हैं और ज़कात से उनको देना जाइज़ है और मसारिफ़े ज़कात की आठ मदात में से सिर्फ़ एक यही मद ऐसी है जिसमें ज़कात की रक़म को बतौरे मुआवज़ए ख़िदमत दी जाती है वरना ज़कात नाम ही उस अतीया का है जो ग़रीबों को बग़ैर किसी मुआवज़ए ख़िदमत के दिया जाए। और अगर किसी ग़रीब फ़क़ीर से कोई ख़िदमत लेकर ज़कात का माल दिया गया तो ज़कात अदा नहीं हुई। (मआरिफ़ुलकुरआन जिल्द–4 सफ़्हा–397)

दो सवालों का जवाब

सवालः यहां दो सवाल पैदार होते हैं। अव्वल ये कि माले ज़कात को मुआवज़ए ख़िदमत में कैसे दिया गया। दूसरे ये कि मालदार के लिए ये माले ज़कात हलाल कैसे हुआ?

जवाबः इन दोनों सवालों का एक ही जवाब है कि आमिलीने सदक़ा की हैसियत को समझ लिया जाए, वह ये कि ये हज़रात (आमिलीन) फ़ुक़रा के वकील की हैसियत रखते हैं और ये सब जानते हैं कि वकील का क़ब्ज़ा अस्ल मुवक्किल के क़ब्ज़ा के हुक्म में होता है। अगर कोई शख़्स अपना क़र्ज़ वसूल करने के लिए किसी को वकील व मुख़्तार बना दे और क़र्ज़दार ये क़र्ज़ वकील को सिपुर्द कर दे तो वकील का क़ब्ज़ा होते ही क़र्ज़दार

बरी हो जाता है। तो जब ज़कात की रक़म आमिलीने सदक़ा ने फुक़रा के वकील होने की हैसियत से वसूल कर ली तो उनकी ज़कात अदा हो गई। अब ये पूरी रक़म उन फुक़रा की मिल्क है जिनकी तरफ़ से बतौरे वकील वसूल की है। अब जो रक़म बतौरे हक़्क़ुलख़िदमत के उनको दी जाती है वह मालदारों की तरफ़ से नहीं बल्कि फुक़रा की तरफ़ से हुई और फुक़रा को उसमें हर तरह का तसर्रुफ़ करने का इख़्तियार है। उनको ये भी हक़ है कि जब अपना काम उन लोगों (आमिलीन) से लेते हैं तो अपनी रक़म में से उनको मुआवज़ए ख़िदमत दें।

आमिलीन को वकील किस ने बनाया?

सवाल: अब सवाल ये रह जाता है कि फुक़रा ने तो उनको वकील मुख़्तार बनाया या नहीं, ये आमिलीन उन (फुक़रा) के वकील कैसे बन गए?

जवाब: इसकी वजह ये है कि इस्लामी हुकूमत का सरबराह जिसको अमीर कहा जाता है वह कुदरती तौर पर मिन्जानिबुल्लाह पूरे मुल्क के फुक़रा, गुरबा का वकील होता है। क्योंकि उन सब की ज़रूरीयात की ज़िम्मादारी उस (अमीर) पर आएद होती है। अमीरे मम्लकत जिस जिस को सदक़ात की वसूलयाबी पर आमिल बना दे वह सब उनके नाइब की हैसियत से फुक़रा के वकील हो जाते हैं। इससे मालूम हो गया कि आमिलीने सदक़ा को जो कुछ दिया गया वह दरहक़ीक़त ज़कात नहीं दी गई, बल्कि ज़कात जिन फुक़रा का हक़ है उनकी तरफ़ से मुआवज़ए ख़िदमत दिया गया। जैसे कोई ग़रीब फ़क़ीर किसी को अपने मुक़द्दमा का वकील बना दे और उसका

हक़्कुलख़िदमत ज़कात के हासिल शुदा माल से अदा कर दे। तो यहां न तो देने वाला बतौर ज़कात के दे रहा है और न लेने वाला ज़कात की हैसियत से ले रहा है।

(माख़ूज़ मआरिफुलकुरआन अज़ जिल्द–4 सफ़्हा–397 ता 399)

क्या मदारिस के सुफ़रा आमिलीन में दाख़िल हैं?

आज कल जो मदारिसे इस्लामिया और अन्जुमनों के मोहतमिम या उनकी तरफ़ से भेजे हुए सफ़ीर सदक़ात, ज़कात वग़ैरा मदारिस और अन्जुमनों के लिए वसूल करते हैं उनका वह हुक्म नहीं है जो आमिलीन सदक़ा का आयत शरीफ़ा में मज़कूर है कि ज़कात की रक़म में से उनकी तन्ख़्वाह दी जा सके। बल्कि उनको मदारिस और अन्जुमनों की तरफ़ से जुदागाना तन्ख़्वाह देना ज़रूरी है। ज़कात की रक़म से उनकी तन्ख़्वाह नहीं दी जा सकती। वजह ये है कि ये लोग (सफ़ीर व मोहतमिम) फ़ुक़रा के वकील नहीं। बल्कि अस्हाबे ज़कात मालदारों के वकील हैं उनकी तरफ़ से ज़कात के माल को मसरफ़ पर लगाने का उनको इख़्तियार दिया गया है। इसीलिए उनका क़ब्ज़ा हो जाने के बाद भी ज़कात उस वक़्त तक अदा नहीं होती जब तक कि ये हज़रात उसको मसरफ़ पर ख़र्च न कर दें। फ़ुक़रा का वकील न होना इसलिए ज़ाहिर है कि हक़ीक़ी तौर पर किसी फ़क़ीर ने उनको अपना वकील बनाया नहीं। और अमीरुलमोमिनीन की विलायते अम्मा की बिना पर जो ख़ुद बख़ुद वकालते फ़ुक़रा हासिल होती है वह भी उनको हासिल नहीं। इसलिए बजुज़ इसके कोई सूरत नहीं कि उनको अस्हाबे ज़कात का वकील

क़रार दिया जाए और जब तक ये उस माल को मसरफ़ पर ख़र्च न कर दें उनका क़ब्ज़ा ऐसा ही है जैसा कि ज़कात की रक़म ख़ुद माल वाले के पास रखी हो।

इस मआमले में आम तौर पर ग़फ़लत बरती जाती है। बहुत से अदाए ज़कात का फ़ंड वसूल कर के उसको सालहा साल रखे रहते हैं और ज़कात देने वाले समझते हैं कि हमारी ज़कात अदा हो गई। हालांकि उनकी ज़कात उस वक़्त अदा होगी जब उनकी रक़म मसारिफ़े ज़कात में सर्फ़ हो जाए।

इसी तरह बहुत से लोग नावाक़िफ़ीयत से उन लोगों को आमिलीने सदक़ा के हुक्म में दाख़िल समझ कर ज़कात ही की रक़म से उनकी तन्ख़्वाह देते हैं। ये न देने वालों के लिए जाइज़ है और न लेने वालों के लिए।

(मआरिफ़ुलक़ुरआन जिल्द–4 सफ़्हा–399)

ज़कात की तश्हीर करना कैसा है?

मस्अला: ज़कात की तशरीह इस नीयत से तो दुरुस्त है कि उससे ज़कात दिहिन्दागान को तरग़ीब हो, और रियाकारी और नुमूद व नुमाइश की ग़रज़ से ज़कात की तशहीर जाइज़ नहीं, बल्कि इससे सवाब बातिल हो जाता है। (आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–378)

मस्अला: फ़ुक़हा (रह.) ने कहा है कि जब आदमी ज़कात अदा करे तो अलल एलान अदा करना अफ़ज़ल है और नफ़्ली सदक़ात व ख़ैरात को पोशीदा तौर पर अदा करना बेहतर है।

(फ़तावा आलमगीरी जिल्द–4 सफ़्हा–4)

"यहां भी ये ज़रूरी है कि रियाकारी न हो

तो जाइज़ है।"

(मुहम्मद रफ़अ़त क़ासमी ग़ुफ़िरलहू)

दूसरे शहर में ज़कात भेजना कैसा है?

सवालः ज़ैद अपनी ज़कात व फ़ित्रा अपने शहर के ग़रीबों को नहीं देता, बल्कि दूर दराज़ के शहरों में भेजता है, क्या ये फ़ेल शरअ़न जाइज़ है?

जवाबः दूसरे शहर की तरफ़ ज़कात भेजना मरूहे तंज़ीही है। मगर वहां कोई रिश्तादार मिस्कीन (ग़रीब) हो या अपने शहर के मसाकीन से कोई ज़्यादा मुस्तहिक़ हाजतमंद हो या ज़्यादा नेक हो या तालिबे दीन हो या दूसरी जगह भेजने में आम्मतुलमुस्लिमीन का ज़्यादा फ़ाएदा हो तो कोई कराहत नहीं, बल्कि अह्ले क़राबत का हक़ अपने शहर के मसाकीन से ज़्यादा है।

(अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–249 बहवाला दुर्रेमुख़्तार जिल्द–2 सफ़्हा– व फ़िक़्हुज़्ज़कात जिल्द–2 सफ़्हा–353 व इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–4 सफ़्हा–47)

मस्अलाः जब दूसरी जगह के लोग ग़रीब, मुह्ताज हों या अइज़्ज़ा व अक़ारिब हों, और वह ज़रूरतमंद हों या उस जगह के लोग दीनी तालीम में मशग़ूल हों तो ऐसे लोगों को ज़कात के पैसे भेजने में कोई मुज़ाएक़ा नहीं बल्कि बाज़ मवाक़ेअ़ में ज़्यादा सवाब मिलेगा जब कि इख़लासे नीयत हो। (फ़तावा महमूदिया जिल्द–3 सफ़्हा–109 व फ़तावा रहीमिया जिल्द–5 सफ़्हा–155 बहवाला हिदाया जिल्द–1 सफ़्हा–188 व मआ़रिफ़ुलक़ुरआन जिल्द–4 सफ़्हा–411)

मस्अलाः मुक़द्दम वह लोग हैं जो ख़ेश व अक़ारिब ग़रीब मुफ़लिस हैं। उनके बाद दूसरे शहर के ग़ुरबा व

फुक़रा हैं। थोड़ा थोड़ा जिस जिस को हो सके दे दे, कुछ रिश्तादार मुह्ताजों को दे और कुछ दूसरे गुरबा को दे। अलहासिल ज़कात हर एक ग़रीब व मुफ़लिस को देने से अदा हो जाती है। लेकिन अक़ारिब गुरबा को देने में ज़्यादा सवाब है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–288 बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–94)

मस्अलाः ज़कात का रुपया ग़ैर ममालिक के मुसलमानों, मुह्ताजों को देना भी दुरुस्त है लेकिन शर्त ये है कि जिनको दिया जाए वह मालिके निसाब न हों और उनको मालिक बना दिया जाए।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–277)

मस्अलाः ग़रज़ ये है कि सब का ख़्याल रखा जाए, अगर गुंजाइश ज़कात के रुपये पैसे में हो तो हत्तलवुस्अ हर एक साहबे हाजत और अह्ले क़राबत को दे दे। और अगर गुंजाइश कम हो तो अह्ले क़राबत को मुक़द्दम करे फिर दूसरे मुह्ताजों और तलबा का ख़्याल करे।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–267 बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–93 बाबुलमसरफ़)

मुस्तहिक़ न मिलने पर ज़कात की रक़म देर से देना कैसा है?

सवालः बाज़ मरतबा मुस्तहिक़ न मिलने पर ज़कात की रक़म बची रहती है और दूसरा रमज़ान आ जाता है तो साबिक़ा रक़म भी अगली ज़कात की रक़म के हिसाब में लिख कर तक़्सीम करना कैसा है?

जवाबः कुल रक़म का फ़ौरन रमज़ान में यानी (जिस वक़्त वाजिब हो) ख़र्च कर देना ज़रूरी नहीं, बल्कि थोड़ी थोड़ी देने से भी (जैसा कि सवाल में ज़िक्र है) अदा हो

जाती है। अलबत्ता देते वक़्त नीयत का होना ज़रूरी है और जल्दी अदा करना अह्वत (ज़्यादा एहतियात) है। (नीज़ ज़कात के अदा करने में देर करना मुनासिब नहीं बल्कि मकरूह है। (बग़ैर उज़्र के)

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–3 सफ़्हा–33 बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–27)

ज़कात की रक़म को फ़ुक़रा के लिए आमदनी का ज़रीआ बनाना कैसा है?

सवालः ज़ैद के पास ज़कात की बड़ी रक़म जमा है उसको यक बारगी न देते हुए उस रक़म से कोई प्रॉप्रटी या ज़मीन ख़रीद कर उसकी आमदनी से मुस्तहिक़्क़ीने मदारिस और दीनी व दुनयवी तलबा जो उसके मुस्तहिक़ हों उनको वज़ीफ़ा देना चाहता है तो क्या ज़कात की रक़म से आमदनी का सामान कर के आमदनी में से मुस्तहिक़्क़ीन पर ख़र्च कर सकता है।?

जवाबः अदाएगीये ज़कात के लिए तमलीक यानी मुस्तहिक़्क़ीन को बिला एवज़ मालिक बना देना शर्त है। अगर आमदनी के लिए प्रॉप्रटी क़ाइम की गई या कोई ज़मीन ख़रीदी गई तो ये शर्त नहीं हुई, लिहाज़ा ज़कात अदा न होगी। इसलिए ज़कात की रक़म से आमदनी के लिए जाएदाद फ़राहम करना जाइज़ नहीं है।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–2 सफ़्हा–8 व फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–240)

ज़कात की रक़म से ग़रीबों को तिजारत कराना कैसा है?

सवालः हमारे यहां एक सूसाइटी "ख़ुदाई ख़िदमतगार" के नाम की है। नौजवान तबक़ा ने चंदा कर के काफ़ी

रक़म जमा की है। चंदे की कसीर रक़म ज़कात की है। अब उससे ग़रीब तबक़ा को बतौरे क़र्ज़ देते हैं, ताकि ये लोग उससे तिजारत करें। मुनाफ़ा होने पर अस्ल रक़म बिला सूद वापस कर देते हैं तो ग़रीब को ये रक़म देना शरअन कैसा है?

जवाब: ज़कात की रक़म ज़कात के मसरफ़ में ख़र्च की जाए। किसी ग़रीब को क़र्ज़ के तौर पर देने की इजाज़त नहीं है। अगर साहबे ज़कात की तरफ़ से इजाज़त हो तब भी जाइज़ नहीं है और जब तक उसके मसरफ़ में तमलीकन न दी जाए यानी जब तक उस ज़रूरतमंद ग़रीब को जिसको ज़कात की रक़म दी जएगी उस रक़म का मालिक न बना दिया जाए ज़कात अदा न होगी। लिहाज़ा ज़कात के हक़दार को बतौरे क़र्ज़ के नहीं बल्कि वैसे ही दे दी जाए।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–3 सफ़्हा–203 व फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–195 बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–14)

ज़कात में बैअ़ की क़ीमत कम करना कैसा है?

सवाल: साहबे निसाब ने एक ग़रीब को कोई चीज़ फ़रोख़्त की, जिसकी क़ीमत तीन रुपये हुई थी। ग़रीब ने अल्लाह के लिए छूट मांगी, अपनी गुरबत की वजह से उसने एक रुपये की छूट अल्लाह के लिए कर दी, तो क्या ये एक रुपया ज़कात में शुमार कर सकता है?

जवाब: इस तरह ज़कात में शुमार करना जाइज़ नहीं बल्कि उस चीज़ के दो हिस्से कर ले, एक हिस्सा को दो रुपये में फ़रोख़्त करे और एक हिस्सा जिसकी क़ीमत

एक रुपया है वह बिला क़ीमत लिए ज़कात में दे दे, या वह चीज़ तीन रुपये में फ़रोख़्त कर के रक़म वसूल करे, तीन रुपये वसूल करने के बाद एक रुपया ज़कात में दे दे। (फ़तावा महमूदिया जिल्द–3 सफ़्हा–35 बहवाला शामी जिल्द–2 सफ़्हा–12)

ज़कात की रक़म फ़ुक़रा के फ़ाएदा के लिए ख़र्च कर देना कैसा है?

मस्अला: जमहूर फ़ुक़हा इस पर मुत्तफ़िक़ हैं कि ज़कात के मुअैयना आठ मसारिफ़ में भी ज़कात की अदाएगी के लिए ये शर्त है कि उन मसारिफ़ में से किसी मुस्तहिक़ को माले ज़कात पर मालिकाना क़ब्ज़ा दे दिया जाए। बग़ैर मालिकाना क़ब्ज़ा दिए अगर कोई माल उन्ही लोगों के फ़ाएदा के लिए ख़र्च कर दिया गया तो ज़कात अदा नहीं होगी। इसी वजह से जमहूर फ़ुक़हाए उम्मत इस पर मुत्तफ़िक़ हैं कि ज़कात की रक़म को मसाजिद या मदारिस या शिफ़ा ख़ाना, यतीम ख़ाना की तामीर या उनकी दूसरी ज़रूरीयात में सर्फ़ करना जाइज़ नहीं, अगरचे इन तमाम चीज़ों से फ़ाएदा उन फ़ुक़रा और दूसरे हज़रात को पहुंचता हो जो मसरफ़े ज़कात हैं। मगर उनका मालिकाना क़ब्ज़ा उन चीज़ों पर न होने के सबब ज़कात उससे अदा नहीं होती। (मआरिफुलक़ुरआन जिल्द–4 सफ़्हा–409)

ज़कात किस को लेना और देना जाइज़ है?

मस्अला: जिस शख़्स के पास उसकी ज़रूरीयाते अस्लीया से ज़ाएद बक़द्रे निसाब माल न हो, उसको ज़कात दी जा सकती है और उसके लिए ज़कात लेना भी जाइज़ है। और ज़रूरीयाते अस्लीया में रहने का मकान, इस्तेमाली

बरतन और कपड़े और फ़रनीचर वग़ैरा सब दाख़िल हैं। निसाब यानी सोना साढ़े सात तोला (87 ग्राम 479 मिली ग्राम) या चांदी साढ़े बावन तोला (612 ग्राम 35 मिली ग्राम) या उसकी क़ीमत, जिसके पास हो और वह क़र्ज़दार भी न हो, न उसको ज़कात लेना जाइज़ है न देना। इसी तरह वह शख़्स जिसके पास कुछ चांदी या कुछ पैसे नक़द हैं और थोड़ा सा सोना है तो सब की क़ीमत लगा कर अगर साढ़े बावन तोला चांदी की क़ीमत के बराबर हो जाए वह भी साहबे निसाब है। उसको ज़कात देना और लेना जाइज़ नहीं है।

(मआरिफ़ुल क़ुरआन जिल्द–4 सफ़हा–396)

क्या मुस्तहिक़ के हालात की तफ़्तीश ज़रूरी है?

सवालः जो शख़्स अपने आप को अपने क़ौल या अमल से मुस्तहिक़्क़े ज़कात, हाजतमंद ज़ाहिर करे और सदक़ात वग़ैरा का सवाल करे, क्या देने वालों के लिए ये ज़रूरी है कि उसके हक़ीक़ी हालात की तहक़ीक़ करें और बग़ैर उसके न दें?

जवाबः इसके मुतअल्लिक़ रिवायाते हदीस और अक़वाले फ़ुक़हा ये हैं कि उसकी ज़रूरत नहीं, बल्कि उसके ज़ाहिरी हाल से अगर ये गुमाने ग़ालिब हो कि ये शख़्स हक़ीक़त में फ़क़ीर हाजत मंद है तो उसको ज़कात दी जा सकती है। जैसा कि हदीस में है कि रसूले करीम (स.अ.व.) की ख़िदमत में कुछ लोग निहायत शिकस्ता हाल आए। आप (स.अ.व.) ने उनके लिए लोगों से सदक़ात वग़ैरा जमा करने के लिए फ़रमाया, काफ़ी मिक़्दार जमा हो गई तो उनको दे दी गई। (ज़कात वग़ैरा) आंहज़रत (स.अ.व.) ने

इसकी ज़रूरत नहीं समझी कि उन लोगों के अन्दरूनी हालात की तहकीक़ फ़रमाते।

(मआरिफ़ुलकुरआन जिल्द–4 सफ़हा–412 बहवाला क़रतबी)

ज़कात के ज़्यादा मुस्तहिक़ मदारिस हैं या कॉलेज?

सवालः मैं ज़कात की रक़म गुरबा व ख़ेश व अक़ारिब और दीनी मदारिस में देता हूं। मेरे एक दोस्त का कहना है कि मदारिसे अरबीया के बजाए हाई स्कूल या कॉलेज में पढ़ने वालों को बतौर स्कॉलर शिप (इमदाद व वज़ीफ़ा) देना ज़्यादा अज्र व सवाब का बाइस है, क्या मेरे दोस्त की ये रहबरी और अमल दुरुस्त है?

जवाबः हर मुसलमान बख़ूबी जानता है कि दीनी व मज़हबी तालीम सब से अफ़ज़ल है और निहायत ज़रूरी है– चे निस्बत ख़ाक रा बा आलमे पाक!

वाक़िआ ये है कि उलूमे दीनीया के तलबा को मुक़द्दम रखने में शरीअत की तरवीज और इशाअत है, क्योंकि हामिलीने शरीअत यही तलबा हैं, उन्हीं के ज़रीआ मिल्लते मुस्तफ़वीया (स.अ.व.) ज़ुहूर फ़रमा है। क़यामत के दिन शरीअत ही की पूछ होगी। जन्नत में दाख़िल होना और दोज़ख़ से बचना शरीअत पर अमल करने से वाबस्ता है। अंबिया अलैहिमुस्सलाम ने जो तमाम काएनात में सब से अफ़ज़ल हैं, अहकामे शरीअत की दावत दी है और अहकामे शरीअत की पाबंदी पर ही नजात को मौक़ूफ़ रखा है। और उन अंबिया अलैहिमुस्सलाम को भेजने का मक़सद तबलीगे शरीअत ही है। पस सब से बड़ी ख़ैरात ये है कि शरीअत को सएज करने ही की कोशिश की जाए।

काबिले तवज्जोह बात

इसके अलावा काबिले तवज्जोह बात ये भी है कि स्कूलों, कॉलेजों को सरकारी इमदाद व हिमायत हासिल है। इसके बरख़िलाफ़ उन दीनी मदारिस का मदार आप जैसे अह्ले ख़ैर मुसलमानों की इमदाद पर है। अब मामूली अक़्ल वाला इंसान भी फ़ैसला कर सकता है कि कहां और किस को इमदाद देने में अज्र व सवाब ज़्यादा है?

ख़ुलासा ये कि दीनी मदारिस जो हक़ीक़त में इस्लाम के क़िले हैं उनको बाक़ी और मज़बूत रखने, नीज़ उनकी बक़ा व तरक़्क़ी के लिए ईसार और माली इमदाद की अज़ हद ज़रूरत है। लिहाज़ा आप का तर्ज़े अमल और तरीक़ए फ़िक्र बेहतर है। और आप के दोस्त की रहबरी ग़लत और गुमराहकुन है।

दीनी मदारिस और उनमें पढ़ने वालों और ख़ादिमों और कारकुनों को नज़र अंदाज़ कर के उनको बेबसी और बेकसी के आलम में छोड़ कर होई स्कूल या कॉलेज पर तवज्जोह करना बेहतर तो क्या है मुआख़ज़ा से नजात मिल जाए तो ग़नीमत जानिएगा।

एहयाउलउलूम में तहरीर है कि ज़कात वग़ैरा देने के लिए ऐसे दीनदार लोगों को तलाश करे जो दुनिया की तमअ़ व तलब छोड़ कर तिजारते आख़िरत में मशग़ूल हों। हुज़ूर पुर नूर (स.अ.व.) का इरशादे मुबारक है कि– "तुम पाक ग़िज़ा खाओ और पाक आदम ज़ाद को खिलाओ।" नीज़ ये भी आप (स.अ.व.) का इरशाद है कि कारेख़ैर करने वाले ही को अपना खाना खिलाओ कि वह लोग अल्लाह तआला की तरफ़ मुतवज्जेह हैं, जब वह लोग

तंगदस्त होते हैं तो उनकी तवज्जोह बट जाती है। लिहाज़ा एक शख़्स को मुतवज्जेह इलल्लाह कर देना ये बहुत अफ़ज़ल है ऐसे हज़ारहा अशख़ास को देने से जिनकी तवज्जोह दुनिया ही की तरफ़ होती है। और परहेज़गारों में से भी ऐसे अह्ले इल्म को ख़ास कर दें जो अपने इल्म से लिवजहिल्लाह लोगों को नफ़ा पहुंचा रहे हैं और मज़हबे इस्लाम की पुख़्तगी और इशाअ़ते उलूमे दीनीया और तबलीग़ में लगे हुए हैं, क्योंकि इल्म पढ़ना पढ़ाना तमाम इबादतों से अफ़ज़ल इबादत है।

हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने मुबारक (रह.) हमेशा अपनी ज़कात व ख़ैरात अह्ले इल्म पर ही ख़र्च करते थे और फ़रमाते थे कि मैं दर्जए नुबूवत (स.अ.व.) के बाद उलमा के दर्जा से अफ़ज़ल किसी का मरतबा नहीं देखता हूं क्योंकि अगर अह्ले इल्म तंगदस्त होंगे तो दीनी ख़िदमत न हो सकेगी, जिस से दीनी उमूर में नक़्स आ जाएगा। लिहाज़ा अमली ख़िदमत के लिए उनको फ़ारिग़ और बेफ़िक्र कर देना सब से बेहतर है। ख़ुलासए जवाब।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–2 सफ़्हा–5 व किफ़ायतुलमुफ़्ती जिल्द–4 सफ़्हा–275)

जिनके अक़ाइद ख़राब हों उनको ज़कात देना कैसा है?

सवाल: हमारे यहां फ़क़ीर (ग़रीब) जिनके यहां शिर्क, बिदअ़त, ताज़िया परस्ती वग़ैरा उनका काम है। नमाज़ रोज़ा नहीं करते और वह झूट, फ़रेब, ज़िना, चोरी को बुरा नहीं जानते, बचना तो दरकिनार, ऐसी हालत में उन लोगों को ज़कात देना कैसा है? उन लोगों को ज़कात देना अगर जाइज़ हो तो ख़ैर, वरना मेरा जी चाहता है

कि दूसरी जगह बाहर मज़लूमीन के पास भेज दूं?

जवाब: अपनी बस्ती के उन लोगों को जिनका हाल आप ने लिखा है ज़कात देना दुरुस्त है। पस जो रक़म आप ने ज़कात की उन लोगों के लिए रखी है वह उन्हीं को देना दुरुस्त है, क्यों कि अपने अह्ले शहर के गुरबा का भी हक़ है बल्कि ज़्यादा हक़ है और बाहर के (दूसरी जगह के) मज़लूमीन अगरचे ज़्यादा मुस्तहिक़ हैं मगर उसमें ख़र्च करने वाले की बेएहतियाती का अंदेशा है जिससे ये ख़ौफ़ है कि ज़कात अदा न हो, क्योंकि ज़कात की अदाएगी में फ़ुक़रा की ज़कात की रक़म का मालिक बनाना शर्त है। जिसकी वजह से (ज़कात की रक़म) मस्जिद और मकान वग़ैरा की मरम्मत में सर्फ़ करना दुरुस्त नहीं और तजहीज़ व तकफ़ीने मैयत में भी सर्फ़ करना दुरुस्त नहीं है।

पस मालूम नहीं कि जिसके पास बाहर रक़मे ज़कात भेजी जाएगी वह इस शर्त का पूरा लिहाज़ करेगा या न करेगा और वह मसारिफ़े ज़कात से पूरी तरह वाक़िफ़ हो या न हो। आप के अह्ले शहर जिनका हाल आप ने लिखा है अगरचे ख़राबी उनके आमाल व अक़ाएद की ज़ाहिर है मगर ये भी ज़ाहिर है कि वह कलिमा गो और मुद्दईये इस्लाम हैं, अगरचे आमाल व अक़ाइद उनके ख़राब हों तो उमूमन उनकी तक्फ़ीर का हुक्म नहीं दिया जा सकता है।

हाँ! जिस शख़्स से कोई कलिमा मूजिबे कुफ़्र सुना गया हो या उसका हाल मुत्तफ़क़ तौर से मालूम हो गया कि उसके अक़ाइद कुफ़्रिया हैं तो उस पर हुक्मे कुफ़्र कर दिया जाएगा। मगर उमूमन आम मुसलमानों पर ऐसा हुक्म

न किया जाएगा। पस जब कुफ़्र का हुक्म उमूमन उन पर आएद नहीं किया जा सकता तो ज़कात देना उनको दुरुस्त है, कि ग़रीब व मुहताज हैं और अपने पड़ोसी हैं (अपने शहर के हैं) इससे ज़्यादा कुंज व काव की हाजत नहीं है। जैसा कि हदीस शरीफ़ में है कि एक शख़्स ने इरादा किया सदक़ा देने का (आम है कि वह सदक़ा नफ़्ल हो या फ़र्ज़) यानी ज़कात अव्वल दिन (ग़लती से) चोर को दिया गया, फिर दोबारा ज़ानिया को दिया गया, फिर मालदार को दिया गया, इसका उसको अफ़सोस हुआ तो उसको ख़्वाब में ये कहा गया कि तेरे तीनों सदक़े क़बूल हुए कि चोर को शायद इबरत हो कि वह चोरी से ताइब हो जाए और ज़ानिया ज़िना से तौबा कर लेवे और मालदार को नसीहत हो कि वह भी सदक़ा व ज़कात वग़ैरा देने लगे। और तीनों सूरतों में हमारे फ़ुक़हाए हनफ़ीया अदाए ज़कात के क़ाएल हैं।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–222 बहवाला मिश्कात बाबुलइन्फ़ाक़ जिल्द–1 सफ़्हा–65 व रद्दुलमुह्तार जिल्द– सफ़्हा–92 बाबुलमसरफ़)

ज़कात का अंदाज़न देना कैसा है?

मस्अला: ज़कात पूरा हिसाब कर के देनी चाहिए अगर अंदाज़ा कम रहा तो ज़कात का फ़र्ज़ ज़िम्मा रहेगा। अगर पूरे तौर पर हिसाब करना मुमकिन न हो तो ज़्यादा से ज़्यादा का अंदाज़ा लगाना चाहिए।

(आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–363)

बग़ैर हिसाब लगाए ज़कात देते रहना कैसा है?

सवाल: अगर कोई शख़्स सालाना ज़कात न निकालता

हो बल्कि हर माह कुछ न कुछ किसी ज़रूरतमंद को देता रहता हो और उसका हिसाब भी अपने पास न हो तो क्या ये ज़कात देने में शुमार होगा या नहीं?

जवाबः ज़कात की नीयत से जो कुछ दिया है उतनी ज़कात अदा हो जाएगी, लेकिन ये कैसे मालूम होगा कि उसकी ज़कात पूरी हो गई या नहीं? इसलिए हिसाब कर के जितनी ज़कात हो वह अदा करनी चाहिए। अलबत्ता ये इख़्तियार है कि इकट्ठी (यकमुश्त) दे दी जाए या थोड़ी थोड़ी कर के साल भर में अदा कर दी जाए, मगर हिसाब रखना चाहिए और ये भी याद रखना चाहिए कि ज़कात अदा करते वक़्त ज़कात की नीयत करना ज़रूरी है। जो चीज़ ज़कात की नीयत से न दी जाए उससे ज़कात अदा नहीं होगी। अलबत्ता अगर ज़कात की नीयत से कुछ रक़म अलग रख ली जाए फिर उसमें वक़्तन फ़वक़्तन देता रहे तो ज़कात अदा हो जाएगी।

(आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–379)

ज़कात की रक़म से महीना मुक़र्रर कर देना

सवालः मैंने जितनी ज़कात निकाली थी वह रक़म अलग कर के रख दी है। अब एक दो घरो को जिनको मैं ज़कात देना चाहता हूं उनको हर महीने उसमें से निकाल कर दे देता हूं, क्योंकि अगर एक साथ ये रक़म दी जाए तो ये ख़र्च कर लेते हैं। क्या ये सही है?

जवाबः आप का ये फ़ेल दुरुस्त है कि ज़कात की रक़म अलग निकाल कर रख ली और हसबे मौक़ा अदा करते रहे। (आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–380 व फ़तावा महमूदिया जिल्द–3 सफ़्हा–32 व फ़तावा दारुलउलूम

जिल्द–6 सफ़्हा–92)

थोड़ी थोड़ी कर के ज़कात देना कैसा है?

मस्अला: अगर कोई शख़्स ये चाहे कि साल के आख़िर में ज़कात अदा करने के बजाए हर माह कुछ रक़म ज़कात की नीयत से निकालता रहे, यानी हर महीने थोड़ी थोड़ी ज़कात निकालते रहना दुरुस्त है।

मस्अला: अगर थोड़ी थोड़ी कर के साल भर में ज़कात अदा कर दी जाए तब भी ज़कात अदा हो जाएगी और जब साल शुरू हो उसी वक़्त से थोड़ी थोड़ी ज़कात पेशगी अदा करते रहें तो ये भी दुरुस्त है। ताकि साल के ख़त्म होने पर ज़कात भी अदा हो जाए। बहरहाल जितनी मिक़्दार ज़कात की वाजिब हो उसका अदा हो जाना ज़रूरी है। (आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–379 व फ़तावा महमूदिया जिल्द–3 सफ़्हा–32 व फ़तावा महमूदिया जिल्द–11 सफ़्हा–128)

मस्अला: अगर ज़कात निकाल कर अलाहिदा या (बग़ैर निकाले ही लिखते रहें और आख़िर साल में हिसाब लगा लें) रख ली जाए बतौर अमानत के और फिर उसको आहिस्ता आहिस्ता बतदरीज हसबे मौक़ा अश्ख़ास को देता रहे ये जाइज़ है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–92 बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–36 बाबुज़कातिलग़नम)

मस्अला: किसी शख़्से मिसकीन की ज़कात से कुछ रक़म माहवार मुक़र्रर कर दी तो ज़कात अदा हो जाती है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–337 बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–12)

मस्अला: मिस्कीनों और ग़रीबों को मुतफ़र्रिक़ तौर से

जो कुछ ज़कात की नीयत से दिया जाए जाइज़ है और ज़कात इसमें अदा हो जाती है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–334)

जितनी ज़कात वाजिब है उससे ज़्यादा देना कैसा है?

सवालः अगर ज़कात हिसाब से तीन सौ या चार सौ हो, उसके बजाए एक दो सौ रुपये ज़्यादा दे दे तो क्या ज़कात उसकी बेकार हो जाऐगी?

जवाबः इस सूरत में सवाब ज़्यादा हुआ। ज़कात भी अदा हो गई और एक दो सौ ज़्यादा देने का सवाब ज़्यादा हुआ। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–71)

क्या ज़ाएद दी गई रक़म को आइंदा साल की ज़कात में लगा सकते हैं?

सवालः जो रक़म ज़कात की वाजिब हुई है अगर उससे ज़ाएद ख़र्च हो जाए तो उस ज़्यादा ख़र्च शुदा रक़म को आइंदा साल की ज़कात में महसूब कर सकता है या नहीं?

जवाबः अगर ज़ाएद रक़म बनीयते ज़कात दी गई तो वह आइंदा साल की ज़कात में महबूस हो जाएगी।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–93 बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–36 बाब ज़कातुलग़नम)

मस्अलाः अगर किसी शख़्स ने एक कपड़ा ज़कात में दिया और उसकी क़ीमत देने के वक़्त आठ रुपये लगाई। देने के बाद मालूम हुआ कि उसकी क़ीमत बारह रुपये थी तो इस सूरत में अगर वह कपड़ा या चीज़ वग़ैरा जिसको दिया था उसके पास मौजूद हो तो बारह रुपये ज़कात में शुमार कर सकता है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–95)

ज़कात में वकील बनाना कैसा है?

मस्अला: आप कसी दूसरे शख़्स या इदारा को अपनी रक़म दे कर वकील व मुख़्तार बना सकते हैं कि वह आप की तरफ़ से माले ज़कात को ज़कात के सही मसरफ़ में ख़र्च कर दे। लेकिन इसमें दो बातें पेशे नज़र रहनी चाहिएं।

(1) अव्वल ये कि उस वकील पर ये पूरा एतेमाद हो कि वह उस ज़कात की रक़म को सिर्फ़ मुस्तहिक़्क़ीने ज़कात पर ही सर्फ़ करेगा। दूसरी मद्दाते ख़ैरात में ख़र्च न कर डालेगा।

(2) दूसरी ये कि जब तक आप का ज़कात का माल उस वकील के क़ब्ज़ा में रहेगा वह ऐसा ही है जैसा कि आप के पास रखा है, ज़कात उसी वक़्त अदा होगी जब ये शख़्स या इदारा ज़कात के माल को ज़कात के मुस्तहिक़्क़ीन में ख़र्च कर डाले।

बहुत से इदारे ज़कात की रक़म जमा कर लेते हैं और सालहा साल ज़कात की रक़म रखी रहती है सर्फ़ नहीं होती ये बड़ी बेएहतियाती है। (इमदाद मसाइले ज़कात व फ़िक़्हुज़्ज़कात जिल्द–2 सफ़्हा–394)

शराइत के साथ वकील बनाना कैसा है?

सवाल: ज़ैद ने उमर को (इस शर्त पर) ज़कात का वकील बनाया कि किसी ख़ास मुस्तहिक़ को ज़कात मसलन ख़ालिद को देने के लिए, अगर उमर बकर को कि वह भी मुस्तहिक़्क़े ज़कात है दे दे तो ज़ैद की ज़कात अदा होगी या नहीं?

जवाब: शामी में है कि इसमें दो क़ौल हैं। एक क़ौल

ये है कि ज़कात अदा हो जाएगी और दूसरा ये कि अदा न होगी और वकील ज़ामिन होगा। पस एहतियात ये है कि किसी दूसरे को ज़कात न दे, बल्कि उसी को दे जिसको मुअक्किल (साहबे ज़कात) ने मुतअैयन किया है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–65 बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–15 किताबुज़्ज़कात)

मस्अला: अगर तुम ने किसी को रुपये नहीं दिए बल्कि इतना कह दिया कि तुम हमारी तरफ़ से ज़कात दे देना (इस कहने के बाद) उसने तुम्हारी तरफ़ से ज़कात दे दी तो ज़कात अदा हो गई और जितना उसने रुपया तुम्हारी तरफ़ से दिया है अब वह तुम से ले ले।

(शामी जिल्द–2 सफ़्हा–14 व बहिश्ती ज़ेवर जिल्द–3 सफ़्हा–29)

क्या वकील अपना नाइब बना सकता है?

मस्अला: तुम ने एक शख़्स को अपनी ज़कात में दो सौ रुपये दिए तो उसको इख़्तियार है कि ख़्वाह ख़ुद किसी ग़रीब को दे दे या और किसी के (अपने नाइब के) सिपुर्द कर दे कि तुम ये रुपया ज़कात में दे देना और नाम का बतलाना ज़रूरी नहीं कि फ़लां की तरफ़ से ये ज़कात देना। और वह शख़्स रुपया अगर अपने किसी रिश्तादार या माँ बाप को ग़रीब देख कर दे दे तो भी दुरुस्त है, लेकिन अगर वह ख़ुद ही ग़रीब हो तो आप ही (ख़ुद) लेना दुरुस्त नहीं, अलबत्ता अगर तुम ने ये कह दिया हो कि जो चाहे करो और जिसे चाहो दो तो उसे आप को भी ले लेना दुरुस्त है। (इमदाद मसाइले ज़कात सफ़्हा–16 बहवाला फ़तावा क़ाज़ी ख़ाँ)

वकील का ज़कात की रक़म में रद्दोबदल करना कैसा है?

सवालः एक शख़्स ने किसी दूसरे शख़्स को ज़कात या सदक़ाते वाजिबा की मद से कोई रक़म मसाकीन को देने के लिए दी। उस वकील ने वह रक़म बदल दी मसलन उसमें से दस दस रुपये के दस नोट लिए और सौ का एक नोट उसमें रख दिया। क्या ऐसा करना जाइज़ है? या जो रक़म मिली है वही मसाकीन को देना ज़रूरी है?

जवाबः ज़कात बहरहाल अदा हो जाएगी। अलबत्ता तबदीली का जवाज़ इस पर मौकूफ़ है कि मुअक्किल की तरफ़ से तबदीली की इजाज़त सराहतन या दलालतन मौजूद हो, उर्फ़ में इसकी इजाज़त है। इसलिए सराहतन इजाज़त नहीं। मअ़हाज़ा सराहतन इजाज़त ले लेना बेहतर है। (अहसनुलफ़तवा जिल्द-4 सफ़्हा-290)

मस्अलाः ज़कात की रक़म बग़ैर इजाज़त मुज़क्की के (ज़कात देने वाले ने जिस को अपना वकील बनाया हो उसको) अपने माल में मिला देना जाइज नहीं है। और ज़काते मुज़क्की उस वक़्त अदा होगी कि मसरफ़ के पास पहुंच जाए, और अगर वकील ने अपने रुपये में मुअक्किल (जिसने वकील, अपना नमुाइंदा बनाया) की रक़म ज़कात को मिला लिया। पस अगर ये मिलाना मुअक्किल की इजाज़त से है तो जिस वक़्त रक़मे ज़कात अलाहिदा कर के बनीयते ज़कात मुज़क्की की तरफ़ से देगा उसी वक़्त ज़कात उसकी अदा होगी। और अगर बिला इजाज़त मुअक्किल के वकील ने ऐसा किया तो उसकी (साहबे ज़कात की) ज़कात अदा न होगी और जो कुछ वकील ने फ़ुक़रा वग़ैरा को दिया होगा वह वकील की तरफ़ से

हिबा या सदक़ा होगा। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–63 बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–14)

मस्अला: किसी ग़रीब को देने के लिए तुम ने ज़कात की रक़म किसी को (अपने नुमाइंदा या वकील को) दी लेकिन उसने बिऐनिही वही रुपये फ़क़ीर को नहीं दिए जो तुम ने दिए थे बल्कि उसने अपने पास से रुपये दे दिए और ये ख़्याल किया कि वह रुपये में ले लूँगा, तब भी ज़कात अदा हो गई, बशर्तेकि तुम्हारे रुपये उसके पास मौजूद हों और अब वह शख़्स अपने रुपये के बदले में तुम्हारे रुपये ले ले, अलबत्ता अगर तुम्हारे दिए हुए रुपये उसने (वकील ने) पहले ख़र्च कर डाले, उसके बाद अपने रुपये ग़रीब को दिए तो ज़कात अदा नहीं हुई, या तुम्हारे रुपये रखे तो हैं लेकिन अपने रुपये देते वक़्त ये नीयत न थी कि मैं वह रुपये ले लूँगा तब भी ज़कात अदा नहीं हुई, अब वह रुपये फिर ज़कात में दे। (बहिश्ती ज़ेवर जिल्द–3 सफ़्हा–29 बहवाला शामी जिल्द–2 सफ़्हा–14)

वकील का मद्दे ज़कात से कोई चीज़ ख़रीद कर देना?

सवाल: क्या वकील ज़कात की रक़म से कोई चीज़ मसलन कपड़ा, जूता, ग़ल्ला, फल वग़ैरा ख़रीद कर दे सकता है?

जवाब: ये भी मुअक्किल की इजाज़त पर मौक़ूफ़ है। अगर उसकी तरफ़ से सराहतन या दलालतन इसकी इजाज़त मौजूद हो तो जाइज़ है वरना नहीं।

(अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–290)

क्या वकील अपने ज़ी रह्म को ज़कात दे सकता है?

मस्अला: अगर किसी को ज़कात देने के लिए वकील

बनाया तो ये वकील अपने ज़ी रहम को ज़कात दे सकता है। (अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–298)

"यानी जिन रिश्तादारों को ये वकील अपनी ज़कात नहीं दे सकता, लेकिन वकील होने की वजह से दूसरों की ज़कात दे सकता है।"

(मुहम्मद रफ़अ़त क़ासमी)

मस्अला: किसी शख़्स का वकील अपने लड़के को बड़ा हो या छोटा या अपनी बीवी को ज़कात दे दे तो जाइज़ है। बशर्तेकि ये मुहताज हों यानी साहबे निसाब न हों। अलबत्ता वकील ख़ुद न रखे। (दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़्हा–130 वफ़तावा आलमगीरी जिल्द–4 सफ़्हा–40)

मस्अला: ज़ैद ने उमर को ज़कात का रुपया तक़्सीम करने के लिए दिया। उमर साहबे निसाब है मगर उसकी बीवी यानी वकील की, मिस्कीन है (साहबे निसाब नहीं है) तो इस सूरत में उमर अपनी बीवी को ज़ैद की ज़कात का रुपया दे सकता है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–196 बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–14)

क्या वकील ख़ुद ज़कात ले सकता है?

सवाल: ज़ैद ने उमर को वकील बनाया कि सौ रुपये मुस्तहिक़्क़ीने ज़कात को मेरी तरफ़ से दे दो। इत्तिफ़ाक़न उमर ख़ुद ही फ़क़ीर (ग़रीब) हो गया। वकील बनाने के वक़्त वह मालदार था तो क्या उमर वह ज़कात ख़ुद ले सकता है या नहीं?

जवाब: वकील को मुअक्किल की ज़कात अपने मसरफ़ में लाना और ख़ुद रख लेना जाइज़ नहीं है, मगर जब कि उसने ये कह दिया हो कि जहां चाहे सर्फ़ करे। पस

अगर बाद में वकील फ़क़ीर हो गया और मुअक्किल ने ये कहा था कि जिस जगह चाहे सर्फ़ कर लो तो ख़ुद रख सकता है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–287 बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–15)

क्या वकील ज़कात को अपने नफ़्स पर ख़र्च कर सकता है?

सवालः ज़ैद एक मस्जिद में इमाम है। ज़ैद को अह्ले मुहल्ला सदक़ाते नाफ़िला या वाजिबा दे देते हैं जो ये कह कर देते हैं कि मदरसा को दे देना, ज़ैद मदरसा में दे देता है और जो ये कह दें कि किसी तालिबे इल्म को दे देना तो वह अपनी सवाब दीद पर किसी तालिबे इल्म को दे देता है। कभी कोई यूं कह देता है कि जिसे आप मुनासिब समझें दे दें। किसी से बेतकल्लुफ़ी की बिना पर ज़ैद यूं भी तसरीह करा लेता है कि जो मुस्तहिक़ हो उसे दे दूं? तालिबे इल्म हो या ग़ैर तालिबे इल्म, वह यूं कह देता है जी हाँ जिसे चाहें दे दें। किसी से ज़ैद यूं भी कह देता है कि आप मुझे पैसे दे दें मैं इंशाअल्लाह सही मसरफ़ में सर्फ़ कर दूंगा, वह दे देता है। मज़कूरा रुकूम से ज़ैद कुछ तो मसारिफ़ में सर्फ़ कर देता है और कुछ अपनी नादारी व मुफ़लिसी और मक़रूज़ होने की बिना पर ख़ुद इस्तेमाल कर लेता है।

ज़ैद ने ये मस्अला सुना हुआ था कि अगर मुअ़ती (देने वाला) कहे कि– "जिसे चाहो दे दो" तो मुस्तहिक़ होने की बिना पर वकील ख़ुद भी रख सकता है। अब ज़ैद को एहसास हुआ कि शामी के जुज़्ईया का ये मफ़हूम नहीं है। ज़ैद मुतफ़क्किर व मग़मूम है कि ये मैंने क्या किया। न तो हिसाब याद है कि किस के कितने पैसे

ख़ुद सर्फ़ किए और कितने दिए और अगर तख़मीना लगाया जाए, तो पैसे कहां? और न ही देने वालों को आगाह किया जा सकता है, ये बहुत शरमिंदगी की बात है, क्योंकि इसको अच्छा तसव्वुर करते नहीं हैं। अब क्या किया जाए?

बहिश्ती ज़ेवर अख़्तरी जिल्द–3 सफ़्ह–31 में है कि अगर तुम ने ये कह दिया हो कि जो चाहे करो और जिसे चाहे दे दो तो आप (वकील) का भी ले लेना दुरुस्त है और "जिसे चाहे दे दो" अगर अत्फ़ तफ़सीरी है तो ज़ाहिर है। बसूरते दीगर ये किस का तर्जुमा है?

जवाबः इस सूरत में ज़कात अदा नहीं हुई। शामी का जुज़्ईया "ضعها حيث شئت" का तर्जुमा है "जहां चाहो ख़र्च करो" ये जुमलए तमलीक है और "जिसे चाहो दे दो" जुमलए तौकील है, उर्फ़ आम में "बहिश्ती ज़ेवर" के दूसरे जुमला को जुमलए ऊला पर तफ़रीअ क़रार दिया जाता है। यानी बाद तमलीक चाहो अपने मसरफ़ में लाओ या दूसरे को दे दो।

गुज़श्ता की तलाफ़ी की कोई सूरत नज़र नहीं आ रही है, ये सिर्फ़ एक तदबीर हो सकती है कि मुज़क्की यानी जिन लोगों ने ज़कात का वकील बनाया था, उनसे कहे कि– लाइल्मी की वजह से मुझ से रक़म ग़ैर मसरफ़ में लग गई है, जिस का ज़मान मुझ पर वाजिब है और मेरी हिम्मत व इस्तिताअत नहीं कि आप का ये क़र्ज़ अदा कर सकूं। इसलिए आप मुझे इतनी रक़म मद्दे मज़कूरा से दे कर बमद्दे क़र्ज़ मुझ से वापस ले लें। वल्लाहु तआला आलमु। (अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–298)

मस्अलाः ख़ुद रख लेने और सर्फ़ कर लेने में ज़कात

अदा नहीं होती। उसके (ज़ैद के) ज़िम्मा ज़मान उस रुपये की वाजिब है और बाद सर्फ़ कर लेने के ज़ैद का जाइज़ रखना काफ़ी नहीं है और उससे ज़कात अदा न होगी।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–98 बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–14 किताबुज़्ज़कात)

वकील के पास से ज़कात की रक़म ज़ाए हो जाए तो क्या हुक्म है?

सवालः ज़ैद ने ख़ालिद को ज़कात की रक़म किसी मिस्कीन को अदा करने के लिए दी; जो ख़ालिद के पास से ज़ाए हो गई। ऐसी सूरत में ज़ैद के ज़िम्मा जो ज़कात वाजिबुलअदा थी वह अदा होगी या नहीं? तो क्या ख़ालिद के ज़िम्मा उस रक़म का ज़ैद को वापस करना वाजिब होगा?

जवाबः ज़ैद की ज़कात अदा नहीं हुई, अगर ख़ालिद ने हिफ़ाज़त में ग़फ़लत नहीं बरती तो ख़ालिद उस रक़म का ज़ामिन न होगा। (अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–289)

ज़कात में हीला करना कैसा है?

मदारिस में चंदा दवामी बहुत कम है और मद्दे ज़कात व सदक़ए वाजिबा मसलन कफ़्फ़ारा (रोज़ा) व चर्म क़ुर्बानी वग़ैरा वग़ैरा का रुपया ज़्यादा जमा होता है। चूंकि चंदा दवामी में से मुदर्रिसीन की तन्ख़्वाह पूरी नहीं होती और ज़कात का रुपया जमा होता है। इसलिए मदरसा वाले इस तरह हीला कराते हैं कि किसी ग़रीब को वह रुपये दे कर मालिक बना देते हैं और उससे ये कह देते हैं कि तुम अपनी तरफ़ से मदरसा में दे दो। इस तरह हीला

कर के ज़कात का रुपया मुदर्रिसीन की तन्ख़्वाह में सर्फ़ कर सकते हैं या नहीं?

जवाबः यह हीला दुरुस्त है और इस हीला के बाद मुदर्रिसीन की तन्ख़्वाह में ख़र्च करना जाइज़ है और जिस क़दर रुपये का हीला चाहे एक वक़्त करे, क्योंकि इसमें क़द्रे निसाब की शर्त लाज़िमी नहीं है, सिर्फ़ औला और ग़ैर औला का फ़र्क़ है। और हीला करने वालों और कराने वालों को कुछ गुनाह नहीं है। नीयते सालेह पर सवाब की उम्मीद है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–104 बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–16 व फ़तावा महमूदिया जिल्द–3 सफ़्हा–30 व किफ़ायतुलमुफ़्ती जिल्द–4 सफ़्हा–286)

हीला में शर्त लगाना कैसा है?

सवालः ज़कात की रक़म ग़रीबों को यूं कह कर दे दे कि इसको क़बूल कर के फ़लां मदरसा में दे दे तो ज़कात अदा होगी या नहीं?

जवाबः मदार नीयत पर है, वह दुरुस्त होगी तो ज़कात अदा हो जाएगी वरना अदा न होगी। सूरते मस्ऊला में अदाएगी के सिलसिला में शुब्हा है। कोई शख़्स हीला करने पर मजबूर हो तो ज़कात की रक़म का हक़दार को कुछ कहे बग़ैर मालिक बना दे फिर उसको मदरसा वग़ैरा में देने की तरग़ीब दे, अगर वह ख़ुश दिली से दे दे तो फ़बहि, वरना उस पर कोई इलज़ाम नहीं। यानी अगर वह ख़र्च करना क़बूल न करे तो उस पर किसी क़िस्म का इलज़ाम नहीं, क्योंकि वह शख़्स मालिक हो चुका। नीयत व तरीक़एकार की दुरुस्तगी पर पूरा दारोमदार है। वह दुरुस्त हो तो ज़कात भी अदा हो जाएगी। तमलीक के

लिए ज़ाहिरी रद्दोबदल काफ़ी नहीं है।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–2 सफ़्हा–9 व फ़तावा महमूदिया जिल्द–3 सफ़्हा–55)

हीला में तमलीक की शर्त क्यों है?

सवाल: दीन की ख़िदमत अंजाम देने वालों को ज़कात से मुशाहरा देना दुरुस्त है या नहीं? और इमाम साहब (रह.) ने तमलीक की शर्त क्यों लगाई है। "اِنَّمَا الصَّدَقَات لِلْفُقَرَاء الخ" में लाम मनफ़अ़त के लिए भी हो सकता है। उसको तमलीक पर महमूल करने का क्या मंशा है। इस बारे में कोई सरीह हदीस है या नहीं?

जवाब: ज़कात में 'तमलीके फ़ुकरा वग़ैरा शर्त है, जैसा कि आयत "اِنَّمَا الصَّدَقَات لِلْفُقَرَاء الآيه" से मुस्तफ़ाद है क्योंकि अव्वल तो सदक़ा का लफ़्ज़ ही तमलीके फ़क़ीर को चाहता है और फिर लामे तमलीक इसकी सरीह दलील है और नफ़ा के लिए कहना भी उसके मुनाफ़ी नहीं है। क्योंकि नफ़ा ताम बाद तमलीक के मुमल्लक लहू को (जिसको मालिक बनाया गया) हो सकता है और हदीस शरीफ़ में "تُؤخَذُ مِنْ اَغْنِيَائِهِمْ وَتُرد اِلٰى فُقَرَائهم (ردالمحتار جلد–۲ صفحه–۸۳ باب المصرف) भी इसकी दलील है। क्योंकि "تؤخذ" से ख़ुरूज अन मिलकिल अग़निया साबित है यानी मालदारों की मिलकियत से निकलना माल का साबित हो रहा है और "الى فقرائهم" मिल्के फ़ुक़रा को मुक़्तज़ी है।

बहरहाल जबकि ज़कात में तमलीके फ़ुक़रा ज़रूरी हुई और सदक़ा का लफ़्ज़ इसको चाहता है कि बिला किसी मुआवज़ा के हो, वरना सदक़ा न रहेगा तो मुलाज़िमीन व मुदर्रिसीन की तन्ख़्वाह में देना ज़कात का जाइज़ न

हुआ और ऐसे मसारिफ़ में ख़र्च करने के लिए हीलए तमलीक ज़रूरी है। वरना ज़कात अदा न होगी। चुनांचे साहबे हिदाया जगह जगह अदमे तमलीक को अदमे इल्लते जवाज़ क़रार देते हैं।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–274 बहवाला हिदाया बाब मन यजूज़ो दफ़्उस्सदक़ात जिल्द–1 सफ़्हा–188 व फ़तहुलक़दीर जिल्द– सफ़्हा–223)

अगर हीला में तमलीक मक़्सूद न हो?

सवालः बाज़ हज़रात ज़कात का रुपया तबलीग़ के लिए देते हैं और ये कह देते हैं कि हीला कर लिया जाए जबकि तमलीक में लेने वाला और देने वाला दोनो बख़ूबी जानते हैं कि तमलीक मक़्सूद नहीं है तो क्या उस हीला से ज़कात भी अदा हो जाएगी? और वह रुपया इस ग़रज़ के लिए जाइज़ भी हो जाता है या नहीं?

जवाबः हीला फ़ुक़्हा ने लिखा है और शरअन जाइज़ है और ये उमूर जिनको आप ने लिखा है मानेअ़ इस हीला से नहीं हैं, यानी बावजूद इन ख़्यालात के ये हीला सही है और इस हीला का कर लेना ज़रूरी है ताकि ज़कात देने वाले की ज़कात फ़ौरन अदा हो जाए। फिर मोहतमिम वग़ैरा व मुन्तज़िमीन को इख़्तियार हो जाता है कि जिस मसरफ़ में चाहें सर्फ़ करें।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–3 सफ़्हा–199)

मस्अलाः ज़कात में ये शर्त है कि तमलीके फ़ुक़रा हो यानी मुहताजों को उसका मालिक बना दिया जाए और तमलीके फ़ुक़रा न होगी तो ज़कात अदा नहीं होगी। पस अगर सिवाए ज़कात की रक़म के और कोई सूरत चंदा

की नहीं है तो ज़कात के रुपये को उस काम में ख़र्च करने के जवाज़ की ये सूरत है कि ज़कात की रक़म का मालिक अव्वल किसी ऐसे शख़्स को बना दिया जाए कि वह मालिके निसाब न हो, फिर वह अपनी तरफ़ से जलसा के मसारिफ़ में सर्फ़ कर दे तो इस सूरत में ज़कात देने वालों की ज़कात भी अदा हो जाएगी और जलसा के मसारिफ़ का भी इंतिज़ाम हो जाएगा और इसकी तशरीह ज़बानी किसी वाक़िफ़ से कर लें वह तमलीक की सूरत को पूरी तरह समझा देंगे।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–269 बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–16 किताबुज़्ज़कात)

"हीला का मक़्सद अगर ख़्वाह मख़्वाह बिला वजह और बिला ज़रूरते शदीदा शरीअ़त के एक हुक्म को बेमअ़ना बना देना और अपनी ख़्वाहिशात की तकमील और नफ़ा की तहसील हो तो ज़ाहिर है कि ये नाजाइज़ होगा और इन्दल्लाह इसकी बाज़ पुर्स भी होगी। लेकिन अगर किसी वाक़ई दीनी मसलिहत के पेशे नज़र ऐसा करना नागुज़ीर हो जाए तो इजाज़त है। क्योंकि हीला की अस्ल ये है कि क़ानूनी और उसूली बात तय हो जाती है। मसलन ज़कात का मसरफ़ फ़क़ीर व मुहताज और मुस्तहिक़ है वह उसे मिल गई। अब वह बहैसियत मालिक होने के जो चाहे कर सकता है। ये अलग बात है कि हीला ख़्वाह मख़्वाह करना कराना मुनासिब नहीं है। इसलिए कि

ज़कात के मसारिफ़ मुतअैयन हैं। हीला के बाद जो अस्ल मुस्तहिक़्क़ीन हैं वह अमलन महरूम रह जाते हैं। इसीलिए हज़रत मफ़्ती अल्लाम (रह.) फ़रमा रहे हैं कि अगर इंतिहाई मजबूरी है कि कोई रक़म अतीया वग़ैरा की नहीं है और न मिलने की उम्मीद हो तो इस मजबूरी के तहत ये सूरत इख़्तियार की जाए। वल्लाहु आलम।"

(मुहम्मद रफ़अत क़ासमी ग़ुफ़िरलहू)

मस्जिद के लिए हीलए तमलीक करना कैसा है?

सवाल: एक मस्जिद में पंखे की ज़रूरत थी। मुतवल्लिये मस्जिद ख़ुद मसरफ़े ज़कात था। मैंने ज़कात की नीयत से पंखा मुतवल्ली को दे दिया और उसने वह पंखा अपनी तरफ़ से मस्जिद में लगा दिया। क्या मेरी तरफ़ से ज़कात की अदाएगी सही हो गई?

जवाब: अगर आप ने मुतवल्ली को मालिक बना दिया हो ख़्वाह मस्जिद में देने की शर्त से या बग़ैर शर्त, उसने आपकी मरौव्वत में बिला तीबे ख़ातिर मस्जिद को दे दिया तो बहरहाल ज़कात अदा होगी। मगर शर्त लगाने या बिला शर्त मरौव्वतन मस्जिद को देने का आप को गुनाह होगा और पंखा मस्जिद में लगाना जाइज़ न होगा। बतीबे ख़ातिर हो तो जाइज़ है।

(अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–296)

मस्अला: ज़कात की रक़म से मस्जिद का जनरेटर नहीं ख़रीदा जा सकता है। अलबत्ता ये हो सकता है कि कोई ग़रीब आदमी क़र्ज़ लेकर जनरेटर ख़रीद कर मस्जिद

को दे दे और ज़कात की रक़म उस ग़रीब को क़र्ज़ अदा करने के लिए दे दी जाए।

(आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–386)

हीला के ज़रीआ क़ब्रस्तान के लिए ज़मीन वक़्फ़ करना

सवालः एक शख़्स ज़कात की रक़म से क़ब्रस्तान के लिए ज़मीन ख़रीद कर वक़्फ़ करना चाहता है। इस तौर से कि ज़कात का माल किसी मुहताज को दे दिया जाए और वह ज़मीन ख़रीद कर क़ब्रस्तान के लिए वक़्फ़ कर दे तो ज़कात अदा होगी या नहीं? और सवाब मुहताज को होगा या ज़कात दिहिन्दा को भी?

जवाबः इस तरीक़ से ज़कात अदा हो जाएगी। अव्वल किसी मुहताज को वह रुपये ज़कात का दे दिया जाए और उसको मालिक बना दिया जाए। फिर उसको मश्वरा दिया जाए कि वह इस रुपया से ज़मीन ख़रीद कर क़ब्रस्तान के लिए वक़्फ़ कर दे तो ये सूरत जाइज़ है, लेकिन मालिक होने के बाद उसको इख़्तियार है कि वह ऐसा करे या न करे और अगर वह ऐसा करे तो सवाब दोनों को होगा।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–287 बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–16 व फ़तावा महमूदिया जिल्द–13 सफ़्हा–99)

ज़कात की रक़म से क़ब्रस्तान पर क़ब्ज़ा लेना कैसा है?

सवालः हमारे शहर में चंद मसाजिद और क़ब्रस्तान ग़ैर मुस्लिम के क़ब्ज़ा में आ गए हैं और उनमें निहायत बेअदबी होती है। आया उनको छुड़ाने के लिए ज़कात का रुपया काम आ सकता है या नहीं?

जवाबः ज़कात के रुपया से ये काम नहीं हो सकता

क्योंकि ज़कात के अदा होने के लिए ये ज़रूरी है कि किसी मुहताज या चंद मुहताजों और मसाकीन को बिला मुआवज़ा उस रुपये का मालिक बना दिया जाए।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–266 बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–2 सफ़्हा–85 व फ़तावा महमूदिया जिल्द–13 सफ़्हा–99)

क़ब्रस्तान में ज़कात की रक़म सर्फ़ करना कैसा है?

सवालः एक क़ब्रस्तान में मस्जिद है और उसके चार तरफ़ तालाब है तो अगर बग़रज़े हिफ़ाज़त अराज़ीए क़ब्रस्तान में ज़कात का रुपया सर्फ़ करें तो कैसा है?

जवाबः मस्जिद की तामीर और क़ब्रस्तान दोनों जगह ज़कात का रुपया सर्फ़ करना दुरुस्त नहीं है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–213 बहवाला आलमगीरी बाबुलमसारिफ़ जिल्द–1 सफ़्हा–188)

मुक़द्दमा में ज़कात की रक़म देना कैसा है?

मस्अलाः अगर वह (साहबे मुक़द्दमा) मुस्तहिक़्क़े ज़कात है और उसको ज़कात का रुपया दे दिया जाए और वह उस रुपये पर क़ब्ज़ा कर के अपने मुक़द्दमा में ख़र्च करे तो ज़कात अदा हो जाएगी। और अगर ज़कात का रुपया (साहबे मुक़द्दमा को) न दिया बल्कि बिरादरी (पंचाइत वग़ैरा) जमा कर के उसके मुक़द्दमा में ख़र्च करे तो इससे ज़कात अदा नहीं होगी। (फ़तावा महमूद्दिया जिल्द–3 सफ़्हा–52)

"चूंकि बिरादरी के जमा करने की सूरत में मुस्तहिक़ को मालिक बना कर देना नहीं पाया गया जो ज़कात की अदाएगी के लिए ज़रूरी है। इसलिए ज़कात अदा नहीं हुई

है।" (मुहम्मद रफ़अत क़ासमी गुफ़िरलहू)

अश्या की शक्ल में ज़कात देना कैसा है?

मस्अला: ज़कात के रुपये से किसी मुस्तहिक़ को कपड़े बना कर दे दिए जाऐं तो ये भी दुरुस्त है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–196)

मस्अला: ज़कात की रक़म से चावल ख़रीद कर साल भर तक फ़क़ीरों को भीक देने (तक़्सीम करने) से ज़कात अदा हो जाएगी।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–233 बहवाला रद्दुलमुह्तार बाबुलग़नम जिल्द–2 सफ़्हा–29)

मस्आला: अगर अपना अज़ीज़ (मुस्तहिक़्क़े ज़कात) ज़कात के नाम से रुपया लेता हुआ शरमाए तो इस तरह कह कर देना दुरुस्त है कि इस रक़म से बच्चों के कपड़े (मेरी तरफ़ से) बनवा देना, अपनी नीयत दिल में ज़कात की कर लेना काफ़ी है। जिसको दी जाए उस पर ज़ाहिर करने की ज़रूरत नहीं है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–197 बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–1 सफ़्हा–17)

मस्अला: ज़कात की रक़म से मुस्तहिक़्क़ीन को खाना पका कर खिला दिया जाए (यानी उनको दे दिया जाए, मालिक बन दिया जाए) या कोई चीज़ ख़रीद कर दे दी जाए तो दुरुस्त है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–205 व फ़तावा महमूदिया जिल्द–13 सफ़्हा–215)

"लेकिन मुस्तहिक़्क़ीन को मालिक बना देना चाहिए।" (मुहम्मद रफ़अत क़ासमी गुफ़िरलहू)

मस्अला: अगर कोई शख़्स ज़कात का ग़ल्ला फ़रोख़्त कर के किसी मिस्कीन को खाना खिलाए (मालिक बना

दे) या कपड़ा बना दे तो दुरुस्त है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–201)

मस्अला: मुस्तहिक़्क़ीन को अश्या (सामान वग़ैरा) की शक्ल में ज़कात दी जा सकती है, लेकिन ये एहतियात मलहूज़ रहे कि रद्दी व ख़राब क़िस्म की चीज़ें न दी जाएं।

(आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–382)

मस्अला: अपनी ज़कात में रुपये (रक़म, नक़द, कैश) के बजाए ग़ल्ला या कपड़ा ख़्वाह घर से (अगर मौजूद हो) ग़ल्ला कपड़ा वग़ैरा हिसाब कर के दे दे या बाज़ार से ख़रीद कर दे दे, दोनों सूरतों में ज़कात अदा हो जाएगा।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–85)

ज़कात की रक़म इफ़्तारी या शबीना में ख़र्च करना?

मस्अला: रमज़ानुलमुबारक की इफ़्तारी या शबीना में ज़कात का देना (ख़र्च करना) इस तरह तो जाइज़ है कि वह इफ़्तारी खाने वाले या शबीना का खाना खाने वाले मिस्कीन हों (ग़ैर साहबे निसाब) और तमलीकन उनको खाना या इफ़्तारी तक़्सीम कर दिया जाए। और अगर (खाना खिलाने में) मालदार ग़नी हों तो जाइज़ नहीं है।

(किफ़ायतुलमुफ़्ती जिल्द–4 सफ़्हा–158)

ज़कात की रक़म से दीनी कुतुब व क़ुरआन मजीद तक़्सीम करना?

सवाल: एक दीनी किताब छपवाई गई और ताजिराना निर्ख़ पर क़ीमत लगा कर मुस्तहिक़्क़ीने ज़कात को दी गई। बक़द्रे ज़कात से ज़ाएद नुस्ख़े अह्ले इल्म हज़रात जो कि मुस्तहिक़्क़ीने ज़कात नहीं) को बतौर हदया दिए गए तो क्या इस सूरत में शरअ़न ज़कात की अदाएगी में

कोई क़बाहत तो नहीं?

जवाबः सूरते मस्ऊला में बिला शुब्हा बग़ैर किसी क़बाहत के ज़कात अदा हो गई। बल्कि ये कुतुबे दीनीया की इशाअत का बेहतरीन ज़रीआ है।

(अहसुनलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–283)

मस्अलाः मद्दे ज़कात में हर चीज़ राएज क़ीमत पर लगा कर दी जा सकती है। बशर्तेकि बसूरते तमलीक दी जाए, यानी फ़क़ीर को उसका मालिक बना दिया जाए। पस दीनी किताबें अगर मुस्तहिक़्क़ीन की मिल्क में दे दी जाऐं तो ज़कात अदा हो जाएगी। हां अगर मदरसा में वक़्फ़ कर दें या तलबा को आरियतन मुतालआ के लिए दें तो ज़कात अदा न होगी।

(अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–292)

मस्अलाः कुरआन शरीफ़ ज़कात के रुपये से ख़रीद कर अगर ग़रीब लड़कों या बड़ों को तक़्सीम कर दिए जाऐं तो ये जाइज़ है और ज़कात अदा हो जाती है। और जो कुरआन शरीफ़ अमीरों को दिया उसकी क़ीमत के मुवाफ़िक़ ज़कात अदा न होगी। वह फिर देनी होगी।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–273 बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–71)

मस्अलाः अगर ज़कात की रक़म से दीनी किताबें ख़रीद कर या छपवा कर मुस्तहिक़ उलमा और तलबा को मालिक बना दिया जए या मद्दे ज़कात से दीनी किताबें छपवा कर ताजिराना निर्ख़ (रेट) पर क़ीमत लगा कर मुस्तहिक़्क़े ज़कात अह्ले इल्म को दे दी जाऐं तो दोहरा सवाब मिलता है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–215 व

अहसनुलफ़तावा जिल्द-4 सफ़्हा-282)

ज़कात की रक़म से किताबें ख़रीद कर वक़्फ़ करना कैसा है?

सवालः माले ज़कात से अगर कोई शख़्स किसी मदरसा इस्लामिया के कुतुब ख़ाना (लाइब्रेरी) के लिए किताबें ख़रीद कर वक़्फ़ कर दे?

जवाबः ज़कात में तमलीके मुहताज शर्त है। मालिक बनाए बग़ैर ज़कात अदा न होगी, या तो जक़ात की रक़म वैसे ही ग़रीब तलबा को तक़्सीम कर दे। और अगर कपड़े या किताबें उससे बना दे या ख़रीदे तो वह ममलूक गुरबा की कर दे, यानी उनको दे दे और, तक़्सीम कर दे, मालिक बना दे। किसी मदरसे के कुतुब ख़ाना में वह किताबें रखने (वक़्फ़ करने) से ज़कात अदा न होगी।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द-6 सफ़्हा-262)

ज़कात की रक़म से ख़रीदी हुई किताबें मुतालआ कराने के लिए रखना

मस्अलाः अगर दीनी किताबें ख़रीद कर अपने पास (इस तौर पर) रखे कि जिसको ज़रूरत हो वह देख (मुतालआ कर) ले मगर किसी को ले जाने की इस तौर से इजाज़त नहीं कि वह मालिक बन जाए तो इस सूरत में ज़कात अदा न होगी।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द-6 सफ़्हा-198)

ज़कात की रक़म से स्कूल का सामान ख़रीदना?

सवालः एक शख़्स अपनी ज़कात की रक़म से स्कूल में बच्चों के लिए कुर्सी तख़्त वग़ैरा बनाना चाहता है तो उस रक़म को किस तरह इस्तेमाल करे?

जवाबः अदाए ज़कात के लिए तमलीक शर्त है यानी

ज़कात के हक़दार को रक़म का बिला एवज़ मालिक व मुख़्तार बना देना ज़रूरी है और ये हक़ीक़त है कि मदरसा व स्कूल के साज़ो सामान के बनाने में ये इल्लत नहीं पाई जाती लिहाज़ा ज़कात अदा न होगी। हाँ अगर मुस्तहिक़्क़े ज़कात को बिला एवज़ मालिक बना दे और फिर वह अपनी तरफ़ से बख़ुशी सामान बनाने के लिए रक़म दे तो ज़कात अदा हो जाएगी और उसको भी सवाब मिलेगा लेकिन पहले से रक़म वापस लेने या सामान बना देने के मुतअ़ल्लिक़ गुफ़्तगू न करे। क्योंकि ज़ाहिरी लेने देने से ज़कात अदा न होगी। हक़ीक़तन तमलीक शर्त है।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–2 सफ़्हा–11)

ज़कात की रक़म से रिसाला जारी कराना कैसा है?

सवालः ज़कात का रुपया कोई शख़्स किसी रिसाला के इदारे में दे दे इस ख़्याल से कि रिसाला किसी नादार मुफ़्लिस को या तालिबे इल्म को साल भर तक पहुंचाया जाए तो क्या ज़कात अदा हो जाएगी?

जवाबः हामिदन व मुसल्लियन। जितनी क़ीमत का रिसाला मुफ़्लिस के पास पहुंचेगा उतनी ज़कात अदा हो जाएगी। ऐसा करना इदारा को वकील बनाना है कि तुम अव्वलन अपना रिसाला हमारे हाथ फ़रोख़्त कर दो। फिर हमारी तरफ़ से वकील हो कर वह रिसाला फ़लां शख़्स (मुस्तहिक़्क़े ज़कात) को दे दो, या ख़ुद ख़रीद कर फ़लां शख़्स को क़ब्ज़ा के लिए वकील बनाना है और बादलक़ब्ज़ उसको मालिक बनाना है और दोनों तरह ज़कात का अदा करना दुरुस्त है।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–3 सफ़्हा–50)

ज़कात की रक़म से कारख़ाना लगाना?

सवालः क्या ज़कात की रक़म से मिल और सनअ़ती कारख़ाने लगाए जा सकते हैं, ताकि ग़ुरबा व नादार मुस्तहिक़्क़ीने ज़कात की बेहतरी और मुस्तक़िल तौर पर मदद की जा सके?

जवाबः ज़कात की अदाएगी के लिए फ़क़ीर को मालिक बनाना शर्त है। सनअ़ती कारख़ाना लगाने से ज़कात अदा नहीं होगी।

हां! अगर कारख़ाना लगा कर एक फ़क़ीर (मुस्तहिक़) को या चंद फ़ुक़रा को आप उसका मालिक बना देते हैं तो जितनी मालियत का वह कारख़ाना है उतनी मालियत की ज़कात अदा हो जाएगी।

(आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–383)

ज़कात की रक़म से मकान बना कर किसी ग़रीब को दे देना?

मस्अलाः किसी ने ज़कात की रक़म अस्ल माल से अलग नहीं की है और मजमूआ़ रक़म से ज़ाती तौर पर एक मकान तामीर कर के जो रक़म ख़र्च हुई उसका हिसाब लगा कर ज़कात की नीयत से किसी नादार बे घर फ़क़ीर को मकान का मालिक बना कर फ़क़ीर के नाम रजिस्ट्री करा के क़ब्ज़ा दिला दिया और उसमें अपना कोई हक़ व तअ़ल्लुक़ बाक़ी नहीं रखा तो इस तरह मकान बना देना बिला कराहत जाइज़ और दुरुस्त है। इसलिए कि फ़क़ीर को इससे मालदार साहबे निसाब नहीं बनाया गया बल्कि सिर्फ़ ज़रूरत का मकान फ़राहम हुआ है।

मस्अलाः ज़कात की रक़म ज़कात की नीयत से अलग रख दी है और अपनी ज़ाती रक़म से मकान बना कर

ज़कात की नीयत से फ़क़ीर को मालिक बना कर रजिस्ट्री क़ब्ज़ा दे दिया है फिर मद्दे ज़कात से उतनी रक़म वापस ले लेता है तो यह सूरत भी बिला कराहत जाइज़ है।

मस्अला: फ़क़ीर को निसाब से कुछ कम कर के क़िस्तवार रक़म देता रहे और वह फ़क़ीर रक़म को तामीर में ख़र्च करता जाए। अगर फ़क़ीर के पास ज़मीन नहीं तो पहले ज़मीन ख़रीद कर मालिक बना दिया जाए। और उसके बाद क़िस्तवार ज़कात की रक़म देता रहे और फ़क़ीर तामीर करता रहे और इस तरह मकान मुकम्मल कर ले तो ये सूरत भी जाइज़ है। (इज़ाहुलमसाइल सफ़्हा–115 व अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–490)

ज़कात की रक़म से सूसाइटी के ज़रीआ मकान बनवाना?

मस्अला: किसी कमेटी या सूसोइटी को ज़कात की रक़म दे दी जाए और वह ज़कात की रक़म से मकान की तामीर करा कर फ़क़ीर को मालिक बना दे जैसा कि बाज़ जगह ऐसा अमल जारी है। इसमें ज़कात तो अदा हो जाती है लेकिन इसमें कई ख़राबियां लाज़िम आती हैं कि ज़कात की रक़म का फ़क़ीर को मालिक बनाने से पहले वह रक़म असबाबे तामीर की ख़रीदारी में सर्फ़ कर दी जाती है और ज़कात की अस्ल रक़म फ़क़ीर तक नहीं पहुंच पाती है और दरमियान में तब्दीली हो जाती है। तो ऐसी सूरत में अगरचे ज़कात अदा हो जाती है लेकिन ये अम्र ममनूअ़ है। अब इस सूरत का बेहतरीन हल ये हो सकता है कि पहले कमेटि को अपनी मजमूई अस्ल रक़म से मकान बनाने का वकील बनाया जाए और जब मकान तैयार हो जाए तो उसके बाद हिसाब लगा कर ज़कात

की नीयत से फ़क़ीर को मकान का मालिक बना कर रजिस्ट्री व क़ब्ज़ा दे दिया जाए और उतनी रक़म मद्दे ज़कात से वसूल कर ली जाए तो बिल कराहत जाइज़ हो सकता है। लेकिन अगर कमेटि से रक़म ज़ाए हो जाए तो कमेटी ज़ामिन भी नहीं होगी। क्योंकि कमेटी महज़ वकील और अमीन है और अमानत की रक़म हलाक होने से तावान लाज़िम नहीं आता।

मज़कूरा चारों सूरतों में साहबे निसाब अगर अपने एहसान की वजह से फ़क़ीर पर किसी क़िस्म का या किसी बात में दबाव डालता है तो सारा सवाब राएगाँ हो जाएगा और फ़क़ीर की मिलकियत में कोई भी फ़र्क़ नहीं आएगा। (ईज़ाहुलमसाइल सफ़्हा–116 व फ़तावा रहीमिया जिल्द–5 सफ़्हा–161)

ज़कात की रक़म से शराइत के साथ मकान तक़सीम करना

सवालः मालूम ये करना है कि ज़कात की मद से तामीर किए गए फ़्लेट हसबे ज़ैल शराइत पर मुस्तहिक़्क़ीने ज़कात को दिए गए हैं। तो ज़कात देने वालों की ज़कात अदा हो जाती है या नहीं? शराइत ये हैं–

(1) ये फ़्लैट कम अज़ कम पांच साल तक आप किसी के हाथ बेच नहीं सकेंगे। ज़्यादा की कोई हद नहीं। (2) मुतअल्लिक़ा फ़्लेट आपको इस्तेमाल के लिए दिया जा रहा है। उसमें आप किरायादार नहीं रखेंगे। पगड़ी पर नहीं दे सकेंगे और दूसरे शख़्स को इस्तेमाल के लिए भी नहीं दे सकेंगे। (3) अगर आप ने ये फ़्लेट किसी को पगड़ी पर दिया या किराया पर दिया तो उसकी इत्तिला जमाअ़त (कमेटी) को मिलने पर आपके फ़्लैट का

हक़ मनसूख़ कर दिया जाएगा। (4) फ़्लेट की रक़म जो जमाअ़त मुक़र्रर करे वह हर माह अदा कर के उसकी रसीद हासिल करनी पड़ेगी। (5) फ़्लेट की विसातत किसी दूसरे फ़्लेट के क़ब्ज़ादार से बदली नहीं किया जा सकेगा। (6) उस इमारत की छत जमाअ़त के क़ब्ज़ा में रहेगी। (7) मुस्तक़बिल में फ़्लेट बेचने या छोड़ने की सूरत में जमाअ़त से नोऑबजेक्शन सर्टीफ़ीकेट हासिल करने के बाद मज़ीद कारवाई हो सकेगी। (8) ब्यान करदा शराइत के अलावा जमाअ़त की जानिब से अमल में आने वाले नए अहकामात और शराइत को मान कर उन पर भी अमल करना होगा।

ब्यान करदा शराइत की ख़िलाफ़ वरज़ी करने वाले मिम्बर से जमाअ़त फ़्लेट ख़ाली करा सकेगी। और उसमें रहने वाले को उस पर अमल करना और क़ानूनी हक़ से छोड़ना होगा।

बराहे मेहरबानी जवाब इनायत फ़रायें। क्योंकि हमारे यहां इस स्कीम में करोड़ों रुपये ज़कात की मद में लोगों से वसूल कर के लगाए जा रहे हैं।

जवाबः ज़कात जब अदा होती है जबकि मुहताज को ज़कात के माल का मालिक बना दिया जाए और ज़कात देने वाले का उस (रक़म) से कोई तअल्लुक़ और वास्ता न रहे। आप के ज़िक्र करदा शराइत नामा में जो शर्तें ज़िक्र की गई हैं वह आरियत की हैं। (आरज़ी तौर पर देने की) तमलीक की नहीं। लिहाज़ा उन शराइत के साथ अगर किसी को ज़कात की रक़म से फ़्लेट (मकान वग़ैरा) बना कर दिया गया तो ज़कात अदा नहीं होगी। ज़कात के अदा होने की सूरत यही है कि जिन लोगों को ये

फ़्लेट दिए जायें उनको मालिक बना दिया जाए और मिलकियत के कागज़ात समेत उनको मालिकाना हुकूक़ दिए जायें कि ये लोग उन फ़्लेटों में जैसे चाहें मालिकाना तसर्रुफ़ करें और जमाअ़त (कमेटी या सूसाइटी) की तरफ़ से उन पर कोई पाबंदी न हो। अगर उनको मालिकाना हुकूक़ न दिए गए तो उन ज़कात देने वालों की ज़कात अदा नहीं हुई और उन पर लाज़िम होगा कि अपनी ज़कात दोबारा अदा करें।

(आपके मसाइल जिल्द—3 सफ़्हा—389)

ज़कात की रक़म से मकान बना कर मुस्तहिक़्क़ीन को मामूली किराया पर देना?

सवालः हम लोगों ने एक कित्अ़ए ज़मीन किराया पर लिया है। उसमें मकानात तामीर कर के गुरबा को मामूली किराया पर देने का इरादा किया है और ये मकानात ज़कात की रक़म से तामीर किए जाऐंगे और ज़मीन का किराया हमें अदा करना पड़ेगा तो इस तरह मकानात की तामीर में ज़कात की रक़म इस्तेमाल करने से ज़कात अदा होगी या नहीं?

जवाबः सूरते मस्ऊला में ज़कात के पैसों से ज़मीन ख़रीदना या मकानात तामीर कराना दुरुस्त नहीं है। ज़कात अदा न होगी। इसलिए कि ज़कात की अदाएगी के लिए ये शर्त है कि ज़कात के हक़दारों को बिला शर्त, ऐवज़ मालिक बना दिया जाए और वह शर्तें यहां पाई नहीं जा रही हैं। (फ़तावा रहीमिया जिल्द—5 सफ़्हा—151)

ग़रीब को बग़ैर किराया के ज़कात की नीयत से रखना?

मस्अलाः माल के एक हिस्सा का मालिक, मुसलमान

मुस्तहिक़ को बना देना ज़कात है। माल का हिस्सा कहने से नफ़ा ख़ारिज हो गया, यानी नफ़ा ज़कात में महसूब नहीं होगा। मसलन किसी ने फ़क़ीर को अपने घर में (बग़ैर किराया के) साल भर अदाए ज़कात की नीयत से रखा तो इससे उसकी ज़कात अदा नहीं होगी। इसलिए कि इस सूरत में घर वाले ने नफ़ा का मालिक बनाया है माल का नहीं बनाया। क्योंकि ये मनफ़अ़त (यानी रिहाइश का फ़ाएदा) ऐन मुतक़ौवमा (क़ीमती माद्दी शय) नहीं है।

(फ़िक़्हुज़्ज़कात जिल्द–1 सफ़्हा–168)

ज़कात की रक़म से ग़रीब के मकान की मरम्मत कराना?

मस्अला: अगर मुस्तहिक़ को ज़कात की रक़म न दी बल्कि उसके घर की मरम्मत (ठीक कराने) में ख़र्च कर दिया तो ज़कात अदा न होगी। बल्कि ये ज़रूरी है कि वह रक़म ज़काम के मुस्तहिक़ को दे कर उसको क़तई तौर पर मालिक बना दिया जाए फिर वह अपनी तरफ़ (मरज़ी) से मकान बनाए या मरम्मत कराए।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–241 बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–15)

हुकूमत से मुल्हक़ मदारिस में ज़कात देना?

सवाल: जो मदारिस गवर्नमेन्ट से मुल्हक़ हों, उनमें सदक़ए फ़ित्र, ज़कात, चर्मे कुर्बानी वग़ैरा देना कैसा है। जब कि हमें ख़ौफ़ इस बात का है कि आज नहीं तो कल ये मदारिस हमारे हाथों से निकल सकते हैं और हुकूमत उन पर क़ब्ज़ा कर सकती है।

जवाब: अगर उन मदारिस में इन रुकूम के मुस्तहिक़्क़ीन और मसारिफ़ मौजूद हों तो ये रुकूम बिला कराहत उन

पर देना जाइज़ रहेगी।

(निज़ामुलफ़तावा जिल्द–1 सफ़्हा–462)

मस्अलाः जबकि मरदसा के मसारिफ़ दूसरे ज़राए से पूरे हो जाते हैं तो ज़कात की रक़म हीला कर के ख़र्च न करनी चाहिए और अब चूंकि वह नीम सरकारी मदरसा हो गया है। इसलिए गुरबा और तलबाए मदारिसे इस्लामिया उसके मुक़ाबिल में ज़कात के ज़्यादा मुस्तहिक़ हैं।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–3 सफ़्हा–110)

जिस मदरसा में ज़कात की मद न हो वहां ज़कात देना?

सवालः ज़कात ऐसे मदारिसे इस्लामिया में देना जिसमें अलावा तन्ख़्वाहे मुदर्रिसीन के निसाब के दूसरे मद न हों जाइज़ है या नहीं?

जवाबः ऐसे मदरसा में ज़कात देना जाइज़ नहीं है और ज़कात अदा न होगी। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–251 बहवाला रद्दुलमुह्तार बाबुलमसरफ़ जिल्द–2 सफ़्हा–79)

फ़र्ज़ी मदरसा के नाम से ज़कात वसूल करना

सवालः किसी शख़्स ने ज़कात व फ़ित्रा व चर्म कुर्बानी वग़ैरा का रुपया वसूल कर लिया था कि फ़लां जगह मदरसा क़ाइम करूंगा और वह क़ाइम नहीं हुआ तो क्या दूसरे मदरसा में ख़र्च करना जाइज़ है? अगर ख़र्च न करे तो इन्दल्लाह माख़ूज़ होगा या नहीं?

जवाबः ज़कात को उसके मसरफ़ में सर्फ़ कर देना चाहिए। अगर एक मसरफ़ में किसी वजह से सर्फ़ नहीं हो सका तो दूसरे में सर्फ़ कर दे। जिसका बेहतरीन मसरफ़ तलबाए इल्मे दीन हैं, अगर ये शख़्स उसको

उसके मसरफ़ में सर्फ़ नहीं करेगा तो इन्दल्लाह माख़ूज़ (पकड़ा हुआ) होगा। उसको उसके ख़र्च करने का कोई हक़ नहीं है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–283 बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–14)

मुस्तहिक़ तलबा की आमद की उम्मीद पर चंदा करना?

सवालः एक मौलवी साहब ने एक मदरसा क़ाइम किया है जिसमें ख़ालिस अरबी व फ़ारसी की तालीम होती है। और वह हर क़िस्म का चंदा लेते हैं और फ़रमाते हैं कि कुछ रक़म जमा हो जाए तो यहां पर खाने का इंतिज़ाम किया जाएगा। क्या इस उम्मीद पर हर क़िस्म का चंदा लेना जाइज़ है?

जवाबः अगर फ़िलहाल ग़रीब मुस्तहिक़ तलबा के लिए रक़म नाकाफ़ी होने की वजह से खाने का इंतिज़ाम नहीं और वह इस कोशिश में लगे हुए हैं कि उसका इंतिज़ाम करें और उसकी ग़ालिब तवक़्क़ो हो तो वह उस रक़म को ले सकते हैं मगर इसका ख़्याल रहे कि जो रक़म जिस मद के लिए ली जाए उसी मद में उसका ख़र्च करना ज़रूरी है।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–12 सफ़्हा–234)

बाज़ दीनी दरसगाहों और फ़लाही इदारों की नाकामी का एक बड़ा और अव्वलीन सबब यही है कि चंदों के ज़रीए हासिल होने वाला जो सरमाया ख़र्च हुआ उसमें ये हक़ीक़त पेशे नज़र नहीं रखी गई कि उसमें माले हराम किस क़दर शामिल है और ग़सब के ये पत्थर, मदारिस की बुनियादों में नसब (लगाए) किए गए हैं जो उनकी नाकामी, ख़राबी और वीरानी की अस्ल और हक़ीक़ी वजह

बन गए, बल्कि "أَكَّالُونَ لِلسُّحْتِ" (हराम खाने पर गिरते हैं) के आदी सरमायादारों की रिफ़ाक़त ख़ुद उलमाए उम्मत की नेक नामी को दाग़दार कर गई।

(हाशिया फ़िक़्हुज़्ज़कात जिल्द–2 सफ़्हा–425)

मोहतमिम तलबा का वकील है या मुअ्ती का?

मस्अला: हामिदन व मुसल्लियन। मोहतमिमे मदरसा को अरबाबे अमवाल (मालदारों) ने सराहतन वकील बनाया है कि हमारा माल हसबे सवाबदीद मसारिफ़ में सर्फ़ कर दें। गुरबा का भी वकील है। इस तरह कि तलबा ने जब उसके एहतिमाम को तस्लीम कर लिया तो गोया ये कह दिया कि आप हमारे वास्ते अरबाबे अमवाल से ज़कात वग़ैरा वसूल कर के हमारी ज़रूरीयात (खाना कपड़ा वग़ैरा) में सर्फ़ कर दें।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–3 सफ़्हा–48 व फ़तावा महमूदिया जिल्द–12 सफ़्हा–220)

मस्अला: अगर अरबाबे मदरसा को तलबा का वकील तस्लीम कर लिया जाए तो ये शुब्हा ही (कि रुपया ज़कात बलदरीज ख़र्च होगा) वारिद नहीं होता, क्योंकि उसका क़ब्ज़ा तलबा का क़ब्ज़ा है। अगर अस्हाबे अमवाल का वकील माना जाए तो नफ़्सुलअम्र में ज़कात उस वक़्त अदा हो जाएगी जब कि तलबा पर तक़्सीम हो जाएगी लेकिन अगर ख़ुदा नख़्वास्ता (ज़कात वग़ैरा की रक़म) तक़्सीम से क़ब्ल इज़्तिरारन ज़ाए हो गई तो अरबाबे मदरसा पर ज़मान लाज़िम नहीं है। जैसा कि साई पर लाज़िम नहीं और अस्हाबे अमवाल की ज़कात साक़ित हो जाएगी। (फ़तावा महमूदिया जिल्द–3 सफ़्हा–41)

मस्अलाः अगर बावजूद हिफ़ाज़त पूरी सई व इंतिज़ाम के ऐसा हो जाए (यानी रक़मे ज़कात अगर मोहतमिम मदरसा या उसके नाइब से किसी नागहानी हादसे या किसी और वजह से तलफ़ हो जाए।) तो ज़मान लाज़िम नहीं। (फ़तावा महमूदिया जिल्द–3 सफ़्हा–47 बहवाला आलमगीरी जिल्द–2 सफ़्हा–342)

क्या ग़रीब मोहतमिम मदरसा की ज़कात इस्तेमाल कर सकता है?

सवालः मदरसा का मोहतमिम साहबे हाजत और क़र्ज़दार है क्या उसको अपने अह्ल व अयाल पर उस खाने वग़ैरा की चीज़ों का सर्फ़ करना जो तलबा के लिए माले सदक़ा व ज़कात लोगों ने दी है सर्फ़ कर सकता है, जाइज़ है या नहीं?

जवाबः मोहतमिम वक़्फ़े ज़कात व सदक़ा देने वालों का वकील होता है। उसको देने वालों की शर्त के ख़िलाफ़ तसर्रुफ़ करने का कोई हक़ नहीं, जबकि लोगों ने कुछ अश्या ख़ास तलबा के लिए दी हैं। मोहतमिम को ख़ुद या मुदर्रिसीन को इस्तेमाल करना जाइज़ नहीं है।

(किफ़ायतुलमुफ़्ती जिल्द–4 सफ़्हा–155)

क्या ज़कात की रक़म मोहतमिम को देने से अदा हो जाएगी?

सवालः मदरसा या किसी और इस्लामी अंजुमन में जब ज़कात का रुपया भेजा जाता है। उस पर किसी मिस्कीन मुस्तहिक़ का क़ब्ज़ा नहीं होता। बल्कि मोहतमिम के क़ब्ज़े में दी जाती है और वह मोहतमिम मिस्कीन नहीं होते तो ऐसी सूरत में ज़कात अदा हो गई या नहीं?

जवाबः मदारिस में जो रक़म ज़कात की आती है।

उसमें मदरसा के मोहतमिम ऐसी सूरत कर लेते हैं जिससे मुअ़ती (देने वाले) की ज़कात अदा होने में कुछ शुब्हा न रहे। वह ये कि उस रक़मे ज़कात को अव्वल किसी मिस्कीन को जो मसरफ़े ज़कात हो दे दी जाती है और उसकी मिल्क कर दी जाती है फिर वह शख़्स मदरसा के मसारिफ़ के लिए मोहतमिमे मदरसा को दे देता है, चूंकि ज़कात में तमलीके मिस्कीन ज़रूरी है। इसलिए तरीक़ए मज़कूरा पहले ही कर लिया जाता है ताकि कुछ शुब्हा न रहे। अलावा बरीं तलबा व मसाकीन उमदा मसरफ़ ज़कात के हैं, उनकी ख़ूराक व पौशाक में ज़कात की रक़म सर्फ़ करना बिला शुब्हा दुरुस्त है और मदारिस में ज़कात का रुपया तलबा व मसाकीन के मसारिफ़ में सर्फ़ होता है। बहरहाल आप कुछ तरद्दुद न कीजिए। बेतकल्लुफ़ रक़मे ज़कात से इमदादे तलबा फ़रमाइये कि उसका अज्र व सवाब डबल है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–86 बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–16)

मस्अला: ज़कात उसी वक़्त अदा होगी, जिस वक़्त तलबा को वह रक़म किसी सूरत से पहुंच जाए। मसलन कपड़ा या खाना या नक़द उनकी मिल्क कर दी जाए और मदारिस में अक्सर ऐसा कर लिया जाता है कि मोहतमिमे मदरसा व कारकुनाने मदरसा अव्वल ही रक़मे ज़कात की तमलीक करा कर ख़ज़ाना में रखते हैं, ताकि हसबे ज़रूरत सर्फ़ करते रहें।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–89 व रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–15 बाबुज़्ज़कात)

मुख़्तलिफ़ मद्दात का रुपया यकजा जमा करना?

सवाल: एक मदरसा में चंद मद्दात में रुपया वसूल होता है मसलन ज़कात, तामीरे मस्जिद, ख़ैरात वग़ैरा। मोहतमिमे मदरसा जुमला मद्दात का रुपया एक जगह कर के रखता है और हिसाब में आमद व जमा अलाहिदा अलाहिदा करता है। ख़र्च के वक़्त जिस खाते की जो रक़म होती है उसमें ख़र्च डालता है, तो क्या इस तरीक़े में ज़कात अदा हो जाएगी? क्योंकि जिसने तामीरे मस्जिद की मद में रक़म दी थी उसकी (वही) रक़म उसमें लगी या नहीं?

जवाब: अगर उर्फ़ यानी रिवाज मख़लूत कर देने मोहतमिम का, मुख़्तलिफ़ मद्दात की रुकूम को न होगा तो ये फ़ेल (तरीक़ा) मोहतमिम का नाजाइज़ और मूजिबे ज़मान होगा। और अगर उर्फ़ होगा तो ये फ़ेल मोहतमिम का जाइज़ होगा और मूजिबे ज़मान न होगा। बशर्तेकि उन मुख़्तलिफ़ मद्दात की रुकूम के मालिकीन को भी इल्म उस उर्फ़ पर हो, और इस जवाज़ की सूरत में मोहतमिम बमिक़्दारे रक़म हर मालिक मुअक्किल की रुकूमे मख़लूत में से लेकर उसके मसरफ़े मुऐयन पर सर्फ़ कर देगा तो ज़कात दिहिन्दा की ज़कात अदा हो जाएगी। और मस्जिद की तामीर कुनिन्दगान की तरफ़ से मस्जिद तामीर हो जाएगी। और अगर मोहतमिम ज़कात की रक़म को जान कर ग़ैर मसरफ़ में ख़र्च कर देगा और ज़कात दिहिन्दा को ख़बर न होगी तो उसका मुआख़ज़ए उख़रवी मोहतमिम पर होगा। लेकिन ज़कात अदा हो जाएगी। और अगर ज़कात दिहिन्दा को ख़बर हो जाएगी तो इसका हक़ न होगा कि मोहतमिम से अपनी रक़म तलफ़ शुदा का ज़मान लेकर

अदा करे।

(2) फुकहाए किराम (रह.) ने ये हुक्म दिया है कि जबकि रुकूम जमा शुदा मुख़्तलता अपनी अपनी मद में सर्फ़ कर दी जाएं और इख़्तिलात का उर्फ़ होने की वजह से मालिकों की जानिब से दलालतन इज़्न बिल ख़ल्त हो जाए तो ज़कात भी अदा हो जाएगी और मोहतमिम पर भी कोई गुनाह या ज़मान न होगा।

(किफ़ायतुलमुफ़्ती जिल्द–4 सफ़्हा–262)

मदरसा के रुपये का हुक्म

मस्अलाः मदरसा का रुपया मोहतमिम के पास अमानत है। उसको अपने ज़ाती काम में सर्फ़ करना दुरुस्त नहीं। अगर सर्फ़ करेगा तो वह उसके ज़िम्मा क़र्ज़ हो जाएगा। अमानत न रहेगा यानी उसका तावान वाजिब होगा।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–3 सफ़्हा–110)

मदारिस में ज़कात ख़र्च करने का एक और तरीक़ा

सवालः हमारे यहां एक मकतब है जिसमें नाज़िरए कुराअन मजीद, उर्दू दीनियात वग़ैरा की तालीम होती है। मदरसा की आमदीन सिर्फ़ चंदा (जो छः हज़ार होता) है और फ़ी बच्चा माहाना आठ आने, इस तरह से कुल दस हज़ार आमदनी हो जाती है। और ख़र्च अट्ठारह हज़ार है। बाक़ी आठ हज़ार ज़कात के पैसों में ख़र्च किए जाएं तो जाइज़ है या नहीं?

जवाबः सूरते मस्ऊला में ज़कात की रक़म मदरसा की तामीर और मुदर्रिसीन की तन्ख़्वाह में इस्तेमला करना दुरुस्त नहीं है। ज़कात अदा न होगी। जवाज़ की सूरत ये है कि फ़ीस बढ़ा कर एक रुपये या कम व–बेश कर

दी जाए। और ज़कात की रक़म मुस्तहिक़्क़ीन तलबा को माहाना बतौर इमदाद या वज़ीफ़ा दे दिया जाए और फिर फ़ीस में वसूल कर ली जाए तो ज़कात अदा हो जाएगी और उसके बाद ये रक़म तन्ख़्वाह वग़ैरा में ख़र्च करना जाइज़ होगा। (फ़तावा रहीमिया जिल्द–5 सफ़्हा–150)

ज़कात की रक़म को मुदर्रिसीन की तन्ख़्वाह में देने की एक सूरत

मस्अला: ज़कात के अस्ल हक़दार फ़ुक़रा व मसाकीन हैं। मदारिस में नक़द रक़म देनी चाहिए, ग़रीब तलबा को देना अफ़ज़ल है, लेकिन आम तौर पर लोग मदारिस में ज़कात की रक़म देते हैं, अगर मोहतमिमे मदरसा क़बूल न करे तो मदरसा चलाना और मुदर्रिसीन की तन्ख़्वाह देना मुश्किल हो जाता है। इसलिए ऐसी मजबूरी की सूरत में बक़द्रे ज़रूरत ज़कात की रक़म लेकर शरई हीला कर के मुदर्रिसीन की तन्ख़्वाह में देने की गुंजाइश है। तामीरी काम में (अच्छा तो यही है कि) इस्तेमाल न की जाए। उसके लिए लिल्लाह रक़म हासिल की जाए।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–5 सफ़्हा–154 व फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–211)

ज़कात के रुपये से मदरसा की तामीर और मकान ख़रीदना?

मस्अला: ज़कात के रुपये से मदरसा या मस्जिद की तामीर कराना दुरुस्त नहीं है। क्योंकि ज़कात में तमलीके फ़ुक़रा शर्त है। फ़क़ीर (ज़रूरत मंद) को ज़कात का मालिक बनाए बग़ैर ज़कात अदा नहीं होती है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–201 बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–16)

मस्अला: ज़कात व उश्र और तमाम सदक़ाते वाजिबा

जैसे सदक़ए फ़ित्र और कफ़्फ़ारात तन्ख़्वाहों में देना जाइज़ नहीं है (न तामीरात में) बल्कि तलबा, मसाकीन, वग़ुरबा के सर्फ़ में जाइज़ है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–207)

मस्अलाः ज़कात के रुपये से मकान ख़रीदना इस ग़रज़ से कि उसकी आमदनी से मुदर्रिसीन की तन्ख़्वाहें दे दी जायें जाइज़ नहीं है। इसमें ज़कात अदा नहीं होती।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–279 बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–16)

मस्अलाः बग़ैर तमलीक के ज़कात की रक़म मदरसा व मस्जिद व तन्ख़्वाह में नहीं सर्फ़ हो सकती। उसकी तदबीर ये हो सकती है कि कोई मुहताज (मसरफ़े ज़कात) क़र्ज़ लेकर मदरसा में दे दे, और ज़कात की रक़म से उसका क़र्ज़ अदा कर दिया जाए यानी ज़कात की रक़म उसको दे दी जाए जिससे वह अपना क़र्ज़ अदा कर ले।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–3 सफ़्हा–54)

ज़कात की रक़म ग़रीब मुदर्रिस को देना?

सवालः मकतब के मुअल्लिम की तन्ख़्वाह मजलिस की तरफ़ से आती है और कुछ रक़म लोग चंदा कर के तन्ख़्वाह के साथ उनको देते हैं, मगर अब वह देना भी मुश्किल हो रहा है। एक साहब ने ज़कात की रक़म दी है क्या वह मुअल्लिम की तन्ख़्वाह में दे सकते हैं?

जवाबः ज़कात की रक़म में से ज़कात देने वाले की इजाज़त से मुस्तहिक़्क़े ज़कात मुदर्रिस को माह ब–माह बतौर इमदाद के थोड़ी थोड़ी रक़म देते रहें तो ये जाइज़ है और इस सूरत में ज़कात भी अदा हो जाएगी और

मुदर्रिस की इमदाद भी हो जाएगी। बतौर तन्ख़्वाह देना जाइज़ नहीं है। और अगर तन्ख़्वाह में ही देना हो तो ज़कात की रक़म किसी ग़रीब मुस्तहिक़्क़े ज़कात को किसी क़िस्म के अहदो पैमान के बग़ैर बतौरे तमलीक दे दी जाए फिर उसके बाद उसको मश्वरा दिया जाए कि अपनी बस्ती का मरदसा बहुत ग़रीब है। अगर तुम ये रक़म मदरसा में अल्लाह के लिए दे दो तो उस्ताज़ की तन्ख़्वाह का इंतिज़ाम हो जाएग, और तुम को अज्रे अज़ीम मिलेगा। वह ग़रीब ये मश्वरा क़बूल कर के रक़म मदरसा में दे दे तो उसके बाद वह रक़म तन्ख़्वाह में देना जाइज़ होगा।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–5 सफ़्हा–157)

ज़कात की रक़म अपने उस्ताज़ को देना?

सवालः मेरे उस्ताज़ माज़ूर और साहबे अयाल व मक़रूज़ हैं तो क्या उनको ज़कात दे सकता हूं?

जवाबः बेशक ये बेहतर और मूजिबे अज्र व सवाब है कि ज़कात का रुपया बक़द्रे ज़रूरत अपने उस्ताज़ साहबे अयाल को दिया जाए और बाक़ी दीगर गुरबा व मसाकीन व तलबा मसाकीन को दे दिया जाए।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–254 बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–79)

ज़कात की रक़म से सफ़ीर की तन्ख़्वाह वग़ैरा देना?

सवालः एक शख़्स मदरसा में बच्चों के लिए खाना पकाता है और दूसरा शख़्स बच्चों के लिए खाने का सामान चावल घी वग़ैरा लेकर आता है। ज़कात के पैसे उसको बतौरे उजरत दे सकते हैं या नहीं? इसी तरह मदरसा का एक सफ़ीर है उसके इख़राजात में ज़कात के

पैसे इस्तेमाल करना कैसा है? नीज़ ज़कात की रक़म से किताबें ख़रीद कर बच्चों को पढ़ने के लिए देना और साल पूरा होने पर उनसे वापस ले लेना दुरुस्त है या नहीं? और पानी व बिजली व मकान का टैक्स ज़कात की रक़म से अदा करें तो जाइज़ है या नहीं?

जवाबः ज़कात की रक़म उजरत (किसी काम का बदला) में देना दुरुस्त नहीं है। मज़दूरी और किराया में भी नहीं दी जा सकती। सफ़ीर के इख़राजात में और खाने पीने में ये रक़म सर्फ़ नहीं हो सकती। मुस्तहिक़्क़े ज़कात को बिला ऐवज़ दी जाए। ज़कात की रक़म से कुतुब ख़ाना के लिए किताबें ख़रीदना भी जाइज़ नहीं। बिजली, पानी और मकान के टैक्स में इस्तेमाल करने से ज़कात अदा न होगी। तलबा को दे कर मालिक बना दिया जाए और वह अपने लिए किताबें ख़रीद लें और वापस लेने की शर्त न हो। (फ़तावा रहीमिया जिल्द–5 सफ़्हा–163)

सफ़ीर का ज़कात की रक़म तब्दील करना

सवालः ज़ैद मदरसा का चंदा करता है और चंदा में ज़कात, फ़ित्रा भी मिलता है, चंदा की मद में ज़ैद के पास मसलन पांच हज़ार रुपये जमा हो गए और उसने अपने घर पर भाई को लिख दिया कि मदरसा में मेरा नाम लेकर पांच हज़ार रुपये जमा करा देना। तो ये जाइज़ है या नहीं?

मक़्सदे सवाल ये है कि चंदा में जो रक़म जमा हुई है। उसके बदले दूसरी उतनी ही रक़म मदरसा में जमा करा दी जाए तो दुरुस्त है या नहीं?

जवाबः मदरसा के चंदा की ज़कात की रक़म मदरसा

में भेजने के बजाए अपने भाई वग़ैरा को ये लिख दिया कि पांच हज़ार रुपये मदरसा में जमा करा दो। ये सूरत जाइज़ है। अरबाबे मदरसा जब ज़कात की रक़म ज़कात के मसरफ़ में ख़र्च करेंगे उस वक़्त ज़कात अदा होगी।

नोटः मदरसा में रक़म जमा करा देने के बाद अगर मदरसा की रक़म अपने ज़ाती मसरफ़ में इस्तेमाल करना चाहे तो इस्तेमाल कर सकता है। मदरसा में रक़म जमा कराने से पहले इस्तेमाल करने की इजाज़त नहीं है।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–5 सफ़्हा–160)

सफ़ीर का ज़कात की रक़म इस्तेमाल करना

सवालः चंदा के लिए जाने वाले बाज़ सफ़ीर मालदार होते हैं। वह अपने ज़ाती पैसे ख़त्म हो जोने की वजह से चंदा में आई हुई ज़कात की रक़म इस्तेमाल करते हैं। और घर पहुंच कर सर्फ़ शुदा रक़म अपनी तरफ़ से जमा करा देते हैं तो क्या इस तरह कर सकते हैं?

जवाबः ज़कात की रक़म सफ़ीर ख़र्च नहीं कर सकता है। उसको चाहिए कि घर से मंगवा ले या किसी से क़र्ज़ ले ले। (फ़तावा रहीमिया जिल्द–5 सफ़्हा–164 व फ़तावा महमूदिया जिल्द–12 सफ़्हा–224)

अगर सुफ़रा के हाथ से ज़कात की रक़म ज़ाए हो जाए?

मस्अलाः अगर मदारिस के सुफ़रा के हाथ से ज़कात की रक़म चोरी हो जाए या मोहतमिम के हाथ से चोरी हो जाए या ज़ाए हो जाए और उनकी हिफ़ाज़त में कोई कमी नहीं रही थी। तो उन लोगों पर तावान लाज़िम न होगा और मालिक की भी ज़कात अदा हो जाएगी। इसलिए कि ये लोग अमलन व उर्फ़न फ़क़ीर ज़रूरत मंद यानी

मुस्तहिक़ तलबा के वकील हैं। और वकील का कब्ज़ा गोया फ़कीर का कब्ज़ा है। और अगर उन लोगों ने हिफ़ाज़त में कोताही की है या ज़कात की रक़म में तब्दीली की है या अपनी रक़म के साथ मख़लूत कर दिया है। तो उन लोगों पर तावान वाजिब होगा और अपनी जेब से उतनी रक़म फ़ुक़रा को देना लाज़िम होगा।

(इमदाद मसाइले ज़कात सफ़्हा–120 व दुर्रेमुख़्तार जिल्द–2 सफ़्हा–269 व इमदादुलफ़तावा जिल्द–2 सफ़्हा–14 व फ़तावा महमूदिया जिल्द–3 सफ़्हा–41)

तालिबे इल्म को ज़कात देना कैसा है?

सवालः तालिबे इल्म को ज़कात देना जाइज़ है या नहीं?

जवाबः रद्दुलमुह्तार बाबुलमसरफ़ जिल्द–2 सफ़्हा–81 से मालूम होता है कि तालिबे इल्म ग़नी (मालदार) को ज़कात देना दुरुस्त नहीं है। तालिबे इल्म की मशग़ूली की वजह से सिर्फ़ ये इजाज़त है कि कस्ब यानी कमाई में मशग़ूल होना उसको ज़रूरी नहीं है। ग़रीब होने की वजह से ज़कात ले सकता है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–244 व अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–252 व फ़िक्हुज्ज़कात जिल्द–2 सफ़्हा–32)

मस्अलाः फ़ी सबीलिल्लाह में अगरचे तालिबे इल्म दाख़िल हो सकते हैं लेकिन मुहताज होना उसका शर्त है यानी साहबे निसाब न हो।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–252)

मस्अलाः तालिबे इल्म ग़नी ग़ैर मुसाफ़िर को ज़कात देना और उसको लेना जाइज़ नहीं बल्कि हराम है और

ज़कात अदा न होगी।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–263)

मस्अला: अल्लामा शामी (रह.) ने तालिबे इल्म ग़नी (मादार साहबे निसाब) के लिए भी ज़कात लेने की हुरमत को राजेह फ़रमाया है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–280 बहवाला रद्दुलमुह्तार बाबुलमसरफ़ जिल्द–2 सफ़्हा–81)

जो तलबा इल्मे दीन के साथ सनअ़त व हिरफ़त वग़ैरा सीखते हों उनको ज़कात देना?

मस्अला: ज़कात का रुपया ख़ूराक व लिबास तलबा व मसाकीन में ख़र्च हो सकता है। अगरचे वह सनअ़त व हिरफ़त व इल्म दीन के साथ अंग्रेज़ी भी बग़रज़ ज़बान दानी सीखते हों। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–251 बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–85 व फ़तावा महमूदिया जिल्द–3 सफ़्हा–60)

जो तलबा क़वानीने मदरसा की पाबंदी नहीं करते उनको ज़कात देना?

सवाल: क़वाएदे मदरसा जो तलबा पर ज़रूरी हैं अगर वह उनके पूरा करने में कमी करें तो ज़कात जो उनको दी जाती है। अदा हो जाती है या नहीं?

जवाब: क़ाएदा मदारिस का ये है कि ज़कात के माल की पहले तमलीम करा दी जाती है फिर उस मालिक (तमलीक करने वाले) की तरफ़ से रुपया मदरसा के मसारिफ़ के लिए ले लिया जाता है। लिहाज़ा क़वाएदे मदरसा तलबा के मुतअ़ल्लिक़ जारी करने में ज़कात की अदाएगी में कुछ फ़र्क़ नहीं होता। ज़कात पहले ही तमलीक के वक़्त

अदा हो जाती है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–217 बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–2 सफ़्हा–15)

जिन तलबा के बारे में इल्म न हो कि मुस्तहिक़ हैं या नहीं उनको ज़कात देना?

सवाल: अगर मोहतमिमे मदरसा को ये मालूम न हो कि उनके माँ बाप या परवरिश करने वाले साहबे निसाब हैं या नहीं, तो इस सूरत में तालिबे इल्म की इस्तिआनत मद्दे ज़कात से जाइज़ है या नहीं?

जवाब: मालूम करना ज़रूरी है, लेकिन अगर तालिबे इल्म ख़ुद कहे कि मैं ग़रीब हूं और मेरे वालिदैन भी ग़रीब हैं तो मुवाफ़िक़ उसके कहने के उसको ज़कात देना दुरुस्त है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–220 बहवाला आलमगीरी मिस्री जिल्द–1 सफ़्हा–190 बाबुलमसारिफ़)

मस्अला: तलबा मुस्तहिक़्क़ीन को ज़कात की रक़म से वज़ाइफ़ भी दिए जा सकते हैं।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–230)

मस्अला: लेकिन मालदार यानी साहबे निसाब के (नाबालिग़) बच्चों को ज़कात की रक़म वज़ीफ़ा में देना जाइज़ नहीं है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–289 बहवाला आलमगीरी जिल्द–1 सफ़्हा–177)

तालिबे इल्म को सवाल करना कैसा है?

मस्अला: हज़रात फ़ुक़्हा (रह.) ने मिस्कीन तालिबे इल्मे दीन को सवाल करने की इजाज़त तहरीर फ़रमाई है। मगर ये उस ज़माने की बात है जबकि अवाम में इल्मे दीन से नफ़रत नहीं थी। इल्मे दीन और उसके पढ़ाने वालों से नफ़रत के इस दौर में तालिबे इल्मे दीन को भी

सवाल की इजाज़त नहीं। इसमें दीन की तज़लील व तहकीर है। अहले सर्वत (मालदारों) से इस्तिग़ना और तवक्कुल अलल्लाह होना चाहिए।

(अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–257)

तलबा को ज़कात देने के लिए उनकी अहलियत की तफ़्तीश की जाए या नहीं?

मस्अला: ये कैद तलबा में भी है कि वह भी मसरफ़े ज़कात हों यानी मालिके निसाब न हों, सैयद न हों और अगर वह तलबा नाबालिग़ हैं तो उनके वालिदैन साहबे निसाब और ग़नी न हों। बालिग़ के लिए तो माँ बाप का ग़नी होना मानेअ़ नहीं है, जबकि वह खुद फ़कीर (साहबे निसाब न) हों। और ज़कात से कपड़े या किताबें उसी वक़्त देना दुरुस्त है कि वह मसरफ़े ज़कात हों। ग़नी न हों और मालदारों की औलादे सिग़ार (बच्चे) न हों। इसकी तहकीक़ कर लेनी चाहिए। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–219 रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–88 बाबुलमसरफ़)

क्या खाना पका कर खिलाने से ज़कात अदा हो जाएगी?

मस्अला: ज़कात अदा होने के लिए तमलीक (उसका मालिक बना देना) शर्त है। तलबा को खाना पका कर खिलाने में तमलीक नहीं पाई जाती है। क्योंकि मिलकियत नहीं हुई, जब तक कि उनको खाने का मालिक न बनाया जाए। बिठा कर न खिलाए बल्कि खाना दे दिया जाए। लिहाज़ा मुस्तहिक़ तलबा को ज़कात की रक़म दे दी जाए और हिदायत की जाए कि खाने की फ़ीस अदा करें फिर वह रक़म खिलाने में ख़र्च की जाए। इस तरह ज़कात भी अदा हो जाएगी और तलबा को खाना भी मिल जाएगा।

या खाना मुस्तहिक़्क़ीन को दे कर मालिक बना दिया जाए। जैसा कि दारुलउलूम देवबंद व साहरनपूर में होता है। (फ़तावा रहीमिया जिल्द–5 सफ़्हा–162 व फ़तावा महमूदिया जिल्द–3 सफ़्हा–88)

मस्अलाः अगर खाना मुस्तहिक़्क़ीन के हाथ में दे दिया जाए कि उनको इख़्तियार हो ले जाने का, और वह खाना क़ीमत में जितनी ज़कात वाजिब थी उस क़दर हो तब तो ज़कात अदा हो जाएगी। और अगर ले जाने का इख़्तियार न हो बल्कि बिठला कर (दावत के तरीक़ा पर) खिलाया जाए तो ज़कात अदा ने होगी। क्योंकि दावत में मिलकियत नहीं होती है।

मस्अलाः इसी तरह अगर पका हुआ खाना या सिला हुआ कपड़ा वग़ैरा उतने क़ीमत का न हो जितनी ज़कात वाजिब थी मसलन खाना या सिला हुआ कपड़ा वग़ैरा बिगड़ गया तो बक़द्रे घटने के उतनी ज़कात देना पड़ेगी।

(इमदाद मसाइले ज़कात सफ़्हा–43 व फ़तावा महमूदिया जिल्द–3 सफ़्हा–52)

मस्अलाः जितनी ज़कात वाजिब है अगर उतना सामाने खुर्दो नोश लेकर उसका खाना पका कर किसी मुस्तहिक़ तालिबे इल्म वग़ैरा को दे दिया जाए, मालिक बना दिया जाए कि खाये या, किसी को दे, या फ़रोख़्त करे, दावत के तौर पर न हो तो तब भी ज़कात अदा हो जाएगी।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–7 सफ़्हा–255 व दुर्रेमुख़्तार जिल्द–2 सफ़्हा–257)

बिला तमलीक मतबख़ से खाना देना?

सवालः अगर मोहतमिमे मदरसा ज़कात के रुपये से

मतबख़ काइम करे और बिला तमलीक तलबए मदरसा को खाना खिलाए तो इस सूरत में ज़कात अदा हो जाएगी या नहीं? जबकि तलबा को ये इख़्तियार नहीं है कि वह अपने खाने को ले जाऐं या जो चाहें खाएँ? कौन सी ऐसी सूरत होगी जिससे ज़कात का रुपया उसके मसरफ़ में सर्फ़ हो?

जवाब: ज़कात में तमलीक ज़रूरी है और ये सूरत तलबा को खाना खिलाने की जो आप ने लिखी है तमलीक की सूरत नहीं है। इस तरह ज़कात अदा न होगी। उसकी तदबीर ये है कि अव्वल नक़द रुपया या अजनासे ज़कात की तमलीक करा दी जाए, फिर उसकी तरफ़ से दाख़िले मदरसा कर के खाना तलबा को खिलाया जाए।

(फ़तवा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–234 बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–16)

"मदारिस वाले जो ज़कात की रक़म वसूल करते हैं उनको इस बात का ख़्याल रखना चाहिए कि ये रक़्मे ज़कात या तो ऐसे बालिग़ बच्चों की ज़रूरीयात पर सर्फ़ की जाए जो ख़ुद निसाबे ज़कात के मालिक न हों, या ऐसे नाबालिग़ बच्चों पर ख़र्च की जाए कि जिनके वालिदैन इतने माल के मालिक न हों कि उन पर ज़कात वाजिब हो जाए और न ही ज़कात किसी को बतौरे उजरत दी जाए।" (मुहम्मद रफ़अ़त क़ासमी ग़ुफ़िरलहू)

क्या मुलाज़िमीन मदरसा के मतबख़ से खाना खा सकते हैं?

सवाल: बाज़ मदारिस में मुदर्रिसीन की तन्ख़्वाहें

खुर्दोनोश के अलावा (खाने पीने के) मुतऐयन की जाती हैं गोया कि मुकम्मल तन्ख़्वाह में से ख़ुर्दोनोश की तन्ख़्वाह काट ली जाती है। तो अब अगर मदरसा के अन्दर बमद्दे ज़कात व सदक़ात कोई माल आए तो उसका खाना मुदर्रिसीन के लिए जाइज़ है या नहीं? जबकि असातिजा खाने की क़ीमत अदा कर रहे हैं?

जवाबः हामिदन व मुसल्लियन। जितनी मिक़्दार असातिज़ा जुज़वन तन्ख़्वाह (हक़्क़ुलख़िदमत) के तौर पर खायेंग। उतनी मिक़्दार ज़कात अदा नहीं होगी। उसका हिसाब रखना ज़रूरी है। इसी तरह दीगर मुलाज़िमीन व ग़ैर मुस्तहिक़्क़ीन पर सर्फ़ करने का हाल है।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–12 सफ़्हा–223)

तलबा के खाना पकाने की उजरत मद्दे ज़कात से देना?

मस्अलाः जो बावरची सिर्फ़ तलबा के लिए खाना तैयार करता हो उसकी तन्ख़्वाह मद्दे ज़कात व उश्र से दी जा सकती है।

(अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–292)

"इससे ऐसे तलबा मुराद हैं जो मुस्तहिक़्क़े ज़कात हों। उनके खाना पकाने की उजरत देना तो जाइज़ है, लेकिन आम तौर पर मदारिस के मतबख़ से मुस्तहिक़ व ग़ैर मुस्तहिक़ और मुदर्रिसीन भी खाना खाते हैं। इसलिए इस मस्अला में एहतियात ज़रूरी है।"

(मुहम्मद रफ़अत क़ासमी)

मुअज़्ज़िन व इमाम को ज़कात उश्र देना कैसा है?

मस्अलाः मसरफ़ उश्र का वही है जो मसरफ़ ज़कात

का है। पस जैसा कि ज़कात को इमामत की उजरत में देना नाजाइज़ है, उसी तरह उश्र व सदक़ए फ़ित्र भी उजरते इमाम में देना नाजाइज़ है। इस सूरत में उश्र व सदक़ए फ़ित्र वग़ैरा सदक़ाते वाजिबा अदा न होंगे, अदमे जवाज़ के क़ाइलीन तमाम फ़ुक़हाए इज़ाम हैं।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–276 बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–79 बाबुलमसरफ़)

मस्अलाः अगर इमामे मस्जिद मुहताज और फ़क़ीर (साहबे निसाब नहीं) है तो ज़कात देना जाइज़ है, वरना नहीं। (बग़ैर उजरत के) (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–235 बहवाला हिदाया जिल्द–1 सफ़्हा–86)

मस्अलाः महज़ इमामे मस्जिद होने की वजह से तो कोई ज़कात का मुस्तहिक़ नहीं हो जाता। इमामत की उजरत के तौर पर ज़कात देना भी सही नहीं।

(आप के मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–401 व फ़तावा महमूदिया जिल्द–7 सफ़्हा–262)

> मक़्सद ये है कि अगर इमामे मस्जिद व मुअज़्ज़िन ग़रीब हैं, साहबे निसाब नहीं हैं तो उनको ज़कात देनी और लेनी जाइज़ है। उजरत के तौर पर न होनी चाहिए। अलग से मुहताज समझ कर दी जाए और वह मुस्तहिक़्क़े ज़कात हैं तो दुरुस्त है।
>
> (मुहम्मद रफ़अत क़ासमी)

इमाम को रस्म के तौर पर ज़कात देना कैसा है?

सवालः हमारे एलाक़े में इमाम के लिए किसी क़िस्म की तन्ख़्वाह मुक़र्रर नहीं करते, बल्कि ये रस्म है कि लोग

उस इमाम को ज़कात देते हैं। पहले से ये तय नहीं होता कि मैं इमामत करूंगा तो मुझ को ज़कात देना। इसलिए इमाम को ज़कात देना भी मालूम है कि रस्म की वजह से है और क़ौम को भी। क्या ज़कात अदा हो जाती है?

जवाबः अगरचे इमाम साहब से ये बात तय नहीं हुई कि उनको ज़कात की रक़म से तन्ख़्वाह दी जाएगी लेकिन चूंकि "المعروف كالمشروط" के उसूल के मुताबिक़ कि जो चीज़ पहले से ज़ेहन में तय शुदा है वह ऐसी है जैसे कि उसकी शर्त लगाई जाए।

चूनांचे जब इमाम साहब और ज़कात देने वालों के ज़ेहनों में ये बात पहले से है कि उस इमाम की तन्ख़्वाह मुक़र्रर नहीं की जाएगी। उसको ज़कात की रक़म दी जाती रहेगी। लिहाज़ा ज़कात की रक़म से इमाम को तन्ख़्वाह या बअल्फ़ाज़े दीगर उसकी इमामत की उजरत देना जाइज़ नहीं है। अलबत्ता अगर उसको इमामत की उजरत अलग दी जाती रहे फिर ग़रीब मुहताज होने की वजह से उसको ज़कात दे दी जाए तो सही है।

(आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–402)

ज़कात की रक़म से मुबल्लिग़ीन को वज़ाइफ़ देना?

सवालः ज़कात से मुबल्लिग़ीने अन्जुमने तबलीग़ व तलबा को वज़ाइफ़ देना जाइज़ है या नहीं?

जवाबः तलबा व मसाकीन को वज़ीफ़ा देना ज़कात से जाइज़ है और मुबल्लिग़ीन की तन्ख़्वाह देने में हीलए तमलीक ज़रूरी है। बग़ैर हीला देना दुरुस्त नहीं है, क्योंकि ज़कात के लिए तमलीक शर्त है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–275 बहवाला

रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–79 बाबुलमसरफ़)

मस्अलाः फ़ी ज़मानिही जबकि जिहालत का ज़ोर है। मुबल्लिग़ीन का तक़र्रुर ज़कात के रुपये से जाइज़ नहीं है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–244 बहवाला रद्दुलमुह्तार बाबुलमसरफ़ जिल्द–2 सफ़्हा–81)

तबलीग़ी जमाअ़त के अफ़राद पर ज़कात सर्फ़ करना कैसा है?

मस्अलाः ज़कात की रक़म तबलीग़ी जमाअ़त के अफ़राद पर ख़र्च कर सकते हैं, अगर वह मसरफ़े ज़कात हैं तो उन पर सर्फ़ करना दुरुस्त है, लेकिन मसरफ़े सही को उनमें मुन्हसिर करना सही नहीं है।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–3 सफ़्हा–51)

यानी तबलीग़ी अफ़राद मुस्तहिक़्क़े ज़कात को ही मसरफ़ समझना ग़लत है। क्योंकि और मसरफ़ भी तो हैं। (मुहम्मद रफ़अ़त क़ासमी)

मुसाफ़िर को ज़कात लेना और देना कैसा है?

मस्अलाः मुसाफ़िर को ज़कात लेना दुरुस्त है, जबकि उसके पास माल बक़द्रे निसाब न हो, अगरचे उसके मकान पर हो। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–283 बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–88 व किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–1019)

मस्अलाः एक शख़्स अपने घर का बड़ा मालदार है लेनि सफ़र में ऐसा इत्तिफ़ाक़ हुआ कि उसके पास ख़र्चा नहीं रहा। सारा माल चोरी हो गया या कोई और वजह ऐसी हुई कि अब घर तक पहुंचने का भी ख़र्च नहीं रहा। ऐसे शख़्स को भी ज़कात का देना दुरुस्त है। एसे ही

अगर हाजी के पास रास्ता का ख़र्च ख़त्म हो गया और उसके घर में माल व दौलत है। उसको भी ज़कात का देना दुरुस्त है। (इमदाद मसाइले ज़कात सफ़्हा–73 व आलमगीरी जिल्द–10 सफ़्हा–186)

मुसाफ़िर का क़र्ज़ ज़कात से अदा करना कैसा है?

मस्अला: अगर वह मुसाफ़िर मालिके निसाब नहीं है बल्कि मक़रूज़ है और सैयद नहीं है तो उसको ज़कात देना और इस क़दर रुपये ज़कात का देना जिससे उसका क़र्ज़ उतर जाए दुरुस्त है। जैसा कि क़ुरआन करीम में है। "اِنَّمَا الصَّدَقٰتُ الخ سورہ توبہ ع–٨" । (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–281 बहवाला हिदाया बाबु मालायजूज़ु दफ़उस्सदक़ाति इलैहि जिल्द–1 सफ़्हा–188 व इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–4 सफ़्हा–44)

मुसाफ़िर को रक़म के बजाए टिकट ख़रीद कर देना?

सवाल: एक सेठ साहब ज़कात को इस तरह देते हैं कि जिस जगह मुसाफ़िर को जाना होता है अपने आदमी को उसके हमराह भेज कर स्टेशन से टिकट दिला देते हैं, नक़द पैसे उसके हाथ में नहीं देते। अगर मुसाफ़िर किसी उज़्र की वजह से न जाए और टिकट कैंसिल हो जाए तो क्या उन सेठ साहब की ज़कात अदा होगी या नहीं?

जवाब: वह आदमी सेठ साहब का जब कि उस मिस्कीन मुसाफ़िर की इजाज़त से टिकट ख़रीदता है तो वह आदमी नाइब और वकील उस मिस्कीन का क़ब्ज़े ज़कात और ख़रीद टिकट में हो जाता है। जैसा कि वह आदमी वकील और नाइब सेठ साहब का है। लिहाज़ा ज़कात सेठ साहब मज़कूर की इस सूरत में अदा हो

जाती है। फिर अगर वह मुसाफ़िर किसी उज़्र की वजह से सफ़र में न जाए और टिकट रद (कैंसिल) हो जाए तब भी ज़कात अदा हो चुकी।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–197 बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–14)

अपने ख़ादिम को ज़कात देना कैसा है?

सवाल: ज़कात या फ़ित्रा की रक़म अपने ख़ादिम व ख़ादिमा खाना पकाने वाली को अगर ग़रीब हो, दे सकते हैं या नहीं?

जवाब: अपनी ख़ादिमा खाना पकाने वाली को ज़कात व फ़ित्रा इस वजह से देना कि वह मुहताज व ग़रीब है और तन्ख़्वाह में न दी जाए तो ये दुरुस्त है। अलबत्ता तन्ख़्वाह में देना जाइज़ नहीं है। अगर वह ग़रीब हो तो अलग से दे सकते हैं। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–245 बहवाला रद्दुलमुह्तार बाबुलमसारिफ़ जिल्द–2 सफ़्हा–89)

मस्अला: अपने गुलाम व बांदी को ज़कात देना दुरुस्त नहीं है। जो लोग शरई बांदी व गुलाम नहीं हैं जैसा कि हिन्दुस्तान के अक्सर ख़ादिमा जो घरों में रहते हैं वह बांदी गुलाम नहीं हैं। उनको ज़कात देना जब कि वह मुहताज हों दुरुस्त है, लेकिन तन्ख़्वाह में न दी जाए बल्कि अलग से दें। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–255 बहवाला बह्रुर्राइक़ जिल्द–2 सफ़्हा–244 बाबुलमसरफ़ व आलमगीरी जिल्द–1 सफ़्हा–19)

"बाज़ अफ़राद माले ज़कात से दुनयवी अग़राज़
निकालना चाहते हैं जो कि ख़ुलूस और रूहे

शरीअत के ख़िलाफ़ है। मसलन अपने नौकरों, ख़ादिमों को जो कि मुस्तहिक़्के ज़कात भी हैं बग़ैर मुआवज़ा के इस ख़्याल से ज़कात वग़ैर देते हैं कि ये लोग हम से ज़्यादा दबेंगे और एहसानमंद होने की वजह से ख़ूब काम करेंगे। बल्कि बाज़ दफ़ा जब काम में कमी देखते हैं तो ज़बान से जतलाने लगते हैं कि हम तन्ख़्वाह के अलावा तेरी मदद ज़कात से भी करते हैं मगर तो एहसान फ़रामोश है" वग़ैरा वग़ैरा। मस्अला की रू से ज़कात तो उसके ज़िम्मा से साक़ित हो जाती है। मगर मक़बूलियत के दर्जा को नहीं पहुंचती, क्योंकि कुरआन करीम में है। "ثُمَّ لَا يُتْبِعُوْنَ مَا اَنْفَقُوْا مَنًّا وَّلَا اَذًى لَّهُمْ الخ" (पारा–3 सूरह बक़रा)

(मुहम्मद रफ़अत क़ासमी)

नौकर के इज़ाफ़ए तन्ख़्वाह के मुतालबा पर ज़कात से देना?

सवालः मेरा एक मुलाज़िम है जिसने तन्ख़्वाह में इज़ाफ़ा का मुतालबा किया है तो मैंने ज़कात की नीयत से इज़ाफ़ा कर दिया। अब वह ये समझता है कि तन्ख़्वाह में इज़ाफ़ा हुआ है। क्या ये सही है?

जवाबः मुलाज़िम की तन्ख़्वाह तो उसके काम का मुआवज़ा है, और जब आप ने तन्ख़्वाह बढ़ाने के नाम से इज़ाफ़ा किया तो वह भी काम के मुआवज़ा में हुआ। इसलिए उससे ज़कात अदा नहीं हुई। जो तन्ख़्वाह तय है वह अदा करने के अलावा अगर उसको ज़रूरत मंद और मुहताज समझ कर ज़कात दे दी जाए तो ज़कात अदा

हो जाएगी। (आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़हा–384)

ख़ादिम को पेशगी रक़म दे कर ज़कात की नीयत करना?

सवाल: मैंने अपने मुलाज़िम को कुछ रक़म बतौर एडवांस (पेशगी) वापसी की शर्त पर दी। लेकिन मैं देखता हूं कि वह ये रक़म अदा नहीं कर सकेग। अगर मैं ज़कात की नीयत कर लूं तो क्या ज़कात अदा हो जाएगी?

जवाब: ज़कात की नीयत देते वक़्त करना ज़रूरी है। बाद में की हुई नीयत काफ़ी नहीं। इसलिए आप उस रक़म को ज़कात की मद में वज़ा नहीं कर सकते। हां ये कर सकते हैं कि ज़कात की नीयत से उसको इतनी रक़म दे कर फिर ख़्वाह उसी वक़्त अपना क़र्ज़ वसूल करें। (आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़हा–384)

ज़कात की रक़म से ख़ादिमा को ज़ेवर दे देना?

सवाल: (1) ज़ैद के यहां एक यतीम लड़की को सिर्फ़ रोटी कपड़ा मिलता है तो ज़ैद ज़कात की रक़म से उसके लिए कुछ ज़ेवर या कपड़ा वग़ैरा बना सकता है या नहीं?

(2) और जो औरत ज़कात को मुआवज़ा ख़िदमत का समझे उसको देना कैसा है?

जवाब: (1) यतीम लड़की जिसकी तन्ख़्वाह मुक़र्रर नहीं की गई है सिर्फ़ रोटी कपड़ा देना मुक़र्रर किया गया है। उसको ज़ेवर ज़कात के रुपये से बनवा देना दुरुस्त है, या उसको नक़द दे दे, ये भी दुरुस्त है कि कपड़ा जो उसका मुक़र्रर है वह ज़कात में से न बनाए।

(2) और उस दूसरी औरत ख़ादिमा को देना दुरुस्त नहीं है। जो उसको अपनी ख़िदमत का मुआवज़ा समझेगी।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़हा–211 बहवाला

रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–79)

"किसी भी ख़िदमत के मुआवज़ा में ज़कात लेना और देना दुरुस्त नहीं है, ज़कात अदा न होगी।" (मुहम्मद रफ़अत क़ासमी)

ग़रीब लड़की की शादी में ज़कात की रक़म देना?

मस्अलाः लड़की के वालिदैन जोकि मुस्तहिक़्क़े ज़कात हैं, ज़कात का रुपया उनको दे दिया जाए कि वह उस लड़की के निकाह में सर्फ़ कर दें। ये दुरुस्त है और ख़ुद उस लड़की को अगर बरतन, ज़ेवर वग़ैरा ख़रीद कर दे दिए जायें तो ये भी दुरुस्त है।

मस्अलाः अगर शादी से क़ब्ल या बाद शादी के उस लड़की को जोकि ग़रीब साहबे निसाब न हो, को नक़द दे दिया जाए तो ये भी जाइज़ है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–247 बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–79)

मस्अलाः लेकिन इसका ख़्याल रखना ज़रूरी है कि निसाब से ज़ाएद न हो, वरना मकरूह हो जाएगा। नीज़ अगर किसी ने निसाब के बराबर दे दिया है या मुतअ़द्दद अफ़राद के थोड़ा थोड़ा देने से निसाब के बराबर या उससे ज़ायद हो जाए तो फिर मुस्तहिक़्क़े ज़कात न रहने की वजह से उसको ज़कात की रक़म देना जाइज़ नहीं होगा। (ईज़ाहुलमसाइल सफ़्हा–117 बहवाला दुर्रेमुख़्तार (कराची) जिल्द–2 सफ़्हा–353)

"अगर लड़की के वालिदैन जो कि मुस्तहिक़्क़े ज़कात हैं उनके पास ज़कात की आई हुई रक़म निसाब के बराबर या ज़ाएद हो जाए

तो अगर ये रक़म उनके घर के और अफ़राद पर तक़सीम कर दी जाए तो हर एक को निसाब के बक़द्र न पहुंचे तो फिर देना जाइज़ होगा।" (तहतावी अललमराक़ियुलफ़लाह सफ़हा–416 किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–1013) (मुहम्मद रफ़अ़त क़ासमी)

ज़कात की रक़म से मैयत की तजहीज़ व तक्फ़ीन करना कैसा है?

मस्अला: ज़कात की रक़म से मैयत की तजहीज़ व तक्फ़ीन जाइज़ नहीं, बवक़्ते ज़रूरत ये सूरत हो सकती है कि मैयत का वली अगर ज़कात का मुस्तहिक़ हो तो उसको मद्दे ज़कात से रक़म दे दी जाए वह उससे तजहीज़ व तक्फ़ीन वग़ैरा कर दे।

(अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़हा–293 बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–2 सफ़्हा–68 व फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–226 व फ़तावा महमूदिया जिल्द–3 सफ़्हा–44 व किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–1014)

मस्अला: मैय्यत के कफ़न वग़ैरा में जो सर्फ़ किया गया वह ज़कात में महसूब न होगा वह सदक़ा नफ़्ली रहेगा क्योंकि ज़कात में ज़िन्दा फ़क़ीर को मालिक बनाना शर्त है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–334)

क्या मैयत के कफ़न का सवाब ज़कात दिहिन्दा को भी होगा?

मस्अला: मुस्तहिक़्क़े ज़कात ने अपनी तरफ़ से तक्फ़ीने मैयत व तामीरे मस्जिद वग़ैरा की तो सवाब दोनों को हासिल होगा। शामी (रह.) ने ये मतलब लिखा है कि ज़कात देने वाले को ज़कात देने का सवाब हासिल होगा

और कफ़न डालने का सवाब उस फ़क़ीर (मुस्तहिक़्के ज़कात) को होगा जिसने अपनी तरफ़ से कफ़न डाला, और ये भी कहा जा सकता है कि ज़कात देने वाले को तक्फ़ीन का भी सवाब है क्योंकि हदीस शरीफ़ में है–

"الدال على الخير كفا عله"

(रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–16)

जामेअ़ सग़ीर में ये रिवायत नक़्ल की गई है कि– अगर सदक़ा सौ हाथों पर को गुज़रे तो हर एक को उनमें से इब्तिदाअन देने वाले की बराबर सवाब होगा। बिदून इसके कि इब्तिदा करने वाले के सवाब में कुछ कमी हो, यानी कोई कमी न होगी। और सौ हाथों पर गुज़रने का मतलब ये है कि सदक़ा करने वाले ने किसी को सदक़ा दिया फिर उसने दूसरे को दे दिया और उसने तीसरे को दे दिया। इसी तरह सिलसिला चलता रहा। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–227)

"बाज़ जगह लावारिस मुर्दा की तजहीज़ व तकफ़ीन के लिए चंदा करते हैं तो उसमें ज़कात की रक़म देने से ज़कात अदा नहीं होगी, अगर वारिस वाला मुर्दा भी हो तब भी ज़कात अदा नहीं होगी क्योंकि उसमें मिलकियत की सलाहियत नहीं है। हां अगर रुपया ज़कात की नीयत से उसके ग़रीब वारिसों को दे दिया जाए और फिर वह अपनी तरफ़ से मुर्दा पर ख़र्च करें तो ज़कात अदा हो जाएगी।"

(मुहम्मद रफ़अ़त क़ासमी गुफ़िरलहू)

ज़कात की रकम से मुर्दा का कर्ज़ अदा करना कैसा है?

मस्अला: अगर मैयत के ज़िम्मा कर्ज़ है तो उस कर्ज़ को ज़कात की रक़म से बराहे रास्त अदा नहीं किया जा सकता, हां अगर उसके वारिस ग़रीब मुस्तहिक़्क़े ज़कात हों तो उनको मालिकाना तौर से दिया जा सकता है और वह उस रक़म के मालिक हो कर अपनी रज़ामंदी के साथ उस रक़म से मैयत का क़र्ज़ अदा कर सकते हैं।

(मआरिफुलकुरआन जिल्द–4 सफ़्हा–408)

मस्अला: मुर्दा की तरफ़ से उसका क़र्ज़ा अदा कर देना दुरुस्त नहीं है। (फ़तावा हिन्दीया जिल्द–1 सफ़्हा–188 व फ़तावा आलमगीरी जिल्द–4 सफ़्हा–39)

"क्योंकि मैयत में मालिक होने की सलाहियत नहीं है जो अदाए ज़कात की अव्वलीन शर्त है।" (मुहम्मद रफ़अत क़ासमी ग़ुफ़िरलहू)

ज़कात का रुपया मुर्दा के ईसाले सवाब के लिए देना?

मस्अला: ज़कात का रुपया मुर्दा को देना इस तौर से कि उसकी तरफ़ से खाना पका कर फ़क़ीरों को खिलाया जाए या कपड़ा मुहताजों को दिया जाए दुरुस्त नहीं है। अपनी तरफ़ से ही ज़कात की नीयत से दिया जाए। उसका सवाब किसी मैयत को न पहुंचाया जाए।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–204)

अपने ग़रीब शौहर को ज़कात देना?

सवाल: (1) आम तौर पर बीवी की कुल किफ़ालत शौहर के ज़िम्मा है। अगर ख़ुदा न करे शौहर ग़रीब हो जाए और बीवी मालदार हो तो शरअ़न बीवी पर क्या हुक़ूक़ आएद होते हैं?

(2) औरत पर शौहर के लिए जो हुकूक़ हैं वह शौहर की गुरबत और मालदारी दोनों में यक्सां हैं। शौहर के ग़रीब होने पर बीवी पर शरअन ये हक़ है कि शौहर की गुरबत के पेशे नज़र सिर्फ़ इस क़दर नान व नफ़क़ा (ज़रूरी ख़र्चा) का मुतालबा करे जिसका शौहर मुतहम्मिल हो सके। अलबत्ता अख़्लाक़न बीवी को चाहिए कि वह अपने माल से शौहर की इमदाद करे या अपने माल से शौहर को कोई कारोबार वग़ैरा करने की इजाज़त दे।

(2) चूंकि शौहर और बीवी के मनाफ़ेअ आदतन मुश्तरक हैं और वह दोनों एक दूसरे की चीज़ो से उमूमन इस्तिफ़ादा करते रहते हैं। इसलिए शौहर और बीवी का आपस में एक दूसरे को ज़कात देना जाइज़ नहीं है।

(आप के मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–395 व फ़तावा दारुलउलूम जिल्द– सफ़्हा–292 बहवाला शामी जिल्द–3 सफ़्हा–86)

मालदार बीवी के ग़रीब शौहर को ज़कात देना?

सवालः ज़ैद की बीवी के पास चार हज़ार रुपये का सोना चांदी है लेकिन ख़ुद ज़ैद मक़रूज़ है। माल ज़ैद की बीवी के पास है। क्या ज़ैद ज़कात ले सकता है?

जवाबः ज़ैद दूसरों से ज़कात ले सकता है। मगर उसकी बीवी उसको यानी शौहर को ज़कात नहीं दे सकती। बहरहाल शौहर अगर ग़रीब है तो वह ज़कात का मुस्तहिक़ है। बीवी के मालदार होने की वजह से वह मालदार नहीं कहलाएगा। (आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–395)

शादी शुदा औरत को ज़कात देना?

सवालः एक औरत जिसका शौहर ज़िन्दा है। ग़रीब

मेहनत मज़दूरी करता है, क्या उसको ज़कात व ख़ैरात व सदक़ा देना जाइज़ है?

जवाब: अगर वह ग़रीब और मुस्तहिक्क़े ज़कात है तो जाइज़ है। (आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़हा–395)

मालदार औलाद वाली बेवा को ज़कात देना?

सवाल: एक औरत जोकि बेवा है लेकिन उसके लड़के बरसरे रोज़गार हैं। अगर वह लड़के माँ की इमदाद नहीं करते या थोड़ी बहुत करते हैं जो उसके लिए नाकाफ़ी है तो क्या उसको ज़कात देना जाइज़ है?

जवाब: उस ख़ातून के इख़राजात उसकी औलाद के ज़िम्मा हैं, लेकिन अगर वह औरत नादार है और लड़के उसकी इमदाद इतनी नहीं करते जो उसकी रोज़मर्रा की ज़रूरीयात के लिए काफ़ी हो तो उसको ज़कात देना जाइज़ है। (आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़हा–936)

मफ़लूकुलहाल बेवा को ज़कात देना?

मस्अला: मफ़लूकुलहाल बेवा के भाई को अगर कुदरत है तो उसे चाहिए कि अपनी बहन के इख़राजात बरदाश्त करे, अगर वह नहीं करता या इस्तिताअ़त नहीं रखता और उस बेवा के पास भी निसाब की मिक़्दार सोना चांदी या रुपये पैसे नहीं है। तो ज़ाहिर है कि वह नादार भी है और बेसहारा भी, इस सूरत में उस को ज़कात सक़ात देना ज़रूरी है। (आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़हा–397)

बरसरे रोज़गार बेवा को ज़कात देना?

मस्अला: अगर बरसरे रोज़गार बेवा मक़रूज़ नहीं है, मुलाज़िम है तो ज़कात नहीं लेनी चाहिए ताहम अगर वह साहबे निसाब नहीं तो उसको देने से ज़कात अदा हो

जाएगी। (आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–397)

बदकिरदार की बीवी को ज़कात देना?

मस्अला: ऐसी औरत बच्चों वाली जो अपने ख़ाविंद की अैयाशाना ज़िन्दगी और शराब नोशी की वजह से निहायत ही उसरत (तंगी) में हो। जबकि वह मुहताज (ज़रूरत मंद) है और मालिके निसाब भी नहीं है। ज़कात देना दुरुस्त है बल्कि ऐसी मुहताज बच्चों वाली औरत को ज़कात देने में ज़्यादा सवाब है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–223 बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–80)

बेरोज़गार को ज़कात देना?

मस्अला: काम काज न करने वाले आदमी की किफ़ालत माले ज़कात से करना जाइज़ है। ज़कात अदा हो जाएगी।

(आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–398)

माज़ूर लड़के के बाप को ज़कात देना?

सवाल: एक सरकारी मुलाज़िम है उसका लड़का दिमाग़ी आरज़ा में मुब्तला है। बाप उस की किफ़ालत करता है। क्या उसको ज़कात दे सकते हैं?

जवाब: अगर उस लड़के का बाप नादार है तो ज़कात का मुस्तहिक़ है, बाज़ अ़यालदार ऐसे होते हैं कि वह साहबे निसाब नहीं होते और उनका रोज़गार भी उनके मसारिफ़ के लिए काफ़ी नहीं होता, ऐसे लोगों को ज़कात देना जाइज़ है। (आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–401)

सफ़ेद पोश को ज़कात देना?

सवाल: हमारे जानने वालों में एक सफ़ेद पोश आदमी हैं मगर माली एतेबार से बहुत कमज़ोर हैं, रेढ़ी लगाते हैं।

क्या हम उनको ज़कात दे सकते हैं?

जवाबः ज़ाती मकान और रेढ़ी लगाने के बावजूद अगर वह नादार और ज़रूरत मंद हैं तो उनको ज़कात देना सही है। और ज़कात की अदाएगी के लिए उनको बताना शर्त नहीं कि ये ज़कात है। तोहफ़तन हदया कह कर दे दी जाए और नीयत ज़कात की कर ली जाए तब भी ज़कात अदा हो जाएगी।

(आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–401)

ज़कात की रक़म ग़रीब लड़कियों की तालीम में देना?

मस्अलाः ज़कात में तमलीक शर्त है, यानी किसी मुहताज को उसका मालिक बना देना चाहिए? पस ग़रीब लड़कियों को अगर नक़द या कपड़ा, खाना ज़कात से दे दिया जाए तो दुरुस्त है, लेकिन पढ़ाने वालों की तन्ख़्वाह या दीगर मुलाज़िमीन की तन्ख़्वाह देनी ज़कात से दुरुस्त नहीं है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–205 बहवाला रद्दुलमुह्तार बाबुलमसरफ़ जिल्द–2 सफ़्हा–85)

कसीरुअयाल को ज़कात की रक़म देना?

सवालः मैं इमाम हूं, मस्जिद की तन्ख़्वाह से घर का गुज़र चलाना मुश्किल है। कसीरुलअयाल और क़र्ज़दार भी हूं, एक शख़्स मुझे ज़कात की बड़ी रक़म देना चाहते हैं। तो मैं ले सकता हूं या नहीं?

जवाबः मस्अला ये है कि एक मुस्तहिक़्क़े ज़कात को ज़कात की इतनी रक़म दी जाए जो निसाब से कम हों, इतना देना कि ग़रीब साहबे निसाब और मालदार हो जाए मकरूह है। हाँ अगर वह शख़्स क़र्ज़दार हो या कसीरुअयाल हो (बच्चे ज़्यादा हों) तो उसको इतने पैसे देना कि क़र्ज़

अदा करने के बाद उसके पास बक़द्रे निसाब न बचे या अपने अह्लोअयाल पर तक़्सीम करे तो हर एक को निसाब की मिक़्दार से कम पहुंचे तो ऐसे शख़्स को निसाब से ज़्यादा देना बिला कराहत जाइज़ है।

(तहतावी अला माक़ियुलफ़लाह जिल्द– सफ़्हा–416, किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–1013)

मस्अला: जिस शख़्स की माहवारी आमदनी माकूल हो लेकिन साल भर तक उसके पास क़द्रे निसाब जमा नहीं रहता और वह साहबे ज़कात नहीं है। ऐसे शख़्स को माले ज़कात या सदक़ए नाफ़िला देना दुरुस्त है और उसको लेना भी जाइज़ है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–233 बहवाला आलमगीरी बाबुलमसारिफ़ जिल्द–1 सफ़्हा–189)

मालदार ज़रूरत मंद को ज़कात देना कैसा है?

मस्अला: एक शख़्स ने अपना रुपया लोगों को क़र्ज़ दे रखा है जो किसी मीआद ही पर वसूल हो सकता है और इसी दौरान में उसको इख़राजात के लिए पैसे की ज़रूरत हो तो उस वक़्त ये शख़्स ज़कात ले सकता है, मगर इतनी जो अपने क़र्ज़ की मीआद पूरी होने तक उसके इख़राजात को काफ़ी हो। अगर क़र्ज़ ग़ैर मीआदी है और जिसको उसने क़र्ज़ दिया है और वह मुहताज है तो असह क़ौल के मुताबिक़ ज़कात लेना जाइज़ है क्योंकि वह उस वक़्त मुसाफ़िर की हैसियत रखता है। अगर उसका क़र्ज़दार पैसे वाला आदमी है और उसके क़र्ज़ को तस्लीम करता है तो अब उस शख़्स (मालदार ज़रूरत मंद) को ज़कात लेना जाइज़ नहीं। अगर वह

क़र्ज़दार क़र्ज़ को तस्लीम न करे और क़र्ज़े के गवाह आदिल हों तो तब भी यही हुक्म है। हाँ गवाह ग़ैर आदिल हों तो उस वक़्त तक ये शख़्स ज़कात का माल नहीं ले सकता जब तक ये शख़्स क़ाज़ी के यहां दावा न पेश करे और क़ाज़ी क़र्ज़दार से उसके इन्कार पर क़सम न ले। क़र्ज़दार के क़सम खाने के बाद उसे ज़कात लेना जाइज़ है।

(क़ाज़ी ख़ाँ, फ़तावा आलमगीरी जिल्द–4 सफ़्हा–40)

बेनमाज़ी को ज़कात देना कैसा है?

मस्अलाः बेनमाज़ी मुहताज को ज़कात देने से ज़कात अदा हो जाती है। क्योंकि हनफ़ीया (रह.) के नज़दीक नमाज़ छोड़ने से मुसलमान काफ़िर नहीं होता, अलबत्ता नमाज़ का छोड़ना फ़िस्क़ और गुनाहे कबीरा है, मगर कुफ़्र नहीं है। लिहाज़ा तारिक़े नमाज़ को जब कि वह मुहताज हो ज़कात देना दुरुस्त है और ज़कात अदा हो जाती है। और अक्सर अइम्मा का यही मज़हब है कि तारिके नमाज़ काफिर नहीं है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–284 बहवाला मराक़ियुलफ़लाह बाबुलवित्र व फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–305 व हिदाया जिल्द–1 सफ़्हा–186)

नशा के आदी को ज़कात देना कैसा है?

सवालः एक शख़्स निहायत मुफ़लिस और ग़रीब है लेकिन भंग व अफ़यून वग़ैरा का अज़ हद मुरतकिब है। उसको ज़कात देना शरअ़न जाइज़ है या नहीं?

जवाबः ये ज़ाहिर है कि सदक़ात व ख़ैरात सुलहा को देना अफ़ज़ल है जैसा कि वारिद हुआ है– "وليـا كل

"طعامکم الا برار" यानी तुम्हारा खाना नेक लोग खायें।

लेकिन फ़ासिक़ व फ़ाजिर शराब नोश जबकि मुफ़्लिस है उसको ज़कात देने से ज़कात अदा हो जाती है। अगरचे बेहतर ये है कि सुलहा, फ़ुक़रा को दे। बहरहाल अदाए ज़कात में कुछ तअम्मुल नहीं। बेहतर होना और न होना दूसरी बात है और मुफ़्लिस व मुहताज अगरचे फ़ासिक़ हो उसके देने में भी सवाब है जैसा कि आया है कि– "हर एक रूह के देने में अज्र है।"

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–235 बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–79 बाबुलमसरफ़)

अलबत्ता अगर ये यक़ीने कामिल हो कि वह शराब पीने पर ये रक़म सर्फ़ करेगा तो उसे देना दुरुस्त नहीं है। कुरआन करीम में है।

"وَلَا تَعَاوَنُوْا عَلَى الْاِثْمِ وَالْعُدْوَانِ" (پاره–٦ سوره المائده)

(मुहम्मद रफ़अ़त क़ासमी ग़ुफ़िरलहू)

ग़ैर मुस्लिम फ़क़ीरों को ज़कात देना कैसा है?

सवाल: ज़कात का काफ़िरों को देना दुरुस्त है या नहीं?

जवाब: ज़कात की तारीफ़ दुर्रेमुख़्तार वग़ैरा में ये की है कि– "تملیک جزء مال عینه الشارع من مسلم فقیر الخ" इसका मतलब ये है कि ज़कात शरीअ़त में उसको कहते हैं कि अपने माल का एक हिस्सा मुऐयना जो कि शारेअ़ अलैहिस्सलाम ने मुऐयन फ़रमाया है। मसलन चालीसवां हिस्सा मुसलमान मुहताज को दिया जाए।

पस मालूम हुआ कि ज़कात के अदा के लिए ये शर्त लाज़िम है कि मुसलमानों को ही दी जाए जो कि मसरफ़े

ज़कात हों। और आयते करीमा— "اِنَّمَا الصَّدَقٰتُ لِلْفُقَرَآءِ وَ الْمَسٰكِيْنِ" (سورہ توبہ رکوع–۸) आयत में फ़ुक़रा व मसाकीन से मुराद मुसलमान फ़ुक़रा व मसाकीन हैं।

व इज्माए उम्मत: अलबत्ता नफ़्ली सदक़ा ज़िम्मियों, यानी काफ़िरों को दिया जा सकता है। ऐसा ही लिखा है दुर्रेमुख़्तार में भी कि ज़कात व उश्र व ख़िराज के अलावा दूसरे सदक़ात काफ़िर को देना दुरुस्त है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–277 बहवाला रद्दुलमुहतार जिल्द–2 सफ़्हा–92 व किफ़ायतुलमुफ़्ती जिल्द–4 सफ़्हा–463)

मस्अला: हिन्दू (ग़ैर मुस्लिम) फ़कीर मुहताज को अल्लाह के वास्ते देना दुरुस्त है, लेकिन ज़कात का रुपया हिन्दू को देना दुरुस्त नहीं। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–204 बहवाला हिदाया जिल्द–1 सफ़्हा–187 व फ़िक़्हुज़्ज़कात जिल्द–2 सफ़्हा–208)

मस्अला: हिन्दू मुफ़लिस के ज़िम्मा किसी ग़रीब मुसलमान का क़र्ज़ा हो तो ये क़र्ज़ा ज़कात की रक़म से अदा नहीं किया जा सकता।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–242 बहवाल रद्दुलमुहतार जिल्द–2 सफ़्हा–91 बाबुलमसरफ़)

मस्अला: ज़कात का मसरफ़ सिर्फ़ मुसलमान हैं किसी ग़ैर मुस्लिम को ज़कात देना जाइज़ नहीं, अगर हुकूमत ज़कात की रक़म ग़ैर मुस्लिमों को देती है और सही मसरफ़ पर ख़र्च नहीं करती तो अह्ले ज़कात की ज़कात अदा नहीं हुई। (आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–403 व मआरिफ़ुलक़ुरआन जिल्द–4 सफ़्हा–397 व फ़तावा

महमूदिया जिल्द–7 सफ़्हा–250)

ग़ैर मुस्लिमों की तालीमगाह में ज़कात देना?

मस्अला: इस सूरत में (यानी ग़ैर मुस्लिमों के मदरसा में देने से) ज़कात अदा न होगी। ज़कात मुसलमान मुहताज को देना ज़रूरी है। (फ़ताव दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–248 बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–92 बाबुलमसरफ़)

बिला लिहाज़े मज़हब ज़कात देना?

सवाल: ज़कात की रक़म बिला लिहाज़े मज़हब व मिल्लत आम मुहताजों व माजूरों को देना कैसा है?

जवाब: ज़कात में मुसलमान मुहताज (ज़रूरत मंद) को मालिक बनाना ज़कात की रक़म का ज़रूरी है। पस जिस मौक़ा में शुब्हा हो कि मुसलमानों को पहुंचेगा या ग़ैर अह्ले इस्लाम भी शरीक होंगे और किसी की मिल्क नहीं किया जाएगा तो ऐसे मवाक़ेअ़ में हीलए तमलीक करा लिया जाए और फिर वहां रुपया ज़कात का दिया जाए। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–262 व आलमगीरी जिल्द–1 सफ़्हा–186)

मुल्हिद और मुरतद को ज़कात देना?

मस्अला: जो शख़्स अल्लाह तआ़ला का और नुबूवत का और आख़िरत का मुन्किर हो वह भी काफ़िर मुहारिब (दुश्मने इस्लाम) ही की तरह है। उसे भी ज़कात में से देना उसकी दीन दुश्मनी में तआउन करना है। और जो शख़्स मुरतद हो कर दायरए इस्लाम से ख़ारिज हो गया हो वह तो इस्लाम की नज़र में ज़िन्दगी ही का मुस्तहिक़ नहीं है। चे जाए कि उसकी ज़कात की मद में से एआनत की जाए। उसने इस क़दर बड़ा जुर्म किया है और इस्लाम

से, मुसलमानों से, इस क़दर अज़ीम ख़्यानत की है कि वह मुआशरे में ज़िन्दा रहने का हक़ खो बैठा है। चुनांचे फ़रमाने नुबूवत है कि– "जो शख़्स (मुसलमान) अपना दीन (इस्लाम) तब्दील कर दे उसे क़त्ल कर दो।"

(फ़िक़्हुज़्ज़कात जिल्द–2 सफ़्हा–209)

मिस्कीन किस को कहते हैं?

मस्अला: जो शख़्स मालिके निसाब न हो और वह मुहताज हो, उसको फ़क़ीर व मिस्कीन कहते हैं। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–194 बहवाला दुर्रेमुख़्तार जिल्द–2 सफ़्हा–80 व फ़िक़्हुज़्ज़कात जिल्द–2 सफ़्हा–15)

> "इस्तिलाह में मिस्कीन उसे कहा जाता है जिसके पास कुछ भी न हो, बिल्कुल बदहाल हो, और जो साहबे निसाब न हो मगर खाता पीता हो तो इस्तिलाह में उसको फ़क़ीर कहते हैं। उर्दू के मुहावरा में मिस्कीन और फ़क़ीर एक ही माना में बोला जाता है यानी जो ज़कात का मुस्तहिक़ हो।"
>
> (मुहम्मद रफ़अत क़ासमी ग़ुफ़िरलहू)

जिसकी मिल्क में कुछ न हो या मिक़्दारे निसाब से कम हो, उसको इस्तिलाहे शरअ़ में फ़क़ीर व मिस्कीन कहते हैं वह ज़कात और फ़ित्रा का मुस्तहिक़ है।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–13 सफ़्हा–114)

फ़क़ीर और मिस्कीन में इस लिहाज़ से भी फ़र्क़ है कि फ़क़ीर को सवाल करने (मांगने) में आ़र नहीं होता लेकिन मिस्कीन को उसकी ख़ुद्दारी और इफ़्फ़ते नफ़्स, तलब व इल्हाह की इजाज़त नहीं देती। सहीहैन की एक

हदीस में आंहज़रत (स.अ.व.) ने मिस्कीन की ये तारीफ़ की है– "اَلَّذِیْ لَایجد غنی یغنیه ولا یفطون فیصدّق علیه ولا یقوم فیسال الناس" (1) जिसे ऐसे वसाइल मुयस्सर नहीं कि मालदार कर दें। (2) जिसका फ़क्र ज़ाहिर नहीं कि लोग खैरात दें। (3) जो खुद सवाल के लिए खड़ा नहीं होता कि लोगों के सामने हाथ फैलाए।

(हक़ीक़तुज़्ज़कात सफ़हा–21 मौलाना अबुलकलाम आज़ाद (रह.) व किताबुलफ़िक़्ह अललमज़ाहिबिलअरबआ जिल्द–1 सफ़हा–1012 व फ़तावा महमूदिया जिल्द–11 सफ़हा–146)

यक़ीनी मसाकीन कौन हैं?

क़ौम के ऐसे अफ़राद जिन पर वसाइले मईशत की तंगी की वजह से मईशत के दरवाज़े बंद हो रहे हैं और अगरचे वह खुद पूरी तरह साई (कोशिश करने वाले) हैं लेकिन न तो नौकरी (मुलाज़मत) ही मिलती है। न कोई और राहे मईशत निकलती है यक़ीनन "मसाकीन" में दाख़िल हैं और इस मद के अव्वलीन मुस्तहिक़ हैं, लेकिन उसका इंतिज़ाम इस तरह होना चाहिए कि उनकी ख़बरगीरी भी हो जाए और साथ ही उनमें बेकारी की आदत और अपाहिज पना भी पैदा न हो। ये बात न सिर्फ़ उनकी इआनत में बल्कि तमाम मुस्तहिक़्क़ीन की इआनत में मलहूज़ रहनी चाहिए।

(हक़ीक़तुज़्ज़कात सफ़हा–23 व इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–4 सफ़हा–43)

हुक्मी मसाकीन कौन हैं?

ऐसे अफ़राद जो ख़ुश हाल थे, लेकिन कारोबार की ख़राबी की वजह से या किसी और नागहानी मुसीबत की

वजह से मुफ़्लिस हो गए हैं। अगरचे अपनी पिछली हैसियत की बिना पर माज़ूर समझे जाते हैं। हुक्मन मसाकीन में दाख़िल हैं और ज़रूरी है कि उस ज़कात की मद से उनकी ख़बरगीरी की जाए। (हक़ीक़तुज़्ज़कात सफ़्हा—23)

पेशावर फ़क़ीरों को ज़कात देना?

सवालः ऐसे पेशावर फ़क़ीर को जो मेहनत व मज़दूरी कर सकता है। ज़कात देना जाइज़ है या नहीं? और फ़क़ीरों में मुस्तहिक़ और ग़ैर मुस्तहिक़ के दरमियान कोई इम्तियाज़ भी नहीं होता?

जवाबः अगर वह गदागर (ग़रीब फ़क़ीर) सूरते हाल से मुहताज मालूम होते हैं तो उनको देने से ज़कात अदा हो जाएगी। अगरचे फ़िलहक़ीक़त वह मुस्तहिक़ न हों। देने वाले को बक़ाएदा "إِنَّمَا الْأَعْمَالُ بِالنِّيَّاتِ" का सवाब हासिल होगा और ज़कात भी अदा हो जाएगी।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द—6 सफ़्हा—229 बहवाला रद्दुलमुह्तार बाबुलमसरफ़ जिल्द—2 सफ़्हा—95)

मस्अलाः जिसको ज़कात दी जाए अगर वह सूरत फ़क़ीराना व मुफ़्लिसाना रखता है, या फ़क़ीरों के साथ मिल कर आया, या उसने सवाल किया और उस पर ज़कात देने वाले ने उसको ज़कात दे दी तो ज़कात अदा हो गई, अगरचे बाद में ज़ाहिर हुआ कि वह ग़नी (मालदार) था और मसरफ़े ज़कात न था। (जब भी ज़कात अदा हो जाएगी।) (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द—6 सफ़्हा—228 व फ़तावा महमूदिया जिल्द—11 सफ़्हा—120)

जो फ़क़ीर नाजाइज़ कामों में ख़र्च करें उनको देना?

सवालः जिन फ़क़ीरों की निस्बत ग़ालिबे गुमान हो

कि वह ख़ैरात या ज़कात लेकर नाजाइज़ कामों में सर्फ़ करते हैं उनको देना कैसा है?

जवाबः गुमाने ग़ालिब अगर ऐसा है तो बेशक उनको ज़कात व ख़ैरात देना नाजाइज़ और गुनाह है। क्योंकि ये इआनत अललमासियत (गुनाह पर मदद करना) है और इआनत अललमासियत हराम है। कुरआने करीम में अल्लाह तआला का फ़रमान है— "وَتَعَاوَنُوْا عَلَى الْبِرِّ وَالتَّقْوٰى وَلَا تَعَاوَنُوْا عَلَى الْاِثْمِ وَالْعُدْوَانِ" (سورہ مائدہ پارہ—۹)

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द—6 सफ़्हा—229)

मस्अलाः चोर और ज़ानिया को ब—वज्हे लाइल्मी के ज़कात व सदक़ात देने से सवाब हासिल होगा और ज़कात अदा हो जाएगी। हासिल ये कि बावजूद इल्म के देना न चाहिए और अगर लाइल्मी में दिया जाए तो उस पर मुआख़ज़ा नहीं। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द—6 सफ़्हा—228 बहवाला मिश्कात जिल्द—1 सफ़्हा—165)

मालदार फ़कीर को ज़कात देना?

सवालः हमारे यहां मसाकीन व फ़ुक़रा ऐसे नहीं जो सकदए फ़ित्र वग़ैरा लेने के क़ाबिल हों, क्योंकि वह साहबे निसाब हैं। उन पर ज़कात वाजिब है। मालदारों से बदरजए बेहतर हैं, ऐसे फ़ुक़रा को देना जाइज़ है या नहीं? या मदारिसे इस्लामिया में ख़र्च करना चाहिए?

जवाबः ऐसे नाम के फ़ुक़रा को जो मालदार साहबे निसाब हैं सदक़तुलफ़ित्र और ज़कात व दीगर सदक़ाते वाजिबा न देना चाहिए। बल्कि मदरसा में दे कर तलबए मसाकीन व ग़ुरबा पर सर्फ़ करना चाहिए।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द—6 सफ़्हा—286 बहवाला

रद्दुलमुहतार जिल्द–2 सफ़्हा–79 बाबुलमसरफ़)

मस्अला: ऐसे फ़क़ीरों को ज़कात देना जिनका पेशा मांगने का है और ये मालूम है कि ये लोग अक्सर मुतमौवल होते हैं। देना दुरुस्त नहीं।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–204)

जो फ़क़ीर कमाने पर क़ादिर हो, उसको ज़कात देना?

मस्अला: ज़कात के मुस्तहिक़ होने का मदार हाजत पर है कि किसी शख़्स के पास इस क़दर माल हो जिससे उसकी और उसके ज़ेरे किफ़ालत अफ़राद की ज़रूरत पूरी हो सके। इस उसूल के मद्दे नज़र ये सवाल पैदा होता है कि अगर कोई शख़्स हाजत मंद तो हो लेकिन काम न करता हो और मुआशरे पर बोझ बन कर महज़ ज़कात और सदक़ात पर गुज़र करना चाहता हो, हालांकि जिस्मानी लिहाज़ से वह मेहनत करने के क़ाबिल हो तो क्या ऐसे शख़्स को सदक़ात की रक़म दी जा सकती है?

जमहूर फ़ुक़हाए अहनाफ़ की राए ये है कि कस्ब यानी कमाने के क़ाबिल फ़क़ीर का ज़कात लेना और देना जाइज़ तो है लेकिन जब तक उसके पास ज़िन्दा रहने के लिए कुछ न कुछ मौजूद हो उसके लिए न लेना ही ज़्यादा बेहतर है। (फ़िक़्हुज़्ज़कात जिल्द–2 सफ़्हा–28 बहवाला मजमउलअनहार सफ़्हा–220)

मस्अला: जो शख़्स निसाब से कम का मालिक हो उसे ज़कात देना दुरुस्त है अगरचे वह सही और कमाने के क़ाबिल हो, क्योंकि वह फ़क़ीर है और फ़ुक़रा मसारिफ़े ज़कात में दाख़िल हैं। नीज़ ये कि हक़ीक़ी हाजत का पता लगाना दुश्वार है। इसलिए निसाबे ज़कात के मालिक

न होने को हाजत मंद होने के क़ाइम मक़ाम समझा जाएगा।
(फ़िक़्हुज़्ज़कात जिल्द–2 सफ़्हा–206)

यतीम ख़ाना में ज़कात देना कैसा है?

मस्अला: नाबालिग़ों को ज़कात देना दुरुस्त है। पस यतीम ख़ाना में यतामा के ख़र्च के लिए ज़कात का रुपया देना दुरुस्त है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–257 बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–79 बाबुलमसरफ़)

मस्अला: यतीम नाबालिग़ मुफ़्लिस के मसारिफ़ में सर्फ़ करने के लिए उसके वली यानी सरपरस्त को देना दुरुस्त है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–259 व फ़िक़्हुज़्ज़कात जिल्द–2 सफ़्हा–400 व फ़तावा महमूदिया जिल्द–3 सफ़्हा–90)

मस्अला: यतीम ख़ानों में अगर यतीमों को खाना कपड़ा वग़ैरा मालिकाना हैसियत से दिया जाता हो तो सिर्फ़ उस ख़र्च की हद तक ज़कात की रक़म सर्फ़ हो सकती है।
(मआरफ़ुलक़ुरआन जिल्द–4 सफ़्हा–409)

मस्अला: अगर वह (यतीम) लड़का समझदार है। रुपया पर क़ब्ज़ा कर सकता है तो ख़ुद उसको देना जाइज़ है। (ज़कात की रक़म) अगर ज़ाए होने का अंदेशा हो तो उससे बतौर अमानत ले कर (सरपरस्त) रख सकता है और अगर वह नासमझ है कि रुपया को कहीं फेंक देगा या किसी और तरह ज़ाए कर देगा। तो फिर उसको देना दुरुस्त नहीं बल्कि वह जिसकी परवरिश में है उसको लड़के के लिए दे दिया जाए। और अगर वह क़ाबिले एतेमाद न हो तो फिर कोई चचा (मोतमद वग़ैरा) उस रुपये पर लड़के के परवरिश करने वाले का क़ब्ज़ा करा

के बतौरे अमानत रख सकता है।

मस्अला: अगर वली (सरपरस्त) ने लड़के की तरफ़ से ज़कात का रुपया अपने क़ब्ज़ा में लिया तो इसमें कोई नुक़्सान नहीं, लेकिन जो रुपया वली ने ज़कात का अपनी तरफ़ से निकाला है वह जब तक बतौरे तमलीक लड़के की ज़रूरत में सर्फ़ न कर देगा ज़कात अदा न होगी।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–3 सफ़्हा–90)

ज़कात की रक़म से यतीम ख़ाना की तामीर करना?

मस्अला: ज़कात की रक़म से यतीम ख़ाना की तामीर नहीं हो सकती। और ऐसा सामान भी नहीं ख़रीदा जा सकता जो बतौर तमलीक के मुस्तहिक़्क़ीन को न दिया जाता हो, मस्लन यतीम ख़ाना के पलंग, फ़र्श, फ़रनीचर, बरतन वग़ैरा और ज़कात का रुपया यतीम ख़ाना के मुलाज़िमीन की तन्ख़्वाह के तौर पर ख़िदमाते मफ़व्वज़ा के ऐवज़ में भी नहीं दिया जा सकता है। हां यतीम के खाने, ख़ूराक व लिबास में ख़र्च किया जा सकता है या वफ़ाइज़ की शक्ल में नक़द दिया जा सकता है।

(किफ़ायतुलमुफ़्ती जिल्द–4 सफ़्हा–279)

रसूलुल्लाह के ख़ानदान वालों को ज़कात देना?

सवाल: किन किन लोगों को ज़कात देना जाइज़ है और किन को नाजाइज़ है?

जवाब: ज़कात आंहज़रत (स.अ.व.) के ख़ानदान के लिए हलाल नहीं है और आंहज़रत (स.अ.व.) के ख़ानदान से मुराद हैं आले अ़ली (रज़ि.), आले अक़ील (रज़ि.), आले जाफ़र (रज़ि.), आले अब्बास (रज़ि.) और आले हारिस बिन अब्दुलमुत्तलिब। पस जो शख़्स इन पाँच बुज़ुर्गों की

नस्ल से हो उसको ज़कात नहीं दी जा सकती। अगर वह ग़रीब और ज़रूरत मंद हो तो दूसरे फ़ंड से उनकी ख़िदमत करनी चाहिए।

(आपके मसाइल जिल्द–3 सफ्हा–390 वइल्मुलफ़िक्ह जिल्द–4 सफ़्हा–46)

सैयद और हाशमी को ज़कात देना जाइज़ है या नहीं?

सवालः सैयद या हाशमी अगर इंतिहाई ग़ुरबत के आलम में हो तो उसको ज़कात देने से ज़कात अदा हो जाएगी या नहीं?

जवाबः सैयद और हाशमी को ज़कात देने से ज़कात अदा न होगी। क्या अह्ले मुहल्ला में इतनी मुरव्वत भी नहीं कि ग़ैर ज़कात से उनकी हाजत पूरी कर दें। अगर किसी का वालिद इंतिहाई ग़ुरबत के आलम में हो तो क्या उसको भी मद्दे ज़कात ही से देगा? (अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–279 बहवला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–72 व किताबुलफ़िक्ह अललमज़ाहिबिलअरबआ जिल्द–1 सफ़्हा–1015 व फ़तावा महमूदिया जिल्द–3 सफ़्हा–54)

मस्अलाः हनफ़ीया (रह.) के नज़दीक सही क़ौल के मुताबिक़ और ज़ाहिरुर्रिवायत के मुताबिक़ सैयद को किसी हाल में ज़कात देना दुरुस्त नहीं है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–212)

मस्अलाः मुफ़्ता बिही बमज़हब यही है कि सादात को इस ज़माना में भी ज़कात और सदक़ाते वाजिबा मिस्ल चर्मे कुर्बानी व सदक़ए फ़ित्र वग़ैरा देना हराम है और ज़कात वग़ैरा अदा न होगी। ये क़ौल सही नहीं है जो कि किसी ने कहा है कि बाज़ हालात मे मुबाह है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–239 बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–90 बाबुलमसरफ़)

मस्अला: सैयद को ज़कात व उश्र का रुपया व ग़ल्ला देना दुरुस्त नहीं है। हां हीला कर के दिया जाए तो मुज़ाएका नहीं। हीला की सूरत ये है कि किसी ग़ैर सैयद ग़रीब को ये कह कर दे दिया जाए कि फ़लां सैयद को देना था मगर वह सैयद है। उसके लिए ज़कात जाइज़ नहीं लिहाज़ा तुम को देते हैं। अगर तुम ये तमाम या बाज़ उसको भी अपनी तरफ़ से दे दो तो बेहतर है और वह लेकर दे दे तो सैयद के लिए जाइज़ है।

(किफ़ायतुलमुफ़्ती जिल्द–4 सफ़्हा–272)

मस्अला: इस ज़माने में भी बनी हाशिम को ज़कात देने पर अहक़र फ़तवा मना पर ही देता है। अगर ज़रूरी हो तो तमलीक कर के बनी हाशिम को दे दी जाए।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–2 सफ़्हा–251)

जिसकी माँ सैयद हो, उसको ज़कात देना?

मस्अला: अगर किसी शख़्स की सिर्फ़ माँ सैयद हो, बाप सैयद न हो तो उसको ज़कात देना जाइज़ है। इसलिए कि नसब वालिद की तरफ़ से होता है। जिसका वालिद सैयद न हो वह सिर्फ़ वालिदा की तरफ़ से सैयद नहीं हो सकता। (अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–279 बहवाला रद्दुलमुह्तार बाबुलकिफ़ाअत जिल्द–2 सफ़्हा–346)

जो शजरए नसब न रखता हो, उसको ज़कात देना?

सवाल: ज़ैद अपने आबा–व–अजदाद से यही सुनता आया है कि हमारा सिलसिलए नसब हज़रत अब्बास (रज़ि.) से मिलता है, लेकिन ज़ैद के पास कोई मुकम्मल शजरए

नसब नहीं है, जिससे सही तौर पर मालूम हो सके कि हम वाक़ई सैयद हैं तो इस सूरत में ज़ैद को माले ज़कात लेना (जबकि मुस्तहिक़्क़े ज़कात भी है) दुरुस्त है या नहीं?

जवाबः सुबूते नसब के लिए आम शोहरत काफ़ी है। शजरा होना ज़रूरी नहीं, लिहाज़ा ज़ैद के लिए ज़कात लेना हराम है। (अहसनुलफ़तावा जिल्द-4 सफ़्हा-279 व किफ़ायतुलमुफ़्ती जिल्द-4 सफ़्हा-455)

जो सैयद मशहूर हो, उसको ज़कात देना?

सवालः जो शख़्स सैयद कहलाया जाता है मगर उसके नसब का कहीं पता नहीं बल्कि ये ख़्याल होता है कि चूंकि उसके यहां ताज़ियादारी वग़ैरा होती है। उसके सबब से सैयद कहलाता है और उनकी क़राबतें भी आम तौर पर जो लोग शैख़ कहलाते हैं उनमें होती हैं तो उनको ज़कात दे सकते हैं या नहीं?

जवाबः सिर्फ़ तसामोअ़ (सुनी सुनाई बात) काफ़ी है जबकि मुकज़्ज़िब बैयिन न हो (यानी उसके ख़िलाफ़ झुटलाने वाला ज़ाहिर न हो)

(इमदादुलफ़तावा जिल्द-2 सफ़्हा-28)

सादात को ज़कात न देने की अक़्ली वजह

मस्अलाः ज़कात लोगों के माल का मैल कुचैल है और हुज़ूर (स.अ.व.) की आल (औलाद) को उससे मुलव्वस करना मुनासिब न था। अगर वह ज़रूरत मंद हों तो पाक माल से उनकी मदद की जाए। नीज़ अगर आप (स.अ.व.) की आल को ज़कात देने का हुक्म होता तो एक नावाक़िफ़ को वसवसा हो सकता था कि ये ख़ूबसूरत निज़ाम अपनी औलाद ही के लिए (तआ़जल्लाह) जारी तो नहीं फ़रमा गए?

नीज़ उसका एक नफ़्सियाती पहलू भी है और वह ये कि अगर आपकी आल को ज़कात देना जाइज़ होता तो लोग आपके रिश्ता व क़राबत की बिना पर उन्ही को तरजीह देते, ग़ैर सैयद को देने पर उनका दिल मुतमइन न होता, इससे दूसरे फ़ुक़रा को शिकायत होती।

(आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–391 व फ़िक़्हुज़्ज़कात जिल्द–2 सफ़्हा–242)

मस्अला: सैयद को ज़कात न देने में एक राज़ ये है कि अगर आंहज़रत (स.अ.व.) खुद बनफ़्से नफ़ीस सदक़ा लेते और उसे रिश्तादारों और उन लोगों के लिए जिनका नफ़ा अपना ही नफ़ा है तजवीज फ़रमाते तो इस बात का एहतेमाल था कि लोग आप (स.अ.व.) से बदगुमान होते और आप (स.अ.व.) के हक़ में वह बातें कहते जो बिल्कुल लग़्व होतीं। इसलिए आंहज़रत (स.अ.व.) ने इस दरवाज़ा को बिल्कुल बंद कर दिया और इस बात को ज़ाहिर फ़रमाया कि ज़कात उन्ही के मालदारों से लेकर उन्ही के फ़ुक़रा को वापस कर दी जाए।

(असरारे शरीअत जिल्द–1 सफ़्हा–305)

सादात को ज़कात न देने की नक़्ली वुजूहात

मस्अला: ज़कात और फ़ित्रा सैयद को मजबूरी में भी लेने और देने की इजाज़त नहीं है, इसी पर फ़तवा है। हदीस शरीफ़ में इसको "औसाखुन्नास" कहा गया है यानी लोगों का मैल कुचैल। और हुज़ूर (स.अ.व.) ने फ़रमाया कि ये सदक़ात मुहम्मद (स.अ.व.) और आले मुहम्मद (स.अ.व.) के लिए हलाल नहीं हैं।

(मिश्कात शरीफ़ जिल्द–1 सफ़्हा–161)

इस हदीस शरीफ़ में सादात के लिए हुरमते ज़कात की इल्लत औसाख़ुन्नास ब्यान फ़रमाई है। बैतुलमाल से उनके लिए वज़ाइफ़ का मुक़र्रर होना ब्यान नहीं फ़रमाया गया और ये इल्लत आज भी क़ाइम है। इसलिए उनके लिए हुरमते ज़कात का हुक्म आज भी बाक़ी है और इसीमें एहतियात भी है और सादाते किराम का एहतेराम भी है।

एक हदीस में है कि एक मरतबा हज़रत हसन (रज़ि.) ने बचपन के ज़माने में सदक़ा की एक खजूर अपने मुंह में डाल ली तो आप (स.अ.व.) ने उनके मुंह से निकलवा दी और फ़रमाया कि हम सदक़ा नहीं खाते।

(मिश्कात जिल्द–1 सफ़्हा–161)

दुर्रेमुख़्तार और शमी में है कि नहीं जाइज़ है ज़कात बनी हाशिम को। फिर ज़ाहिर मज़हब ये है कि बनी हाशिम को ज़कात देना मुतलक़न ममनूअ़ है। ख़्वाह बनी हाशिम, बनी हाशिम को दे या कोई ग़ैर दे, और हर ज़माना में ममनूअ़ है। लिहाज़ा साहबे हैसियत और अह्ले ख़ैर हज़रात को लाज़िम है कि वह सादात की लिल्लाह रुक़ूम से इमदाद करें और उनको मुसीबत व तकलीफ़ से नजात दिलाऐं कि ये बड़ा अज्र व सवाब का काम है और हुज़ूर (स.अ.व.) के साथ सही मुहब्बत की दलील है। वरना मुआख़ज़ा का अंदेशा है। (फ़तावा रहीमिया जिल्द–5 सफ़्हा–168 व फ़तावा महमूदिया जिल्द–7 सफ़्हा–255)

सैयद की ज़कात सैयद को?

सवालः क्या सैयद मालदार अपने ग़रीब मिस्कीन सैयद रिश्तादारों को ज़कात दे सकता है या नहीं?

जवाब: हामिदन व मुसल्लियन। नाजाइज़ है यही सही और सवाब (दुरुस्त) है।

(फ़ताव महमूदिया जिल्द–3 सफ़्हा–33 बहवाला शामी जिल्द–1 सफ़्हा–66)

सैयद की बीवी को ज़कात देना?

सवाल: हमारे एक अज़ीज़ जो कि सैयद हैं जिस्मानी तौर पर बिल्कुल माज़ूर हैं। कमाने के क़ाबिल नहीं, उनकी बीवी जो कि ग़ैर सैयद हैं। घर का ख़र्च चलाती हैं। सवाल ये है कि उनकी बीवी ग़ैर सैयद हैं और घर की कफ़ील हैं तो बावजूद इसके कि शौहर और बच्चे जो कि सैयद हैं उनको ज़कात दी जा सकती है या क्या हुक्म है?

जवाब: बीवी अगर ग़ैर सैयद है और वह ज़कात की मुस्तहिक़ है तो उसको ज़कात दे सकते हैं। इस ज़कात की मालिक होने के बाद अगर चाहे तो अपने बच्चों और शौहर पर ख़र्च कर सकती है।

(आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–392)

मस्अला: शौहर के सैयद होने की वजह से औरत को जो कि खुद मुफ़्लिस है और मालिके निसाब नहीं है। ज़कात देना मना नहीं है, बल्कि ज़कात अदा हो जाती है, और रिश्तादार मुफ़्लिस को ज़कात देने में सवाब ज़्यादा है। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–223)

सैयदा औरत की औलाद को ज़कात देना?

मस्अला: सादात की लड़की की शादी सिद्दीक़ी से हो जाए तो बच्चे सैयद नहीं बल्कि सिद्दीक़ी हैं। इसलिए (बेवा के) उन बच्चों को ज़कात देना सही है और बेवा अपने उन बच्चों के लिए ज़कात वसूल कर सकती है

अपने लिए नहीं। (आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–392)

सैयद का कर्ज़ माले ज़कात से अदा हो सकता है या नहीं?

सवालः एक सैयद के ज़िम्मा एक मुसलमान का क़र्ज़ है क्या वह क़र्ज़ा मद्दे ज़कात से अदा कर सकता है?

जवाबः इस सूरत में ज़कात के रुपये से क़र्ज़ अदा नहीं किया जा सकता है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–242)

क्या सैयद को इज़्तिरारी हालत में ज़कात दे सकते है?

मस्अलाः अगर सैयद को इज़्तिरारी हालत में फ़ाक़ा पर फ़ाक़ा हो तो ऐसी मजबूरी की हालत में ज़कात जाइज़ है। अल्लाह तआला का फ़रमान–

"فَمَنِ اضْطُرَّ فِیْ مَخْمَصَۃٍ غَیْرَ مُتَجَانِفٍ لِّاِثْمٍ (پارہ ۲)

गो हदीस से फ़तवा यही है कि सैयद को ज़कात न दी जाए, अगर सैयद को और क़िस्म का रिज़्क़ (माल) आता हो तो उसे ज़कात लेने की हाजत ही क्या है? अगर इजतिरारी हालत हो तो और बात है।

(असरारे शरीअत जिल्द–1 सफ़्हा–307)

अगर ग़लती से सैयद को ज़कात दे दी गई तो क्या हुक्म है?

सवालः ज़ैद हाशमी है, उसको किसी ने ज़कात दे दी तो अब ज़ैद के लिए क्या हुक्म है?

जवाबः अगर देने वाले ने ग़ौरोफ़िक्र के बाद मसरफ़ समझ कर ज़कात दे दी थी तो उसकी ज़कात अदा हो गई। अगर ज़ैद को उस चीज़ के ज़कात होने का इल्म हो गया तो उस पर लाज़िम है कि जिसने ज़कात दी थी उसको वापस कर दे। (अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–280 बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–74)

शीआ और क़ादयानी को ज़कात देना कैसा है?

सवालः शीआ और क़ादयानी को ज़कात देना जाइज़ है या नहीं? और ज़कात अदा हो जाएगी या नहीं?

जवाबः शीआ और क़ादयानी काफ़िर हैं, बल्कि दूसरे कुफ़्फ़ार से भी बदतर हैं, और काफ़िर को ज़कात देना जाइज़ नहीं। शीअ़ और क़ादयानी को ज़कात देना सख़्त गुनाह है और ज़कात अदा न होगी। बल्कि उनको किसी क़िस्म का भी सदक़ा देना जाइज़ नहीं।

(अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–281 बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–633)

मुस्तहिक़ की तस्दीक़ करना कैसा है?

सवालः रिश्तादार व अहबाब व अक़ारिब जो बज़ाहिर मुस्तहिक़्के ज़कात नज़र आते हैं ये किस तरह तस्दीक़ की जाए कि ये साहबे निसाब हैं या नहीं?

जवाबः ज़ाहिर का एतेबार है। पस अगर ज़ाहिरे हाल के मुताबिक़ दिल मानता है कि ये शख़्स मुस्तहिक़ होगा, उसको ज़कात दे दी जाए।

(आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–293)

रिश्तादार मिस्कीन को ज़कात देना?

सवालः मेरा एक भाई बहुत नादार मुफ़्लिस और टीबी के मर्ज़ में मुब्तला है, उसका ख़र्चा आमदनी कुछ भी नहीं तो क्या मैं पूरी रक़त ज़कात की उसको दे सकता हूं?

जवाबः उसको देना ज़्यादा सवाब है, मगर यकमुश्त इतनी रक़म न दें कि वह फ़क़ीर साहबे निसाब हो जाए, कुछ रक़म दें। जब वह ख़र्च हो जाए तो मज़ीद दे दें। अलबत्ता अगर वह अ़यालदार भी है तो बयक वक़्त इतनी

रक़म दे सकते हैं कि कुल अफ़राद पर तक़्सीम की जाए तो किसी के पास भी निसाब पूरा न हो।

(अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–292 बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–75)

"ज़कात वग़ैरा हत्तलइम्कान ऐसे लोगों को दी जाए जो मांगते नहीं, आबरू के लिए घर बैठे हैं और मुस्तहिक़ भी हैं।"

(मुहम्मद रफ़अ़त क़ासमी ग़ुफ़िरलहू)

मामूली आमदनी वाले को ज़कात देना?

सवालः एक अज़ीज़ मामूली हैसियत का काम कर रहे हैं। क्या उनको ज़कात दी जा सकती है?

जवाबः अगर वह ज़कात के मुस्तहिक़ हैं (साहबे निसाब नहीं) तो ज़कात की मद्द से उनकी मदद ज़रूर करनी चाहिए। (आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–393)

भाई को ज़कात दे कर बाप पर ख़र्च करवाना?

मस्अलाः भाई को ज़कात देना (जबकि साहबे निसाब न हो) सही है। मगर उससे ये फ़रमाइश करना कि वह फ़लां शख़्स (बाप) पर ख़र्च करे ग़लत है। जब उसने भाई को ज़कात दे दी तो वह उसकी मिलकियत होगी, अब वह उसका जो चाहे करे। और अगर भाई को ज़कत देना मक़सूद नहीं, बल्कि वालिद को देना मक़सूद है और भाई महज़ वकील है तो भाई को देने से ज़कात अदा नहीं होगी। (आप के मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–394)

सौतेली वालिदा को ज़कात देना?

मस्अलाः सौतेली माँ को ज़कात देना जब कि वह मसरफ़े ज़कात हो यानी साहबे निसाब और सैयद न हो

दुरुस्त है। (फ़तावा महमूदिया जिल्द–7 सफ़्हा–268)

अपनी नाजाइज़ औलाद को ज़कात देना?

मस्अला: ज़ानी का अपने उस बेटे को ज़कात देना दुरुस्त नहीं है जो ज़िना से पैदा हुआ हो। और इस तरह उस बेटे को देना भी जाइज़ नहीं है जिसका वह इन्कार कर चुका है। (ख़्वाह वह लड़का उम्मे वल्द हो, या लिआ़न के ज़रीए उसका इन्कार अमल में आया हो) अलबत्ता उस लड़के को देना जाइज़ है जो ऐसी औरत का लड़का है, जिसके ख़ाविंद को लोग जानते पहचानते हैं।

(दुर्रेमुख़्तार जिल्द–2 सफ़्हा–107)

मस्अला: शादी के बाद छः माह से पहले बच्चा की विलादत यानी पैदाईश हो तो वह शरअ़न हरामी है, मगर जिसके नुतफ़ा से वह बच्चा है वह शख़्स उस बच्चा को ज़कात की रक़म नहीं दे सकता, अगर दी तो ज़कात अदा न होगी।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–2 सफ़्हा–14 बहवाला शामी जिल्द–2 सफ़्हा–94)

जिसको दूध पिलाया उसको ज़कात देना?

मस्अला: जिस बच्चे को (किसी ग़ैर के) तुम ने दूध पिलाया है उसको और जिसने तुम को बचपन में दूध पिलाया है उसको भी ज़कात देना दुरुस्त है।

(इमदाद मसाइलुज़्ज़कात सफ़्हा–74)

"रज़ाअ़त यानी बचपन के ज़माना में दूध पिलाने से रज़ाअ़त का हक़ीक़ी वालिदैन का रिश्ता शुमार न होगा। इसलिए ज़कात का देना और लेना जाइज़ है।"

(मुहम्मद रफ़अत कासमी गुफ़िरलहू)

ज़कात की रक़म से शफ़ाख़ाना क़ाइम करना?

सवाल: हम लोग एक दवाख़ाना खोलना चाहते हैं जिसका ख़र्च ज़कात और चर्म कुर्बानी के पैसों से चलाना है और उससे हर शख़्स फ़ाएदा उठा सकेगा। उसमें मरीज़ों से कुछ पैसे भी वसूल किए जाऐंगे और वह पैसे उसी दवाख़ाना में ख़र्च करेंगे। क्या हर शख़्स उससे फ़ायदा उठा सकता है या नहीं?

जवाब: दवाख़ाना में ज़कात और चर्म कुर्बानी का मसरफ़ सिर्फ़ ये है कि उस रक़म से दवाएँ ख़रीद कर मसाकीन को मुफ़्त दी जाऐं। इस मद से दवाख़ाना के डॉक्टरों और दूसरे कारकुनों की तन्ख़्वाह, किराया मकान, तामीर और फ़रनीचर वग़ैरा मसारिफ़ पर ख़र्च करना जाइज़ नहीं, इससे ज़कात अदा नहीं होगी। मसाकीन से दवा के पैसे लेना और ग़ैर मिस्कीन को दवा देना जाइज़ नहीं, बाज़ दवाख़ाना में मद्दे ज़कात से मरीज़ों को ख़ून दिया जाता है। उससे ज़कात अदा नहीं होती।

अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़हा–281 बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़हा–268 व फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़हा–217 व फ़तावा महमूदिया जिल्द–14 सफ़हा–144)

मस्अला: अगर हस्पतालों में हाजत मंद ग़रीबों को मालिकाना हैसियत से दवा दे दी जाए तो उसकी क़ीमत ज़कात की रक़म से महसूब हो सकती है।

(मआरिफ़ुलकुआन जिल्द–4 सफ़्हा–409)

मस्अला: अगर कोई नादार मुस्तहिक़्क़े ज़कात बीमार

हो जाए तो दवा और खाने के लिए फल वग़ैरा ख़रीद कर मुस्तहिक़ को देने से भी ज़कात अदा हो जाएगी। और डॉक्टर की फ़ीस मुस्तहिक़ के हाथ में दे दी जाए ताकि उसका क़ब्ज़ा हो जाए फिर उससे लेकर डॉक्टर को बनामे फ़ीस दे दे या मरीज़ के घर वालों को ज़कात की नीयत से दे दे।

(मुस्तफ़ाद अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–281)

अदाए ज़कात की एक सूरत

सवालः अगर ज़कात के पैसे घर रखे हों और घर के बाहर कोई ज़रूरत मंद मिल जाए तो क्या जेब के पैसों में से कुछ दे दें और घर आकर ज़कात के पैसों में से ले लें तो क्या ज़कात अदा हो जाएगी?

जवाबः ज़कात अदा हो जाएगी।

(आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–378)

सैलाब ज़दगान को ज़कात देना?

सवालः सैलाब ज़दगान का ज़कात की रक़म से खाना पका कर भेजना या नक़दी या और कुछ सामान भेजना जाइज़ है या नहीं?

जवाबः अगर ज़न्ने ग़ालिब हो कि ये लोग मुस्तहिक़्क़े ज़कात हैं। यानी उनके पास बक़द्रे निसाब मानेअ़ ज़कात निसाब नहीं तो उनको ज़कात देना जाइज़ है। बशर्तेकि कि उन अश्या या रुक़ूम का उनको मालिक बना दिया जाए। अगर उनकी मिल्क में नहीं दिया गया बल्कि वैसे उन पर ख़र्च किया गया तो ज़कात अदा न होगी। इसी तरह अगर खाना बिठा कर खिलाया गया तो ज़कात अदा नहीं हुई। मिस्कीन की मिल्क में देना ज़रूरीह है। यानी

उस खाने वग़ैरा का मालिक बना दिया जाए।

(अहसनुलफ़तवा जिल्द–4 सफ़्हा–294)

"हवादिस और फ़साद ज़दा एलाक़ा में बाज़ लोग मालिके निसाब भी होते हैं, मसलन किसी की दुकान या फ़ैक्ट्री वग़ैरा तबाह व बरबाद कर दी गई, या ज़लज़ला व सैलाब वग़ैरा में तबाह हो गई, लेकिन उनका बैंक बैलेंस है यानी रुपया बैंकों में जमा है या दूसरी जगह ज़मीन जाएदाद वग़ैरा उसकी मिलकियत है जो बक़द्रे निसाब या उससे ज़ाएद है तो ऐसे लोग शरअ़न ज़कात के मुस्तहिक़ नहीं हैं और ज़कात भी अदा न होगी। नीज़ ऐसे मवाक़ेअ़ में बसाऔक़ात अस्ल मुस्तहिक़ तक ज़कात की रक़म नहीं पहुंचती और ग़ैर मुस्तहिक़ को मिल जाती है। इसलिए ऐसे मवाक़ेअ़ में एहतियात बहुत ही ज़रूरी है।"

(मुहम्मद रफ़अ़त क़ासमी गुफ़िरलहू)

मद्दे ज़कात से क़ैदियों को खाना खिलाना कैसा है?

मस्अला: नफ़्ली सदक़ात से क़ैदियों को खाना खिलाना जाइज़ है। ज़कात में ये तफ़सील है कि अगर क़ैदी साहबे निसाब न हों और उनको खाने का मालिक बना दिया जाए तो ज़कात अदा हो जाएगी और अगर इबाहतन खिलाया मालिक नहीं बनाया तो ज़कात अदा नहीं हुई। इसलिए कि ज़कात में तमलीके फ़क़ीर शर्त है।

(अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–297 व आपके मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–402)

फ़ौजी को ज़कात देना कैसा है?

मस्अला: जंग में जो मुसलमान सिपाही या फ़ौजी मजरूह होते हैं। उनकी ज़रूरीयात का सामान माले ज़कात से ख़रीद कर भेजना या नक़्द रुपया उनकी ज़रूरीयात का भेजना, पस अगर मजरूहीन (ज़ख़्मियों) मुसलमीन के पास पहुंचना ज़कात का जो मालिके निसाब न हों यक़ीन है तो ज़कात अदा होगी वरना नहीं, क्योंकि ज़कात में तमलीके फ़क़ीर ज़रूरी है, यानी मालिक बनाना ऐसे शख़्स को जो मालिके निसाब न हो लाज़िम है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–233 बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–85 व अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–289)

पारसल किराया में ज़कात की रक़म ख़र्च करना?

मस्अला: पारसल के किराया में ज़कात की रक़म इस्तेमाल करने से ज़कात अदा नहीं होती। इसलिए कि ज़कात में तमलीके मुस्तहिक़ बिला एवज़ शर्त है वह यहां (डाकख़ाना में) पाई नहीं जाती है।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–5 सफ़्हा–150)

इन हज़रात को ज़कात देने से ज़कात अदा हो जाती है

(1) अपने हक़ीक़ी, अल्लाती, अख़्याफ़ी, रज़ाई भाई बहनों को ज़कात देना जाइज़ है। इसी तरह उनकी औलाद को भी देना जाइज़ है।

(2) अपने चचा, फूफी को ज़कात देना जाइज़ है। इसी तरह उनकी औलाद को भी देना जाइज़ है।

(3) अपने मामूं, ख़ाला को ज़कात देना जाइज़ है। इसी तरह उनकी औलाद को भी देना जाइज़ है।

(4) अपने सौतेले माँ बाप को ज़कात देना जाइज़ है। इसी तरह उनकी औलाद को भी देना जाइज़ है।

(5) अपने ख़ुसर और सास को ज़कात देना जाइज़ है। इसी तरह उनकी औलाद को भी देना जाइज़ है।

(6) मालदार के वालिदैन जो मुस्तहिक़्के ज़कात हों। उनको ज़कात देना जाइज़ है।

(7) मालदार की बालिग़ औलाद जो मुस्तहिक़्के ज़कात हों। उनको ज़कात देना जाइज़ है।

(8) मालदार की बीवी जो मुस्तहिक़्के ज़कात हों। उनको ज़कात देना जाइज़ है।

(9) मालदार बीवी का शौहर जो मुस्तहिक़्के ज़कात हो। उनको ज़कात देना जाइज़ है।

(10) अपने दामाद और बहू को ज़कात देना जाइज़ है।

(11) शागिर्द का उस्ताज़ को और उस्ताज़ का शागिर्द को ज़कात देना जाइज़ है। (महज़ उस्ताज़ और शागिर्द का तअ़ल्लुक़ मानेअ़ ज़कात नहीं है।)

(12) शौहर का अपनी बीवी की ऐसी औलाद को ज़कात देना जाइज़ है जो उसके पहले शौहर से हो।

(13) बीवी का अपने शौहर की ऐसी औलाद को ज़कात देना जाइज़ है जो उसकी पहली बीवी से हो।

(14) मुसाफ़िर को ज़कात देना जाइज़ है जब कि सफ़र में उसके पास माल न हो, अगरचे उसके पास घर पर निसाब के बक़द्र माल मौजूद हो।

(15) नाबालिग़ मुहताज को ज़कात देना जाइज़ है जबकि उसका बाप साहबे निसाब न हो अगरचे माँ साहबे निसाब हो।

(16) औरत अपने शौहर की औलाद को जोकि उसकी दूसरी बीवी से हो ज़कात दे सकती है।

(17) किसी शख़्स की सौ रुपये की आमदनी है और अपना घर भी है लेकिन ख़र्च तीन सौ का है वह मसरफ़े ज़कात है।

(18) जिस शख़्स की आमदनी काफ़ी है लेकिन वह मक़रूज़ हो, और क़र्ज़ अदा न कर सके तो वह भी मसरफ़े ज़कात है।

(19) ज़कात हर उस शख़्स को दी जा सकती है जिसके पास मिक़्दारे निसाब से कम माल हो, अगरचे वह शख़्स तंदुरुस्त और कमाई करने के क़ाबिल हो।

"मुन्दरजा बाला हज़रात अगर मुस्तहिक़्क़े ज़कात हों तो उनकी मदद ज़कात की मद से कर सकते हैं और उनको ये भी बतलाना ज़रूरी नहीं कि– "ये ज़कात है" बल्कि खुद नीयत कर लेना काफ़ी है।

(मुहम्मद रफ़अ़त क़ासमी ग़ुफ़िरलहू)

नोटः हक़ीक़ी भाई बहन उनको कहते हैं जिनके माँ बाप एक हों। अल्लाती भाई बहन उनको कहते हैं कि दोनों का बाप एक हो और माँ अलग अलग हो। अख़याफ़ी भाई बहन उनका कहते हैं कि दोनों की माँ एक हो और बाप अलग अलग। रज़ाई भाई बहन उनको कहते है। जिन्होंने एक औरत से दूध पिया हो।

मुन्दरजा बाला नम्बर एक से नम्बर उन्नीस तक मसाइल दर्ज ज़ैल किताबों से मुस्तफ़ाद हैं–

इमदादुलफ़तावा जिल्द–3 सफ़्हा–12, फ़तावा दारुलउलूम

जिल्द–6 सफ़्हा–237, 238, 196, 245, 246, 292, 290, 279, 289, व फ़तावा महमूदिया जिल्द–13 सफ़्हा–106, 95, व अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–169, व फ़तावा आलमगीरी जिल्द–4 सफ़्हा–39, 40, व किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–1014, तहतावी सफ़्हा–419, व हिदाया जिल्द–1 सफ़्हा–205 व इमदाद मसाइले ज़कात सफ़्हा–73 व आपके मसाइल और उनका हल जिल्द–3 सफ़्हा–394।

इन हज़रात को ज़कात देने से ज़कात अदा नहीं होती

(1) अपने माँ, बाप, दादा, दादी, पड़ दादा, पड़ दादी को ज़कात देना नाजाइज़ है।

(2) अपनी माँ, नाना, नानी, पड़ नाना, पड़ नानी, को ज़कात देना नाजाइज़ है।

(3) अपने हक़ीक़ी लड़के, पोते, पोतियां, पड़ पोते, पड़ पोतियों को ज़कात देना नाजाइज़ है।

(4) अपनी हक़ीक़ी लड़की, नवासे, नवासी, पड़ नवासे, पड़ नवासी को ज़कात देना नाजाइज़ है।

(5) शौहर का अपनी बीवी को ज़कात देना, इसी तरह बीवी को अपने शौहर को ज़कात देना नाजाइज़ है।

(6) ऐसी मुतल्लक़ा औरत जो इद्दत गुज़ार रही हो, उसके शौहर का उसको ज़कात देना नाजाइज़ है।

(7) मालदार साहबे निसाब की मुहताज नाबालिग़ औलाद को जकात देना नाजाइज़ है।

(8) जो औरत (बेवा) मालिके निसाब है उसको और उसके नाबालिग़ बच्चों को ज़कात देना नाजाइज़ है।

(9) मुदर्रिसे मदरसा को और इमामे मस्जिद को ज़कात का रुपया तन्ख़्वाह में देना नाजाइज़ है।

(10) हुजूर (स.अ.व.) के ख़ानदान को ज़कात देना नाजाइज़ है। अगर वह ग़रीब हैं तो उनकी मदद ज़कात के अलावा रुपये से करना चाहिए।

(11) मालदार मालिके निसाब को ज़कात देना नाजाइज़ है।

(12) ज़कात का रुपया मस्जिद की, मदरसा की, ख़ानक़ाह की, मुसाफ़िर ख़ाना की, यतीम ख़ाना की, स्कूल की, शाहराहे आम की तामीर में, कुवें और नहरों की खुदाई में लगाना नाजाइज़ है।

(13) ज़कात का रुपया मैयत के कफ़न में सर्फ़ करना, इसी तरह ज़कात के रूपया से क़ब्रस्तान के लिए ज़मीन ख़रीदना नाजाइज़ है।

(14) वह तमाम सूरतें जिनमें मालिक बनाना नहीं पाया जाता वह ज़कात के मसारिफ़ नहीं हैं।

मुन्दरजा बाला मसाइल एक से चौदह तक दर्ज ज़ैल किताबों से मुस्तफ़ाद हैं–

मआरिफुलकुराअन जिल्द–4 सफ़्हा–412, व फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–292, 282, 212, 213, 238, 39, व अहसनुफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–469, 369, व किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–1014, व फ़तावा महमूदिया जिल्द–3 सफ़्हा–87, व आपके मसाइल और उनका हल जिल्द–3 सफ़्हा–504, 390, व फ़तावा आलमगीरी जिल्द–4 सफ़्हा–39, व दुर्रेमुख़्तार जिल्द–1 सफ़्हा–141, व फ़िक़्हुज़्ज़कात जिल्द–3 सफ़्हा–203 व इमदाद मसाइलुज़्ज़कात सफ़्हा–76, 72।

क़र्ज़ के नाम से ज़कात देना कैसा है?

सवालः एक शख़्स जो ज़कात का मुस्तहिक़ है उसको

ज़कात देने वाला किसी मसलिहत से क़र्ज़ की रक़म कह कर ज़कात दे और नीयत भी ज़कात की है न कि रक़म वापस लेने की तो ज़कात अदा होगी या नहीं?

जवाबः सूरते मस्ऊला में जब नीयत ज़कात की है न कि रक़म वापस लेने की तो ज़कात अदा हो जाएगी। फ़तावा आलमगीरी में है कि कसी ने मिस्कीन को दिरहम दिए बतौरे क़र्ज़ और हिबा के और नीयत कर ली ज़कात की तो ज़कात अदा हो जाएगी। (फ़तावा रहीमिया जिल्द–3 सफ़्हा–112, बहवाला आलमगीरी जिल्द–1 सफ़्हा–171)

मस्अलाः ज़ैद ने बकर को सौ रुपये ज़कात की नीयत से दिए और ज़कात का नाम मायूब समझने की वजह से नहीं लिया और कहा कि तुम अपना काम कर लो, जब हों दे देना। दो साल के बाद बकर ने ज़ैद के रुपये वापस किए तो ज़ैद को वापस लेना जाइज़ नहीं क्योंकि ज़कात अदा हो गई थी। बकर को वापस देना लाज़िम है। अगर ज़कात का इज़हार मुनासिब न हो तो बकर पर यूं ज़ाहिर करे कि मैंने क़र्ज़ मआफ़ कर दिया है या हदया के नाम से दे दे। (अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–264 व फ़िक़्हुज़्ज़कात जिल्द–2 सफ़्हा–369)

मस्अलाः अगर किसी मिस्कीन (मुस्तहिक़्क़े ज़कात) को कुछ रक़म क़र्ज़ या बतौर हिबा के दी और नीयत उसमें ज़कात की कर ली तो ज़कात अदा हो जाएगी।

(फ़तावा आलमगीरी जिल्द–4 सफ़्हा–4)

ज़कात की रक़म किसी दूसरे उनवान से देना कैसा है?

सवालः मुस्तहिक़्क़े ज़कात को ज़कात देते वक़्त ये कहना कि ये ज़कात है क्या ज़रूरी है या नहीं?

जवाबः ज़कात के रुपये देते वक़्त ये कहना ज़रूरी नहीं है कि ये ज़कात है, सिर्फ़ नीयते ज़कात काफ़ी है। बल्कि मुस्तहिक़ को ये कहे कि ये अतीया है या क़र्ज़ देता हूं मगर दिल में ज़कात की नीयत हो तब भी ज़कात अदा हो जाएगी। (फ़तावा रहीमिया जिल्द–2 सफ़्हा–13 व इल्मुलफ़िक़्ह जिल्द–4 सफ़्हा–45)

मस्अलाः भाई ग़रीब हो, मालिके निसाब न हो यानी साढ़े सात तोला सोना या साढ़े बावन तोला चांदी या उसकी क़ीमत का मालिक न हो तो उसको ज़कात दी जा सकती है। (शामी जिल्द–2 सफ़्हा–86)

मस्अलाः ज़कात की रक़म बनीयते ज़कात, हिबा, तोहफ़ा, ईदी और इनआम के नाम से भाई भावज और बच्चों को देने से ज़कात अदा हो जाएगी। (फ़तावा आलमगीरी जिल्द–1 सफ़्हा–171 व तहतावी जिल्द– सफ़्हा–415 व फ़तावा रहीमिया जिल्द–5 सफ़्हा–153)

मस्अलाः ज़कात का मुस्तहिक़ वह शख़्स है जिसके पास हाजते अस्लीया ज़रूरीया से ज़ाएद इतना माल न हो जिसकी क़ीमत साढ़े बावन तोला चांदी की क़ीमत के बराबर हो जाए। ऐसा शख़्स ज़कात लेने पर मजबूर हो तो ले सकता है (लेने वाले पर) "ज़कात की रकम है" ये ज़ाहिर करना मुनासिब न होगा। ख़ेश व अक़ारिब को ख़िफ़्फ़त होगी और बुरा मानेंगे। ऐसे मौक़ा पर हदया व तोहफ़ा के नाम से भी दिया जा सकता है। अलबत्ता जिस शख़्स के मतअल्लिक़ तहक़ीक़ न हो कि वह ज़कात का हक़दार है तो उससे तन्हाई में तहक़ीक़ कर ली जाए।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–5 सफ़्हा–162)

मस्अलाः मुस्तहिक़ को ये बताना ज़रूरी नहीं कि ये ज़कात है, उसे किसी भी उनवान से ज़कात दे दी जाए और नीयत ज़कात की करली जाए तो ज़कात अदा हो जाएगी। नीज़ हदया, तोहफ़ा, इनआम वग़ैरा के उनवान से ज़कात अदा की जाए और अदा करते वक़्त ज़कात की नीयत कर ली जाए तो ज़कात अदा हो जाएगी। बशर्तेकि वह मुस्तहिक़ हो।

(किताबुलफ़िक़्ह जिल्द–1 सफ़्हा–1015)

मस्अलाः अपने रिश्तादारों और उनके बच्चों को या किसी ख़ुश ख़बरी सुनाने वाले मुस्तहिक़्के ज़कात को बसूरते इनआम व बख़्शिश कुछ दिया और उसमें ज़कात की नीयत कर ली तो दुरुस्त है। इसी तरह ईद, तेहवार व ख़ुशी के मवाक़ेअ़ पर अपने ख़ादिमों को ज़कात की नीयत से कुछ दे देने का भी ये ही हुक्म है, यानी अगर वह मुस्तहिक़ हैं तो देते वक़्त ज़कात की नीयत कर लेने पर ज़कात अदा हो जाएगी।

(फ़तावा आलमगीरी जिल्द–4 सफ़्हा–41)

मस्अलाः अगर किसी को इनआम के नाम से कुछ दिया मगर दिल में यही नीयत है कि मैं ज़कात देता हूं तब भी ज़कात अदा होगी। (बहिश्ती ज़ेवर जिल्द–3 सफ़्हा–28 बहवाला शरहुलत्तनवीर जिल्द–1 सफ़्हा–142 व दुर्रेमुख़्तार जिल्द–2 सफ़्हा–108)

मस्अलाः जिसको ज़कात दी जाए उस पर ज़कात का ज़ाहिर कर देना ज़रूरी नहीं है। अलबत्ता वह महल और मसरफ़े ज़कात होना चाहिए। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–90 बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–12)

मस्अला: अपने अज़ीज़ ग़रीब (मुस्तहिक़) को देने में ये भी ज़रूरी नहीं कि उनको जतला (बतला) कर दे कि सदक़ा या ज़कात दे रहा हूं। किसी तोहफ़ा या हदया के उनवान से भी ज़कात व सदक़ा दिया जा सकता है। ताकि लेने में शरीफ़ आदमी को अपनी ख़िफ़्फ़त महसूस न हो। (मआरिफुलकुरआन जिल्द–4 सफ़्हा–412 व आप के मसाइल जिल्द–3 सफ़्हा–398)

मस्अला: नीज़ मुस्तहिक़ रिश्तादारों को ज़कात देने में दो सवाब मिलते हैं। एक ज़कात अदा करने का और दूसरा सिला रहमी का सवाब। (मिश्कात शरीफ़ जिल्द–1 सफ़्हा–170 व फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–236 व दुर्रेमुख़्तार जिल्द–2 सफ़्हा–353)

ग़रीब का अमीर होने के बाद ज़कात में मिली हुई चीज़ इस्तेमाल करना?

सवाल: मेरे पास ज़कात और सूद के पैसे हैं। मेरा दामाद ग़रीब है और मक़रूज़ है, क्या ये पैसे उसको दे सकता हूं या नहीं?

क़र्ज़ की अदाएगी के बाद वह बचे हुए पैसों से घर की मरम्मत कराना चाहता है तो वह कर सकता है या नहीं?

अगर वह इसके बाद मालदार हो जाए तो उसके लिए ज़कात के पैसों से मरम्मत किए हुए मकान में रहना जाइज़ होगा या नहीं?

जवाब: दामाद ग़रीब हो तो ज़कात के पैसे दे सकते हैं और वह उन पैसों से घर की मरम्मत भी करा सकता है और वह मुस्तक़बिले (आइंदा) क़रीब या बईद में मालदार

हो जाए तो उसके बाद वह उस घर को इस्तेमाल कर सकता है। इसलिए कि फ़िलहाल तो वह ग़रीब है।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–5 सफ़्हा–161)

क्या फ़क़ीर को ज़कात में मिली हुई चीज़ ग़नी के लिए जाइज़ है?

सवालः अगर किसी फ़क़ीर को कोई किताब मद्दे ज़कात से मिली, तो ग़नी (मालदार) के लिए उसका इस्तेमाल करना जाइज़ है या नहीं? फ़तावा रशीदिया के मस्अला ज़ैल से उसका नाजाइज़ होना साबित होता है। तलबा का खाना जो किसी जगह मुक़र्रर होता है और वह वहां से लाते हैं। साहबे निसाब को वह खाना बहसबे रग़बते तलबा जाइज़ है या नहीं?

जवाबः तलबा का खाना जो मुक़र्रर होता है, अगर वह वाजिब मिस्ले कफ़्फ़ारा और उश्र और नज़्र और ज़कात नहीं है तो तलबा के साथ उनकी इजाज़त से ग़नी (मालदार) भी खा सकता है। और अगर उनमें से किसी एक में खाना मुक़र्रर हुआ है तो जब वह तालिबे इल्म किसी को मालिक बना दे उस वक़्त ग़नी उस खाने को खा सकता है। सिर्फ़ साथ खिलाने से खाना उसका दुरुस्त नहीं।

(फ़तावा रशीदिया जिल्द– सफ़्हा–485)

इसके ख़िलाफ़ देवबंद, सहारनपुर, मदरसा अमीनिया दिल्ली वग़ैरा ने सूरते मस्ऊला के ख़िलाफ़ जवाज़ का फ़तवा दिया है, अपनी तहक़ीक़ से नवाज़ें?

जवाबः फ़तावा रशीदिया का मस्अला सही है। फ़क़ीर ने माले ज़कात ग़नी को इबाहतन या आरियतन दिया तो उसके लिए हलाल नहीं। अलबत्ता तमलीक के बाद हलाल

हो जाएगा।

और हज़रत अबूहुरैरा (रज़ि.) की हदीस से साबित है कि हिल्लत ब-वज्हे तबदीलिये मिल्क बसबब हदाया हुई बसूरते इबाहत नहीं। इबारते मज़कूरा के अलावा हिदाया, इनाया, फ़तहुलक़दीर वग़ैरा कुतुबे फ़िक़्ह में ये मस्अला बहुत वज़ाहत के साथ मज़कूर है। मुजौविज़ीन हज़रात ने फ़तवा लिखते वक़्त इन कुतुब की तरफ़ रुजूअ़ नहीं फ़रमाया।

(अहसनुलफ़तावा जिल्द–4 सफ़्हा–260)

जिसको ज़कात दी गई, उसका हदया क़बूल करना कैसा है?

मस्अला: अगर क़रीब का रिश्तादार मसरफ़े ज़कात है और (साहबे निसाब) उसको ज़कात देता है फिर वह कोई शय (चीज़) हदयतन उस ज़कात देने वाले को देता है तो उसका लेना दुरुस्त है।

(फ़तावा महमूदिया जिल्द–7 सफ़्हा–249)

ज़कात की रक़म अगर चोरी हो जाए तो क्या हुक्म है?

सवाल: ज़कात की रक़म अदा करने के लिए एक बटवे में अलाहिदा रखी मगर अदाएगी से क़ब्ल ज़ाए हो गई तो ज़कात अदा हो गई या दूसरी ज़कात देनी होगी?

जवाब: सूरते मस्ऊला में ज़कात अदा नहीं हुई और न साक़ित, दोबारा ज़कात देनी होगी।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–2 सफ़्हा–14 व फ़िक़्हुज़्ज़कात जिल्द–2 सफ़्हा–374)

मस्अला: ज़कात की नीयत किया हुआ रुपया खो जाए या चोरी हो जाए तो ज़कात अदा नहीं हुई, फिर अदा करनी होगी। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–100 बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–15)

मस्अला: ज़कात का रुपया निकाल कर किसी क़दर उसमें से तक़्सीम कर दिया और कुछ रुपया रख दिया कि वक़्तन फ़वक़्तन देता रहूंगा। वह चोरी हो गया या रख कर भूल गया, तो जिस क़दर बाक़ी है उस क़दर ज़कात फिर अदा करे। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–96 व फ़तावा महमूदिया जिल्द–11 सफ़्हा–148)

"यानी जिस क़दर रुपया चोरी हो गया या खो गया हो, उस क़दर रुपया फिर देना चाहिए।" (मुहम्मद रफ़अ़त क़ासमी)

ज़कात की रक़म मनी आर्डर व ड्राफ्ट से भेजना कैसा है?

मस्अला: ज़कात की रक़म बज़रीआ मनी आर्डर और ड्राफ़्ट भेजी जा सकती है, क्योंकि मजबूरी है। इसलिए कि इस तरह की तबदीली से ज़कात की अदाएगी पर असर नहीं पड़ेगा। मनी आर्डर वग़ैरा की फ़ीस में ज़कात व फ़ित्रा की रक़म इस्तेमाल नहीं की जा सकती।

(फ़तावा रहीमिया जिल्द–5 सफ़्हा–164)

मस्अला: मगर फ़ीस मनी आर्डर अपने पास से अलग से देनी चाहिए। (फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–335)

मस्अला: ज़कात की रक़म बज़रीआ मनी आर्डर भेजने में कुछ हरज नहीं है। मोहतमिम साहब को लिख दें कि ये ज़कात का रुपया है। ज़कात अदा हो जाएगी।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–101 व फ़तावा महमूदिया जिल्द–7 सफ़्हा–259)

"लेकिन किसी और ज़रूरत मंद मुस्तहिक़्क़े ज़कात को भेजना हो तो न लिखें, क्योंकि लफ़्ज़ "ज़कात" से मुस्तहिक़ को शरमिंदगी

होगी। सिर्फ़ नीयत कर लेना काफ़ी है, लेकिन मदारिस और मकातिब और दीगर इदारों को इत्तिला देना इसलिए ज़रूरी है ताकि वह ज़कात को सही मसरफ़ में लगाऐं।"

(मुहम्मद रफ़अत क़ासमी गुफ़िरलहू)

रजिस्ट्री या मनीआर्डर से ज़कात की रक़म न पहुंचे तो क्या हुक्म है?

मस्अला: रजिस्ट्री के ज़रीआ से अगर ज़कात न पहुंचे तो इस सूरत में भेजने वाले के ज़िम्मा से ज़कात व फ़ित्रा अदा नहीं हुआ, क्योंकि डाक ख़ाना मुरसिल का वकील है। मुरसल इलैहि का नहीं है।

(किफ़ायतुलमुफ़्ती जिल्द–4 सफ़्हा–279)

मस्अला: रजिस्ट्री वग़ैरा के न मिलने की सूरत में ज़कात की रक़म फिर देनी चाहिए, ज़रूरी है।

(फ़तावा दारुलउलूम जिल्द–6 सफ़्हा–89 बहवाला रद्दुलमुह्तार जिल्द–2 सफ़्हा–15)

ज़कात में दी हुई अपनी चीज़ ख़रीदना?

मस्अला: किताबों की ज़कात में अगर किताबें ही मसाकीन को दी जाऐं और उन मसाकीन से ताजिराना भाव (रेट) से बतराज़िये तरफ़ैन वह कुतुब मुज़क्की (जिसने ज़कात में दी थीं) ख़रीद ले तो सेहते बैअ (फ़रोख़्तगी) में तो कोई शुब्हा नहीं। बाक़ी अगर क़राइन से ये मालूम हो कि उसने हमारे लिहाज़ से उतनी क़ीमत को क़बूल कर लिया है तो इस सूरत में कराहत होगी।

(इमदादुलफ़तावा जिलद–2 सफ़्हा–57)

मस्अला: जो चीज़ किसी को ज़कात में दो और वह

उसको फ़रोख़्त करता हो तो बेहतर है कि तुम उसको उससे मत ख़रीदो, शायद वह तुम्हारी रिआयत करे।

(तालीमुद्दीन सफ़्हा-45 व फ़तावा महमूदिया जिल्द-7 सफ़्हा-251 बहवाला अबूदाऊद शरीफ़ जिल्द-1 सफ़्हा-225)

ग़ैर मुस्तहिक़ को ज़कात दे दी गई तो क्या हुक्म है?

मस्अला: अगर किसी शख़्स ने किसी शख़्स को अपने गुमान के मुताबिक़ मुस्तहिक़ और मसरफ़े ज़कात समझ कर ज़कात दे दी, बाद में मालूम हुआ कि वह उसी का गुलाम (शरई) या काफ़िर था तो ज़कात अदा नहीं होगी, दोबारा देनी चाहिए। क्योंकि गुलाम की मिलकियत तो आक़ा ही की मिलकियत होती है। वह उसकी मिल्क से निकला ही नहीं। इसलिए ज़कात अदा नहीं हुई और काफ़िर ज़कात का मसरफ़ नहीं है। इसके अलावा अगर बाद में ये साबित हो कि जिसको ज़कात दी गई है वह मालदार या सैयद या हाशमी या अपना बाप या बेटा या बीवी या शौहर है तो ज़कात के इआदा (दोबारा लौटाने) की ज़रूरत नहीं, क्योंकि ज़कात की रक़म उसकी मिल्क से निकल कर महल्ले सवाब में पहुंच चुकी है। और तअयीने मसरफ़ में जो ग़लती किसी अंधेरे या मुग़ालता की वजह से हो गई वह मआफ़ है।

(दुर्रेमुख़्तार जिल्द-2 सफ़्हा-92 व मआरिफ़ुलकुरआन जिल्द-4 सफ़्हा-413 व फ़तावा दारुलउलूम जिल्द-6 सफ़्हा-127 व फ़िक़्हुज़्ज़कात जिल्द-2 सफ़्हा-261)

मस्अला: ज़कात अदा करते वक़्त अगर ग़ालिब गुमान था कि ये शख़्स ज़कात का मुस्तहिक़ है तो ज़कात अदा हो जाएगी। (आपके मसाइल जिल्द-3 सफ़्हा-398)

मस्अला: अगर किसी को शुब्हा हो जाए कि जिस शख़्स को ज़कात देगा, मालूम नहीं वह मालदार है या मुहताज है तो जब तक तहक़ीक़ न हो जाए उसको ज़कात न दे। अगर बेतहक़ीक़ के दे दिया तो देखो गुमान ज़्यादा कहां जाता है। अगर दिल ये गवाही देता है कि ये फ़क़ीर (मुस्तहिक़) है तो ज़कात अदा हो गई और अगर दिल ये कहे कि वह मालदार है तो ज़कात अदा नहीं हुई फिर से दे। लेकिन अगर देने के बाद मालूम हो जाए कि वह ग़रीब ही है तो ज़कात अदा हो गई। फिर से देने की ज़रूरत नहीं। (शामी, इमदाद मसाइले ज़कात सफ़्हा–74)

---x---

किताब का आग़ाज़ करते वक़्त दिल ख़ुशी से लबरेज़ था लेकिन इस वक़्त ग़मगीन और आँख अश्क रेज़ हैं क्योंकि मुअर्रख़ा 6 दिसम्बर 1992 ई0 को बाबरी मस्जिद पर ग़ैर मुस्लिम दुश्मनों ने वहशियाना हमला कर के मस्जिद को मिस्मार कर दिया। न सिर्फ़ ये बल्कि सेकूलरिज़्म व आईन व अदालत व क़ानून के परख़चे उड़ा दिए। मस्जिद की शहादत पर मुसलमानों के जज़बात व एहसासात का मजरूह होना कुदरती बात थी। चुनाचें मुल्क के गोशा गोशा में पुरअम्न मुज़ाहरे जमहूरी आईन के तहत करने पर शरपसंद अनासिर और इस्लाम दुश्मन ताक़तों ने मुल्कगीर फ़सादात बरपा कर दिए और देवबंद में भी पांच मक़ामी मुसलमानों को शहीद कर दिया और दारुलउलूम देवबंद के एक तालिबे इल्म मुहम्मद यूनुस आसामी को

भी शहीद कर दिया गया। इन्नालिल्लाहि व–इन्ना इलैहि राजिऊन। और आठ रोज़ तक करफ़्यू में कोई ढील भी नहीं दी गई। हत्ता कि मस्जिदों में नमाज़ पढ़ने की भी इजाज़त नहीं दी गई और नमाज़े जुमा के बजाए नमाज़े जुहर घर में अदा की गई। नमाज़ के बाद निहायत ही रंज व अफ़सोस के आलम में किताब पूरी कर रहा हूं।

"اِنَّمَآ اَشْکُوْا بَثِّیْ وَحُزْنِیْٓ اِلَی اللّٰهِ"

(मुहम्मर रफ़अत क़ासमी गुफ़िरलहू मुदर्रिस दारुलउलूम देवबंद, 15 जमादिस्सानी 1413 हिजरी मुताबिक़ 10 दिसम्बर 1992 ई० बरोज़ जुमा)

माख़ज़ व मराजेअ किताब

नाम किताब	मुसन्निफ़ व मुअल्लिफ़	मतबअ
मआरिफुलकुरआन	मुफ़्ती मुहम्मद शफ़ी साहब (रह.) मुफ़्तिए आज़म पाकिस्तान	रब्बानी बुक डिपो, देवबंद
मुआरिफुलहदीस	मौलाना मुहम्मद मंज़ूर नोमानी साहब (रह.)	अलफ़ुरक़ान बुक डिपो, लखनऊ
फ़तावा दारुलउलूम	मुफ़्ती अ़ज़ीज़ुर्रहमान साहब (रह.) साबिक़ मुफ़्तिये आज़म देवबंद	मकतबा दारुलउलूम, देवबंद
फ़तावा रहीमिया	मौलाना सैयद अब्दुर्रहीम साहब (रह.)	मक्तबा मुंशी स्टेट रांदेर, सूरत
फ़तावा महमूदिया	मुफ़्ती महमूद साहब मुफ़्तिये आज़म दारुलउलूम, देवबंद	मक्तबा महमूदिया जामा मस्जिद, मेरठ
फ़तावा आलमगीरी	उलमाए वक़्त अहदे औरंगज़ेब (रह.)	शम्स पब्लीशर, देवबंद
किफ़ायतुलमुफ़्ती	मौलाना मुफ़्ती किफ़ायतुल्लाह देहलवी (रह.)	कुतुब ख़ाना एज़ाज़िया, देवबंद
इल्मुलफ़िक़्ह	मौलाना अब्दुश्शकूर साहब (रह.) लखनऊ	,, ,, ,,
अ़ज़ीज़ुलफ़तावा	मौलाना मुफ़्ती अ़ज़ीज़ुर्रहमान साहब (रह.)	,, ,, ,,
इमदादुलमुफ़्तीयीन	मुफ़्ती मुहम्मद शफ़ीअ़ साहब (रह.) मुफ़्तिये आज़म, पाकिस्तान	,, ,, ,,
इमदादुलफ़तावा	मौलाना अशरफ़ अली साहब थानवी (रह.)	इदारा तालीफ़ाते औलिया, देवबंद

फ़तावा रशीदिया कामिल	मौलाना रशीद अहमद साहब गंगोही (रह.)	कुतुब ख़ाना रहीमिया, देवबंद
किताबुलफ़िक़्ह अललमज़ाहिबिलअरबआ	अल्लामा अब्दुर्रहमान अलजज़री (रह.)	औक़ाफ़ पंजाब लाहौर, पाकिस्तान
जवाहिरुलफ़िक़्ह	मुफ़्ती मुहम्मद शफ़ीअ़ साहब (रह.) मुफ़्तिए आज़म, पाकिस्तान	आरिफ़ कम्पनी, देवबंद
दुर्रेमुख़्तार	अल्लामा इब्न आबिदीन (रह.)	पाकिस्तान
बहिश्ती ज़ेवर	मौलाना अशरफ़ अली साहब थानवी (रह.)	मक्तबा थानवी, देवबंद
मआ़रिफ़े मदनीया	इफ़ादात मौलाना हुसैन अहमद साहब मदनी (रह.)	मदरसा इम्दादुल इस्लाम सदर बाज़ार, मेरठ
अत्तरग़ीब वत्तरहीब	मौलाना ज़कीउद्दीन अब्दुलअ़ज़ीम मुंज़िरी	नदवतुलमुसन्निफ़ीन, देहली
अहसनुलफ़तावा	फ़क़ीहुलअ़स्र मुफ़्ती रशीद अहमद साहब	सईद कम्पनी कराची, पाकिस्तान
फ़िक़्हुज़्ज़कात	अल्लामा डाक्टर यूसुफ़ अलक़रज़ावी	अलबदर पब्लीशर लाहौर, पाकिस्तान
जदीद फ़िक़्ही मसाइल	मौलाना ख़ालिद सैफ़ुल्लाह साहब मद्दज़िल्लहू	तहक़ीक़ाते इस्लामी, हैदराबाद
मज़ाहिरे हक़ जदीद	नवाब क़ुतुबुद्दीन ख़ाँ (रह.)	इदारए इस्लामियात, देवबंद
आपके मसाइल और उनका हल	मौलाना मुहम्मद यूसुफ़ लुधयानवी	कुतुब ख़ाना नईमिया, देवबंद
हक़ीक़तुज़्ज़कात	मौलाना अबुलकलाम	एतेक़ाद पब्लीशिंग हाउस, देहली
इमदाद मसाइलुज़्ज़कात	जनाब इक़बाल क़ुरैशी साहब	इदारए इस्लामियात, पाकिस्तान
ईज़ाहुलमसाइल	जनाब मुफ़्ती शब्बीर अहमद साहब (रह.)	जामिया क़ासमीया शाही मुरादाबाद

जदीद मसाइल के शरई अहकाम	जनाब मौलाना मुहम्मद रफ़ीअ़ उस्मानी	मक्तबा तफ़्सीरुलकुरआन, देवबंद
फ़ंड पर ज़कात व सूद का मस्अला	जनाब मौलाना मुहम्मद रफ़ीअ़ उस्मानी	मक्तबा तफ़्सीरुलकुरआन, देवबंद
अरकाने अरबआ	मौलाना अली मियां साहब नदवी (रह.)	मजलिस तहक़ीक़ाते इस्लामिया, लखनऊ
मस्अलए ज़कात	क़ारी अब्दुस्समीअ़ (रह.)	सरगोधा, पाकिस्तान
नोट की हक़ीक़त और उसके शरई अहकाम	मुफ़्ती सईद मज़ाहिर उलूम, सहारनपुर	कुतुब ख़ाना सईदिया, सहारनपुर
ज़कातुलहुली (ज़ेवरों की ज़कात)	अल्लामा सैयद सुलैमान नदवी (रह.)	अनवारुलमताबेअ़, लखनऊ
असरारे शरीअ़त	मौलाना मुहम्मद फ़ज़ल ख़ाँ (रह.)	पंजाब, पाकिस्तान
इस्लाहे इंक़िलाबे उम्मत	हकीमुलउम्मत मौलाना थानवी (रह.)	ताज कम्पनी, देहली
नशरुत्तब	हकीमुलउम्मत मौलाना थानवी (रह.)	ख़ुरशीद बुक डिपो, देवबंद
कीमियाए सआदत	हुज्जतुलइस्लाम इमाम ग़ज़ाली (रह.)	अदबी दुनिया, देहली
गुनयतुत्तालिबीन	शैख़ अब्दुलक़ादिर जीलानी (रह.)	मुस्लिम एकेडमी, सहारनपुर
हिदाया	इमाम अबुलहसन (रह.)	कुतुब ख़ाना रशीदिया, देहली
सिहाए सित्ता		कुतुब ख़ाना रशीदिया, देहली

तारीख़ी नाविलों के मशहूर लेखक मौलाना सादिक़ हुसैन सरधनवी के मशहूर

तारीख़ी नाविल

अब हिन्दी भाषा में

अरब का चाँद

एक ऐसा नाविल जिसमें तीन लाख ईसाई सैनिकों को केवल बीस हज़ार मुसलमान मुजाहिदों ने पराजित कर के इस्लाम का नाम रोशन कर दिया इस जंग में मुस्लिम महिला की अहम भूमिका रही जिन्होंने बहादुरी व हिम्मत को ज़िन्दा कर दिया।

दोशीज़ा-ए-हिन्द

ऐसा तारीख़ी नाविल जिसमें एक हिन्दू लड़की के दिल में अल्लाह का नूर पैदा हो गया जिसने अपने बाप दादा के रस्म व रिवाज को त्याग कर हक़ का साथ दिया। ईमानी भावना का एक जीता जागता किरदार जो आपको झिंझोड़ कर रख देगा।

सुलतान मुहम्मद गौरी

इतिहास सदैव अपने आपको दोहराता है। सोई हुई क़ौमें जागती हैं और सत्ता एवं विलासता में पड़ी हुई क़ौमें तबाह व बर्बाद हो जाती है। एक ऐसे सुलतान के मुजाहिदाना कारनामे जिसने अपने साहस, सकंल्प और ईमानी जोश से असत्य को मिटाकर सत्य का बोल बाला कर दिया।

सलाहुद्दीन अय्यूबी

इस्लामी इतिहास में सुलतान सलाहुद्दीन का नाम किसी परिचय का मोहताज नहीं। ये सुलतान ही था जिसने ५८३ हिजरी में ईसाइयों से क़िब्ल-ए-अव्वल बैतुल मक़्दिस को आज़ाद कराया। सुलतान सलाहुद्दीन अय्यूबी जिनके नाम से बड़े बड़े ईसाई शासकों के दिल दहल जाते थे। इस पुस्तक में उनके साहसिक कारनामे प्रस्तुत किए गए हैं।

संगदिल मलिका

औरत को अल्लाह ने ममता व दया की मूरत पैदा किया है लेकिन इस नाविल में एक ऐसी संगदिल मलिका की दास्तान पेश की गई है जिसने अपनी निर्दयता, दुश्मनी और इन्तिक़ाम की आग में जलने व बदला लेने के रिकार्ड तोड़ डाले थे। वही संगदिल मलिका एक दिन इस्लामी तालीमात और मुसलमान मुजाहिदों के बेहतरीन व्यवहार से प्रभावित हो कर इस्लाम की आग़ोश में पनाह लेती है।

जोशे जिहाद

इस्लाम और मुसलमानों को मिटाने के लिए इतिहास में ईसाई व यहूदियों ने बड़ी

कोशिशें कीं। झूट, दग़ा, फ़रेब, साज़िश, धोखा सारे हथियार जमा किए परन्तु जब एक मुसलमान के दिल में जिहाद का जोश पैदा होता है तो ईमान की ताक़त के सामने ये सारे असत्य हथियार नाकाम हो जाते हैं।

फ़तह मिस्र

हज़रत अम्र बिन अल आस के मुजाहिदाना कारनामों पर आधारित एक ऐसा नाविल जिसमें हक़ व बातिल की कशमकश में मिस्र के बादशाह अरसतलीस की हुकूमत का ख़ात्मा बड़े ही चमत्कारी तौर पर होता है। इस्लामी सरफ़रोशों की बहादुरी की अनोखी दास्तान............।

सुलतान फ़ीरोज़ शाह तुग़लक़

इस्लाम को मिटाने के लिए इस्लाम के दुश्मनों ने नए नए तरीक़े अपनाए। झूठे नबी हुए और झूठे मेहदी होने के दावे किए सुलतान फ़ीरोज़ शाह तुग़लक़ के कार्य काल में ऐसे ही एक इस्लाम दुश्मन ने इमाम मेहदी होने का दावा कर के इस्लाम में फूट डालने का प्रयास किया। सुलतान ने किस प्रकार इस फ़ितने को दबाया......? यह इस नाविल में पढ़िए...........।

अरबी दोशीज़ा

इस्लाम से पहले अरब में औरत की कोई हैसियत न थी। इस्लाम ने औरत को न केवल इज़्ज़त दी बल्कि उसने उसे बहादुरी व स्वाभिमान भी दिया। जब समय आया तो अरब महिला ही ने इस्लाम को बचाने के लिए अपना किरदार निभाया। ऐसी ही एक अरब दोशीज़ा के कमालात व ईमानी भावना की जीती जागती कहानी इस नाविल में है............।

ईरान की हसीना

ईरानी हुकूमत और अरब के शेरों के टकराव की एक लम्बी दास्तान हज़रत उमर रज़ि. के भेजे हुए लश्कर के मुजाहिदों के जंगी कारनामे जिन्होंने न केवल ईरानी हुकूमत को हराया बल्कि ईरानी हसीना के दिल को भी इस्लाम की रोशनी से मुनव्वर कर दिया............।

□□□